मगध विश्वविद्यालय की पी.एच. डी की उपाधि के लिए स्वीकृत

गुलाब खंडेलवाल :
व्यक्तित्व और कृतित्व

शोध-प्रबंध

1984

लेखक

डा. रवीन्द्रराय

प्राध्यापक हिंदीविभाग

सहजानंद ब्रह्मर्षि कालेज, आरा (बिहार)

डा. दीनानाथ सिंह—निर्देशक

रीडर, स्नाकत्तोतर हिंदी विभाग

हर प्रसाद दास जैन कालेज, आरा (बिहार)

प्रकाशक :
कमल प्रकाशन
105, मकन्दूगंज, चौक, प्रतापगढ़–230001 (उ. प्र.)
दूरभाष : (05342) 220650, 220651

© **गुलाब खंडेलवाल**

मूल्य : 375 रुपये
विदेश में : $ 21

प्राप्ति-स्थान :
(1) गुलाब खंण्डेलवाल
56, जय अपार्टमेंट
102, आई. पी. एक्सटेंशन
पटपड़गंज, नई दिल्ली–110092
दूरभाष : (011) 22726934

(2) नारायण दत्त मिश्र
मौलिक साहित्य प्रकाशन
162-डी, कमला नगर दिल्ली--110007
दूरभाष 23844450, 35380149

लेज़र टाइप सेटिंग :
शाह कम्प्यूटर ग्राफिक्स
फोन : 22935535

समर्पणः—

परम पूज्य
भ्राता श्री वशिष्ठ मुनी राय जी
एवं
श्री शेष मुनी राय जी
की स्वर्गीय आत्मा की शांति के लिए

रवीन्द्र

प्रस्तुत शोध-प्रबंध 1984 में लिखा गया था अतः गुलाबजी के जीवन एवं साहित्य का केवल उस समय तक का विवरण ही इसमे मिलेगा। इसके बाद गुलाब जी के 1994 तक के जीवन एवं साहित्य की जानकारी के लिए हमारे द्वारा प्रकाशित श्री मती पूर्ति मिश्रा के 'गुलाब-खंड़ेलवाल के काव्य का आलोचनात्मक अध्ययन' रूहेलखंड विश्वविद्यालय , बरेली से सन् 1994 नामक स्वीकृत शोध-प्रबंध का अध्ययन करना चाहिए।

गुलाब जी निरंतर स्रजनशील और काल-सापेक्ष रहे हैं और निरंतर नयी-नयी शैली में अछूते और नवीन विषयों का उद्‌घाटन अपनी कृतियों में करते रहे हैं इसलिए हमें आशा है, इन दोनों शोध-प्रबंधों के द्वारा उनके बहुआयामी साहित्य के विभिन्न पक्षों का भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से भिन्न-भिन्न विद्वानों द्वारा किया गया विवेचन पाठकों को विशेष रूचिकर लगेगा तथा गुलाब-साहित्य के पठन-पाठन में उनको विशेष आनंद आयेगा

-- प्रकाशक

विषय-सूची

पृष्ठ-सख्या

आभार-स्वीकृति --- --- क-ख

प्रस्तावना --- --- क-ख

प्रथम खण्ड

प्रथम अध्याय : व्यक्तित्व-विश्लेषण : व्यक्तित्व और कृतित्व का सम्बन्ध-- *21*

द्वितीय अध्याय : जीवन-वृत्त **39**

जीवनीः- जीवन की आधार सामग्री, जीवन-वृत्त, जन्मस्थान, जन्मतिथि, वंश-परिचय, वंश-वृक्ष, शिक्षा-दीक्षा, दाम्पत्य-जीवन, वात्सल्य-सुख, कौटुम्बिक व्यवस्था,।

तृतीय अध्याय : जीवन-दर्शन --- --- **49**

द्वितीय खंड

प्रथम अध्याय : काव्य-कृतियों का क्रम-विकास --- **59**

पृष्ठ-संख्या

द्वितीय अध्याय : कृतियों का वर्गीकरण एवं संक्षिप्त परिचय **62**

विधा की दृष्टि से कृतियों का वर्गीकरण :-

व्यक्तित्वः- बहिरंग-पक्ष, अन्तरंग-पक्ष, आभ्यन्तरिक व्यक्तित्व के प्रेरक तत्त्व, वैयक्तिक पृष्ठभूमि, सामाजिक

पृष्ठभूमि, सम्मान और अभिनन्दन, पुरस्कृत काव्य। प्रबंध-काव्य, महाकाव्य, खण्ड-काव्य, एकार्थ-काव्य, निर्बंध-काव्य, बन्धाबन्ध-काव्य, काव्यतालिका, गुलाब के काव्यों का वर्गीकरण, गुलाब के प्रबंधों का कथानक की दृष्टि से वर्गीकरण, कथानक के स्रोत, प्रबंध-काव्यों के कथानक की श्रेणियाँ, पौराणिक और ऐतिहासिक कथानक की तुलना, काल्पनिक कथानक पर आधारित प्रबंध, गुलाब के प्रबंध-काव्यों का वर्गीकरण : कथानक की दृष्टि से, गुलाब की कृतियों का संक्षिप्त परिचय : गुलाब के प्रबंधों का संक्षिप्त परिचय, गुलाब के मुक्तकों का संक्षिप्त परिचय, गुलाब के नाटकों का संक्षिप्त परिचय।

तृतीय अध्याय : प्रबंध-रचनाओं के भाव-पक्ष का विश्लेषण 145

प्रबंध-काव्यों में रस निरूपण, परम्परानुमोदित रस-निरूपण, परम्परामुक्त रस-निरूपण, मानवेतर आलम्बन और उद्दीपन, आलम्बन रूप में प्रकृति, उद्दीपन रूप में प्रकृति, मार्मिक प्रंसगों की पहचान, प्रबंधकाव्यों की पात्र-योजना, प्रस्तुतीकरण की प्रस्तावना, प्रधान पुरुष-पात्र, प्रधान नारी-पात्र, गौण पुरुष-पात्र, गौण नारी-पात्र, विषय-वस्तु की अभीष्टता।

पृष्ठ-सख्या

चतुर्थ अध्याय : प्रबंध-रचनाओं के कला-पक्ष का विश्लेषण 227

प्रबंध-काव्यों का काव्य-रूप-निर्णय, भाषा, विविध शब्द-प्रयोग, प्रगीत, मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ, वर्ण, रंग, गंध की संवेदना, नाद-व्यंजना, मिथकीय प्रतीक-विधान, अलंकार-योजना, पाश्चात्य अलंकार, छंद-योजना।

पंचम अध्याय : गुलाब की अन्य रचनाओं के भाव-पक्ष एवं कला-पक्ष। 274

मुक्तक-रचनाओं के भाव-पक्ष का विश्लेषण :-
रस-निरूपण, परम्परानुमोदित रस, परम्परामुक्त रस, मानवेतर आलम्बन और उद्दीपन, आलम्बन-रूप में प्रकृति, उद्दीपन रूप में प्रकृति,
मुक्तक-रचनाओ का कला-पक्ष :-
भाषा, विविध शब्द-प्रयोग, भाषा-संगीत, मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ, वर्ण, रंग, गंध की संवेदना, नाद-व्यंजना, बिम्ब-विधान, अलंकार-योजना, भारतीय अलंकार, पाश्चात्य अलंकार, छंद-योजना।

षष्ठ अध्याय : गुलाब के प्रबंधकाव्यों के स्वरूप तथा स्थापत्य का वैशिष्ट्य : 332

स्वरूप-विवेचन, स्थापत्य का वैशिष्ट्य।

पृष्ठ-संख्या

सप्तम अध्याय : गुलाब की ग़ज़लों का मूल्यांकन, प्रयोग और उपलब्धियाँ 341

ग़ज़ल की परम्परा और विकास, गुलाब की ग़ज़लें, गुलाब की ग़ज़लों के संग्रह।

अष्टम अध्याय : उपसंहार एवं शोध-निष्कर्ष 354

व्यक्तित्व और काव्य-दर्शन, काव्य-निष्कर्ष।

परिशिष्ट : 366

गुलाब जी का साक्षात्कार, विभिन्न साहित्यकारों के पत्र, विभिन्न काव्यों की, साहित्यकारों द्वारा प्रशस्तियाँ, आधार-ग्रंथों की सूची, सहायक ग्रंथों की सूची।

----: : 0: :----

आभार-स्वीकृति

प्रस्तुत शोध-प्रबंध पूज्य गुरुदेव डा. दीनानाथ सिंह (रीडर, स्नातकोत्तर, हिंदी-विभाग, हर प्रसाद दास जैन कॉलेज, आरा) की अकृपण उदारता तथा उनके निर्देशन की समर्थ दृष्टि का ही परिणाम है। प्रंबध की शुक्लता उनकी है और श्यामता मेरी। शोध-कार्य के सिलसिले में आभार-प्रदर्शन के लिए और चार व्यक्ति सामने आते हैं-- कविवर गुलाब खण्डेलवाल, स्व0 प्रो0 रामचन्द्र प्रसाद (प्रोफेसर एवं भूतपूर्व अध्यक्ष, राजनीति विभाग, मगध विश्वविद्यालय), डॉ0 वासुदेवनन्दन प्रसाद (प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी-विभाग, मगध विश्व-विद्यालय), डॉ0 पुर्णमासी राय (प्रोफेसर, स्नातकोत्तर, हिंदी-विभाग, मगध विश्वविद्यालय)।

कवि गुलाब जी शोध की नौका में पतवार बनकर ही आये। मेरे शोधकार्य की कठिनाइयों को उन्होंने सहज बनाने का प्रयत्न किया। उनसे आशातीत सहायता मिली। उन्होंने अपनी रचनाओं के विविध संस्करणों, नयी रचनाओं तथा पत्र-पत्रिकाओं को देकर जो सहायता दी है, उसके लिए क्या कहा जाय ! वह केवल अनुभवगभ्य है। कृतज्ञता-ज्ञापन से तो अपना ओछापन ही प्रकट होगा। गुलाब जी की जीवनी तैयार करने में कवि एवं कवि-परिवार का बहुत आभारी हूँ, क्योंकि उनकी सहायता के अभाव में यह सम्भव नहीं हो पाता।

स्व0 प्रो0 रामचन्द्र प्रसाद ने मुझे छात्र-जीवन से ही प्रोत्साहित किया है। उनकी दिवंगत आत्मा के प्रति कैसे आभार प्रकट करूँ, यही समझ में नहीं आता। अब तो मात्र उनकी स्मृतियाँ ही शेष हैं। प्रो0 वासुदेवनन्दन प्रसाद और प्रो0 पूर्णमासी राय दोनों गुरुदेव ही हैं, जिनकी शिष्यों पर कृपा-दृष्टि का बने रहना और सहायक होना सहज स्वभाव में है।

प्रो0 विन्देश्वरी प्रसाद सिंह, प्रो0 गोरखनाथराय तथा प्रो0 बलराज ठाकुर (स0 ब्र0 कॉलेज, आरा) ने कभी मित्र-भाव से और कभी गुरु-भाव से (क्योकि तीनों मुझसे सभी तरह से श्रेष्ठ होने के अधिकारी हैं) ने मुझे उपकृत किया है। उनके प्रति मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ।

प्रो0 उमाशंकर राय, प्रो0 सत्येन्द्र कुमार और प्रो0 अंजनीकुमार राय ने

मेरी थकी प्रज्ञा को प्रोत्साहित किया है। तीनों मित्रों को मैं हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

मैं सौभाग्यशाली हूँ कि मुझे अपने विभाग के सभी सहकर्मियों से सहयोग मिलता रहा है। उनके प्रति मैं कृतज्ञ हूँ।

मैं उन सभी रचनाकारों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिनकी रचनाओं का मैने अपने प्रबंध में निस्संकोच सदुपयोग किया है। प्रबंध-लेखन की अवधि में हर प्रसाद दास जैन कॉलेज (आरा) एवं सहजानन्द ब्रह्मर्षि कॉलेज (आरा) के पुस्तकालयों से प्राप्त सहायता के लिए मैं इन संस्थाओं के अधिकारियों को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

अंत में त्यागमयी जीवनसंगिनी प्रतिभा को इस प्रबंध के समापन के समय विशेष रूप से स्मरण करता हूँ, जिसने स्वेच्छा से पारिवारिक दायित्वों को अपने ऊपर लेकर प्रबंध-लेखन के लिए यथेष्ट समय दिया है। अपनी अभिन्न को धन्यवाद क्या दूँ !

रवीन्द्र नाथ राय

हिन्दी-विभाग
सहजानन्द ब्रह्मर्षि कॉलेज, आरा
(मगध विश्वविद्यालय)

अध्ययन की आधारभूत सामग्री का विवेचन

(क) विषय-प्रवेशः-

छायावादोत्तर कवियों में कवि गुलाब खंडेलवाल का नाम अब काव्य-प्रेमियों के लिए अपरिचित नहीं रह गया है। इन्होंने आज से चार दशक पूर्व से ही अपनी काव्य-साधना प्रारम्भ की थी। इनकी रचनात्मक सेवाओं से हिन्दी-काव्य समृद्ध हुआ है। सन् 1924 ई0 में वीरभूमि राजस्थान में जयपुर के पास नवलगढ़ ग्राम में जन्म लेनेवाले कवि गुलाब कालान्तर में अपने पिता के साथ गया आकर रहने लगे। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा यहीं से प्रारम्भ हुई। 1943 ई0 में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से स्नातक हुए। छात्र-जीवन से ही इनमें काव्य-संस्कार का बोध स्पष्ट होने लगा। सिर्फ 16 वर्ष की उम्र में इनका प्रथम काव्य-सग्रंह **कविता** (1941) प्रकाशित हुआ। महाकवि निराला ने इसकी भूमिका में लिखा है -- " कवि गुलाब की रचनाएँ पहले भी सुन चुका हूँ, उन्हींकी जुबानी। उनकी तारीफ भी कर चुका हूँ। आज छपे आकार में देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता है। बहुत सी रचनाएँ, जो कविता की कोटि में आसानी से गुलाब की तरह अपने दल खोल चुकी हैं, खुशबू से उन्भद, स्निग्ध कर देती हैं।'[1] राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, महादेवी वर्मा, सुमित्रानन्दन पंत, केदारनाथ मिश्र 'प्रभात', बच्चन, रायकृष्णदास जैसे ख्यातिलब्ध कवियों और पंडित नन्ददुलारे वाजपेयी, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी तथा पंडित विश्वनाथ प्रसाद मिश्र जैसे आलोचकों ने कवि गुलाब की काव्य-रचनाओं की भरपूर प्रशंसा की है। **उषा** महाकाव्य की प्रशंसा करते हुए आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने लिखा है -- मुझे यह पुस्तक बहुत अच्छी लगी।'[2] महाकवि पंत ने इसकी

---

1. कविता, आमुख, प्रथम संस्करण सं0 1941, प्रकाशक - कला कुंज काशी।
2. यह सम्मति नन्ददुलारे वाजपेयी ने पत्र के माध्यम से कविवर गुलाब के यहाँ भेजी थी। यह पत्र परिशिष्ट में द्रष्टव्य है।

भूमिका लिखते हुए स्वीकार किया -- 'इस काव्य में छायावाद के सर्वोत्तम उपकरणों का प्रचुर मात्रा में उपयोग हुआ है और उनमें कवि की मौलिक

काव्य-दृष्टि के कारण नये आयाम उदित हुए हैं।'[1] आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने **उषा** महाकाव्य के सम्बन्ध में अभिभूत होकर लिखा है -- 'श्री गुलाब ने रूढ़ियों का बन्धन खोल दिया है, नूतन उत्फुल्ल विकास के लिए, पर परम्परा के काँटों को अपनी रक्षा के लिए बनाये रखा है। मार्मिक मधुव्रत उषा में मधुपान करें अवधानतापूर्वक, यही अभिलाषा है, यही आशीर्वचन है।'[2] इसी तरह **आलोक-वृत्त** खण्डकाव्य (1976 ई0) की पंक्तियों का उल्लेख करके महादेवी वर्मा ने आशीर्वचन दिया है -- 'कवि गुलाबजी छायावाद युग के कृती हैं, अतः उनकी रचना में तथ्य, भाव-समुद्र की तरंग के समान आते हैं। कहीं-कहीं **कामायनी** की पंक्तियों का स्मरण हो आना भी स्वाभाविक है।'[3] इसी तरह **कच-देवयानी** की प्रशंसा राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, **रूप की धूप** की प्रंशसा आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, डॉ0 रामकुमार वर्मा, पं0 सीताराम चतुर्वेदी, **सौ गुलाब खिले** की प्रशंसा केदारनाथ मिश्र 'प्रभात' त्रिलोचनशास्त्री, बच्चन आदि साहित्यकारों ने की है।[4]

वस्तुतः छायावाद के कवियों की दो श्रेणियाँ बनायी जा सकती हैं -- (क) छायावाद के पुरस्कर्ता कविगण (प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी वर्मा) और (ख) छायावाद के अन्य दूसरे महत्त्वपूर्ण कवि (भगवतीचरण वर्मा तथा रामकुमार वर्मा आदि)। निश्चय ही गुलाब जी इसी दूसरी कोटि के एक शीर्ष कवि हैं। छायावाद की प्रमुख विशेषताएँ आज भी गुलाब जी की रचनाओं में न्यूनाधिक रूप से अपनी जीवन्तता का परिचय दे रही हैं। जिस तरह छायावाद के कवि 'पंत' की रचनाओं में कालानुसरण की क्षमता निहित रही है, उसी तरह महाकवि गुलाब ने छायावादी काव्य-परम्परा के विशिष्ट कवि होकर भी अपनी रचनाओं में युग की प्रासंगिकताओं को सचेत कलाकार की तरह बनाये रखा है। सच तो यह है, जीवन-बोध को युग-बोध के साथ अपनी काव्य-रचनाओं में

---

1. उषा-प्राक्कथन, पृ0 ख, प्रकाशक अर्चना, 19 ए0, वी0 के0 पाल एवेन्यू - कलकत्ता 6
2. वही, आशीर्वचन, पृ0 च।
3. आलोक-वृत्त, आशीर्वचन पृ0 क, प्रकाशक अर्चना कलकत्ता 6, प्रथम संस्करण, 1975।
4. संक्षिप्त परिचय, (महाकवि गुलाब खंडेलवाल की प्रकाशित कालजयी कृतियों का)

अभिव्यंजित करने की क्षमता गुलाब में है। रचनाओं में भावों और विचारों, प्रयोगों और उपलब्धियों का इतना वैविध्य दुर्लभ है। इन्हें सम्पूर्णता का कवि

कहना असंगत न होगा।

(ख) प्रस्तुत शोध-प्रबंध के रचनात्मक आधार :-

कवि गुलाब की कुल रचनायें 22 (बाइस) हैं। जिनमें **कविता** (1941 ई0) और **चाँदनी** (1944 ई0) दोनों गीतात्मक काव्य-सग्रंह है। **बलि-निर्वास** (1944) इनका गीति-नाट्य है, जो हिन्दी का प्रथम दुःखान्त गीति-नाट्य है। **कच-देवयानी** (1946) एक प्रेममूलक खण्डकाव्य है। **गाँधी-भारती** (1948) राष्ट्रपिता के बलिदान से उत्प्रेरित हिन्दी का प्रथम सॉनेट-संग्रह है। **अहल्या** (1955) इनका प्रसिद्ध पौराणिक खण्डकाव्य है, **उषा** (1965) गुलाब जी का महाकाव्य है जो **कामायनी** (प्रसाद), **लोकायतन** (पंत) और **उर्वशी** (दिनकर) जैसे महाकाव्यों के बीच उल्लेखनीय रचना है। **मेरे भारत, मेरे स्वदेश** (1963) समसामयिक राष्ट्रीय भावानाओं से प्रेरित होकर चीनी आक्रमण के समय लिखी गयी रचना है। दिनकर के **परशुराम की प्रतीक्षा** काव्य की तरह। रूप की धूप (1971) में उर्दू की रुबाईनुमा शैली में लिखे गये प्रेमपरक तथा आत्मपरक मुक्तकों का संग्रह है। **आलोक-वृत्त** (1975) राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी को नायक बनाकर लिखा गया युग-प्रेरक खण्डकाव्य है। गाँधी का जीवन-संघर्ष, उनका व्यक्तित्व तथा उनके आदर्श के साथ कवि गुलाब ने इसमें स्वतन्त्रता-संग्राम की झाँकी प्रस्तुत की है।

गुलाब जी हिन्दी-ग़ज़लो के सम्राट् हैं। सर्व प्रथम हिन्दी-ग़ज़लों के नये प्रयोग, नई दिशा, तलाशने और तराशनेवालों में इनका नाम लिया जाता है। **सौ गुलाब खिले** (1973 **पँखुरियाँ गुलाब की** (1978) **कुछ और गुलाब** (1979) इनकी ग़ज़लों के अनूठे संग्रह हैं। **नूपुर बँधे चरण** (1978) **सीपी रचित रेत** (1978) **आयु बनी प्रस्तावना** (1981) **शब्दों से परे** (1981) इनके अत्यन्त विशिष्ट काव्य-संग्रह है।

कवि गुलाब का गद्य-साहित्य बहुत अधिक नहीं है किन्तु, **राजराजेश्वर अशोक** (1978) और **भूल** (1980) इनके दो गद्य-नाटक हैं।

कवि गुलाब आज भी पूरी तत्परता और गम्भीरता के साथ काव्य-सृजन में लगे हुए हैं। **व्यक्ति बनकर आ** (1983) और **बूंदें : जो मोती बन गयीं** (1983) इनके सद्यः प्रकाशित काव्य-संग्रह हैं। कवि-जीवन के प्रारम्भ में **कविता** और **चाँदनी** के गीत गानेवाले गुलाब यौवन, प्रेम, सौन्दर्य और प्रकृति के सम्मोहन से अलग हटकर युगीन सम्वेदनाओं से सम्पृक्त हो गये। इन

काव्य-संग्रहों में गुलाब जी की वैचारिकता और दार्शनिकता की पहचान मिलती है। काव्य-भाषा में भी नया दिशान्तर परिलक्षित होता है। निकट भविष्य में इनकी ताज़ा ग़ज़लों का संग्रह **हर सुबह एक ताज़ा गुलाब** प्रकाश्य है।

दुःख है और चिन्तनीय भी कि ऐसे महाकवि के व्यक्तित्व का और उनकी साहित्यक देन का अभी तक सम्यक मूल्यांकन नहीं हो पाया है। प्रस्तुत शोधप्रबंध की अनिवार्यता इसी आलोक में प्रासंगिक है।

(ग)आलोचनात्मक आधारभूत सामग्री :-

प्रस्तुत शोध-प्रबंध की नवीनता यह है कि इसमें कवि गुलाब के व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों को एक दूसरे का पूरक मानकर स्वतन्त्र रूप से शोध-कार्य करने का प्रथम प्रयास हुआ है। सच तो यह है कि इस विशिष्ट कवि को हिन्दी के समसामयिक प्रमुख कवियों और आलोचकों ने महत्त्व दिया है, इनकी कृतियों की भूमिकाएँ लिखी हैं, यत्र-तत्र कवि-सम्मेलनों और गोष्ठियों में प्रशंसाएँ की हैं, पत्राचारों में अपनी अनुकूल अनुशंसाएँ भेजी हैं, किन्तु आलोचनात्मक साहित्य लगभग नगण्य ही है। जहाँ तक प्रस्तुत शोधकर्त्ता की जानकारी है, कवि गुलाब के व्यक्तित्व और कृतित्व पर जो आलोचनात्मक सामग्री प्राप्त है,उन्हे वैज्ञानिक अध्ययन की सुविधा के लिए निम्नलिखित कोटियों मे रखा जा सकता :-

(1) लघु-प्रबंध

(क) **गुलाब खंडेलवाल : व्यक्तित्व और कृतित्व** [1] -- यह एक छोटा सा अत्यन्त ही सामान्य कोटि का लघु-प्रबंध है। इसमें बहुत ही कम सामग्री को प्रस्तुत किया गया है। न तो व्यक्तित्व-निर्माण की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर विचार किया गया है और न गुलाब जी की समस्त रचनाओं का शोध-मूलक अनुशीलन ही किया गया है। इसमें कवि गुलाब की अंतिम लगभग ग्यारह रचनाओं का नामोल्लेख भी नहीं है। आधे-अधूरे ढंग से छात्रोपयोगी सामग्री का संकलन किया गया है। पर यह प्रयास प्रथम होने के कारण सराहनीय है।

---

1. प्रस्तुतकर्त्री- मुकुल खंडेलवाल : मगध विश्वविद्यालय, एम0ए0 की परीक्षा के लिए स्वीकृत लघु-प्रबंध (सन् 1980)

(ख) **हिन्दी-शोकगीति : परंपरा और प्रतिफलन**[1] :- इसमें गुलाब जी के सिर्फ तीन-चार शोक-गीतों की चर्चा मात्र है।

(2) शोध--प्रबंध

(क) छायावादोत्तर प्रबंध-काव्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन'[2] :- इस शोधप्रबंध में गुलाब जी के मात्र **उषा** महाकाव्य का ही सम्पूर्ण विवेचन है। अन्य रचनाओं का उल्लेख नहीं है।

(3) आलोचनात्मक ग्रंथ

(क) **नयी कविता : नये कवि**[3] :- इस आलोचनात्मक ग्रंथ में हिन्दी के आधुनिक और अत्याधुनिक कवियों का आलोचनात्मक परिचय प्रस्तुत किया गया है। इसी क्रम में कवि गुलाब के कृतित्व पर 13 पृष्ठों में आलोचनात्मक सामग्री प्रस्तुत की गयी है। इसमें गुलाब की बहुत-सी कृतियाँ अछूती रह गयी हैं। आलोचक के लिए, जहाँ अनेकानेक कवियों की आलोचना प्रस्तुत करनी है, वहाँ किसी एक पर विस्तार और गहराई से विचार करने का न तो अवसर है और न आवश्यकता ही।

(ख) **उषा मूल्यांकन तथा विश्लेषण**[4] :-शीर्षक से ज्ञात है कि समीक्षक ने गुलाब जी के महाकाव्य **उषा** पर विचार किया है।

(4) पत्र-पत्रिका

(क)'नवकल्प'[5] :- यह कविवर गुलाब के अभिनन्दन के लिए गया से

---

1. डॉ0 नर्बदेश्वर राय, मगध विश्वविद्यालय एम0 ए0 परीक्षा के लिए स्वीकृत लघु-प्रबंधः प्रकाशक-अभिनव भारती 1977, 42 सम्मेलन मार्ग, इलाहाबाद 211003
2. डॉ0 दीनानाथ सिंह का पटना विश्वविद्यालय से स्वीकृत (किंतु अप्रकाशित) शोधप्रबंध, 1972
3. विश्वम्भर 'मानव', लोक भारती प्रकाशन, 15-ए महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद-1
4. डॉ0 शम्भुशरण, संस्करण प्रथम 1967
5. महाकवि गुलाब अभिनन्दन अंक, लोक-साहित्य-संगम, गया, विशेषांक 21 अक्टूबर, 1976

प्रकाशित एक अभिनन्दन विशेषांक है। इसमें गुलाब जी का परिचय तथा उनकी कुछेक कृतियों का विविध लेखकों द्वारा विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

(घ) प्रस्तुत शोध-प्रबंध तथा इसकी प्रतिपादन-प्रणाली :-

उपरिलिखित रचनात्मक और आलोचनात्मक आधारभूत सामग्रियों को लेकर यह शोध-प्रबंध लिखा गया है। पूर्वोल्लिखित अभाव की पूर्ति का ही एक छोटा-सा प्रयत्न इस शोध-प्रबंध के द्वारा किया गया है। प्रस्तुत अनुशीलन की कतिपय विशेषताएँ हैं --

(1) इसमें सर्वप्रथम कविवर गुलाब खंडेलवाल का प्रामाणिक जीवनवृत्त प्रस्तुत हुआ है। शोधकर्त्ता स्वयं गुलाबजी से, उनके परिवारवालों से, तथा उनके कई इष्ट-मित्रों से मिलकर गुलाब जी के व्यक्तित्व के गूढ़ और अछूते रहस्यों से परिचित हुआ है। यह शोधकर्ता का सौभाग्य है कि कवि गुलाब से उनके प्रामाणिक जीवन-वृत्त का परिचय प्राप्त किया है।

(ख) व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों को एक दूसरे का पूरक मानकर प्रस्तुत शोधकर्ता ने यह शोध-प्रबंध तैयार किया है। ऐसा इसलिए है कि 'कवि का जीवन-वृत्त उसके व्यक्तित्व-निर्माण का बाह्य उपादान है और जीवन-दर्शन अभ्यन्तर उपादान। काव्य में कवि का संपूर्ण व्यक्तित्व अभिष्युत होता है।'[1] सर आर्थर क्वीलर कूच ने तो यहाँ तक कहा है कि --

"The work of so and so is good because it is the perfect expression of his personality." [2]

अतः शोध-प्रबंध में अत्यन्त ही प्रामाणिक और विश्वसनीय ढंग से शोध-सामग्रियों का अनुशीलन हुआ है।

(ग) गुलाब जी की रचनाओं को काल-क्रम (प्रकाशन-तिथि) के अनुसार प्रस्तुत कर उनकी समीक्षा की गयी हैं।

(घ) गुलाब के प्रबंधों, खण्डकाव्यों, ग़ज़लों और नाटकों की सर्वांगीण

---

1. मैथिलीशरण गुप्त : व्यक्ति और काव्य, डॉ0 कमलाकान्त पाठक, प्रथम संस्करण, 1960, प्रकाशक - रंजीत प्रिंटर्स ऐण्ड पब्लिसर्स, चाँदनी चौक, दिल्ली-6, पृ0 1
2. समीक्षा-शास्त्र : डॉ0 दशरथ ओझा, द्वितीय संस्करण, 1957, प्रकाशक -- राजपाल ऐण्ड सन्स, दिल्ली-6 , पृ0 31

आलोचना स्वतन्त्र रूप से की गयी है।

सभी कृतियों से व्यंजित होनेवाली युग-चेतना की ऐतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक अभिव्यंजना की गयी है।

अतः सभी विशेषताओं को वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करने के लिए प्रस्तुत शोध-प्रबंध को दो खण्डों में विभाजित किया गया है --

(1) **प्रथम खण्ड** :- इसमें कवि गुलाब के व्यक्तित्व से सम्बन्धित तीन अध्याय हैं।

प्रथम अध्याय में व्यक्तित्व-सम्बन्धी विवृत्ति है। विभिन्न मनोवैज्ञानिकों द्वारा बताये गये व्यक्तित्व के अनिवार्य लक्षणों का तुलनात्मक अनुशीलन है। व्यक्तित्व और चरित्र के अन्तरों को भी स्पष्ट किया गया है। व्यक्तित्व के प्रमुख गुणों तथा व्यक्तित्व की पहचान की सैद्धांन्तिक और व्यावहारिक कसौटियों का संक्षिप्त सार भी प्रस्तुत किया गया है।

द्वितीय अध्याय में जीवनी की आधार-सामग्री का उल्लेख हुआ है। कवि गुलाब का जीवन-वृत्त, शिक्षा-दीक्षा, दांम्पत्य जीवन, वंश-परिचय, कौटुम्बिक व्यवस्था, व्यक्तित्व के बहिरंग तथा अन्तरंग-पक्ष, आभ्यन्तरिक व्यक्तित्व के प्रेरक तत्त्व (वैयक्तिक पृष्ठभूमि, सामाजिक पृष्ठभूमि, राजनीतिक पृष्ठभूमि, साहित्यिक पृष्ठभूमि) सम्मान और अभिनन्दन तथा गुलाब के पुरस्कृत काव्यों का विवरण है।

तृतीय अध्याय में कवि गुलाब के जीवन-दर्शन का विस्तृत विश्लेषण है।

द्वितीय खंड में कवि गुलाब की समस्त रचनाओं का मूल्यांकन है। यह मूल्यांकन द्वितीय खण्ड के आठ अध्यायों में विभाजित है।

प्रथम अध्याय में कवि की काव्य-कृतियों का क्रमिक विकास निरूपित है। इसमें कृतियों का रचनाकाल, प्रकाशनकाल और प्रकाशक का विवरण है।

द्वितीय अध्याय में गुलाब जी की कृतियों का विधा की दृष्टि से वर्गीकरण किया गया है। विधा की दृष्टि से इनके प्रबंध-काव्यों, खण्डकाव्यों, मुक्तक-काव्यों, ग़ज़ल-संग्रहों और नाटकों का वर्गीकरण है। इसी अध्याय में ग़ज़ल-संग्रहों को छोड़कर सभी रचनाओं का संक्षिप्त परिचय भी दिया गया है। इस अध्याय की प्रमुख विशेषता यह है कि गुलाब जी के प्रबंधों का परिचयात्मक कथानक भी प्रस्तुत किया गया है।

तृतीय अध्याय में गुलाब जी की प्रबंध-रचनाओं के भाव-पक्ष का विश्लेषण है जिसमें रस-निरूपण (प्रबंध-काव्यों के अन्तर्गत) आलम्बन एवं उद्दीपन की भाव-भूमि, प्रबंधों के मार्मिक प्रसंग, पात्र-योजना, विषयवस्तु की

अभीष्टता इत्यादि पर विचार किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में गुलाब जी की प्रबंध-रचनाओं के कला-पक्ष का विस्तृत विश्लेषण है जिसमें शैली, भाषा, संगीत, मुहावरे और लोकोक्तियाँ, शब्दों के विभिन्न प्रयोग, वर्ण या रंग, गंध की संवेदना, नाद, बिम्ब-विधान, अलंकार-योजना तथा छंद-योजना प्रमुख हैं।

पचंम अध्याय में गुलाब जी की अन्य कृतियों (मुक्तक-काव्यों) के भावपक्ष एवं कलापक्ष का विस्तृत मूल्यांकन है।

षष्ठ अध्याय में कवि की रचनाओं (प्रबंधों) के स्वरूप तथा स्थापत्य का वैशिष्ट्य निरूपित किया गया है।

सप्तम अध्याय में गुलाब की ग़ज़लों का स्वतन्त्र मूल्यांकन है। हिन्दी-ग़ज़ल की परम्परा, विकास, प्रयोग एवं उपलब्धियों के आलोक में गुलाब की ग़ज़लों का अनुशीलन हुआ है।

अष्टम अध्याय (अन्तिम) में प्रस्तुत शोध-प्रबंध का निष्कर्ष वर्णित है। अन्तिम अध्याय में सभी शोध-निष्कर्ष तर्कपुष्ट आधार पर उपस्थित किये गये है। इस प्रकार संपूर्ण शोध-प्रबंध ग्यारह अध्यायों में विभाजित होकर कवि गुलाब खंडेलवाल के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डालता है।

कौटुम्बिक यवस्था :

जीवित दोनों पुत्रियों की तरह इनके चारों पुत्र प्रतिभा-सम्पन्न हैं। ज्येष्ठ पुत्र श्री आनन्दवर्धन अमेरिका में डाक्टर हैं। इनकी पत्नी (शोभा खंडेलवाल) भी डाक्टर हैं और पति के साथ ही अमेरिका में हैं। द्वितीय पुत्र श्री कमलनयन जी प्रतापगढ़ में जेनरल इस्योरेन्स के इन्सपेक्टर हैं। इनकी शादी हो चुकी है। तृतीय पुत्र श्री अशोक कुमार कलकत्ता में इन्जीनियर हैं। ये भी विवाहित हैं। कनिष्ठ पुत्र श्री शरतचन्द्र विवाहित हैं। इन्टर तक शिक्षा प्राप्त कर व्यवसाय-रत हैं। इसके अतिरिक्त गुलाब जी को कई पौत्र-पौत्रियों का वात्सल्य-सुख प्राप्त है।

वस्तुतः गुलाब जी एक वट-वृक्ष की तरह हैं जिसकी जड़ बहुत गहरी है, डालें विशाल हैं एवं सघन पत्तियों सें लदी हुई हैं।

कविवर गुलाब की कौटुम्बिक-व्यवस्था प्रारम्भ से ही सुव्यवस्थित तथा समृद्धिपूर्ण है। इनके पितामह भैरोंलाल जी ने अपने तीनों पुत्रों रायसाहब सुरजूलालजी, गया प्रसाद जी तथा शीतल प्रसाद जी को स्थिर और सुरक्षित आर्थिक व्यवस्था प्रदान की। गुलाब जी अपने सगे ताऊ रायसाहब सुरजूलाल के

दस्तक पुत्र के रूप में स्वीकृत हुए। अपने माँ-बाप के दुर्लभ पुत्र के रूप में उत्पन्न गुलाब जी ने बहुत बाल-सुख भोगा। तदुपरान्त श्री गोपाल जी के रूप में इन्हें दूसरा भाई मिला। इनके पिता शीतल प्रसाद जी की दूसरी पत्नी से पुरुषोत्तम नाम का पुत्र प्राप्त हुआ। पारिवारिक विभाजन के बाद गुलाब जी को अपने ताऊ सुरजूलाल की सम्पत्ति का अधिकार मिला। इन्हें धन-धान्य की कमी नहीं थी। विवाहोपरान्त लक्ष्मी के वरदान-स्वरूप गुलाब जी को पुत्रहीन श्वसुर की सम्पत्ति का पूर्ण अधिकार प्राप्त हुआ। इस तरह इनकी आर्थिक व्यवस्था अत्यन्त ही समृद्ध हो गयी जो आज भी विद्यमान है।

---

1. श्री सुरजूलाल जी को अंग्रेज वायसराय चेम्सफोर्ड द्वारा रायसाहब की उपाधि प्रदान की गई थी।

प्रथम अध्याय

व्यक्तित्व-विश्लेषण, व्यक्तित्व और कृतित्व का सम्बन्ध

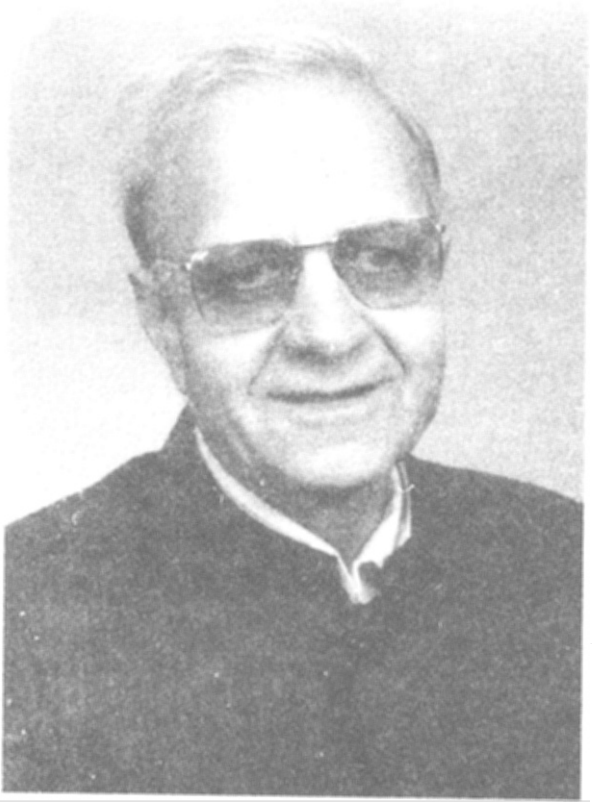

श्री गुलाब खंडेलवाल

गुलाब जी का अमेरिका–स्थित परिवार सन् २००२

ऊपर से–बायें से दायें

प्रथम पंक्ति : अविनाश झालानी (छोटे त्रीमाता) मनमोहन (दौहिज) दिव्या (दौहित्र) प्रीति (दौहित्री) हर्षवर्धन (पौत्र) पराग (पौत्र) अशोक कुमार (तृतीय पुत्र)

द्वितीय पंक्ति : डा. विवेक (दौहित्र) नेहा (पौत्री) दिव्या (दौहित्री) अलका (तृतीय पुत्र अशोक कुमार की पत्नी)

तृतीय पंक्ति : डा. शोभा (ज्येष्ठ पुत्र डा. आनंदवर्धन की पत्नी) प्रतिभा (ज्येष्ठ पुत्री) कृष्णा देवी (पत्नी) गुलाब जी स्वयं, विभा (कनिष्ठ पुत्री) डा. आनंदवर्धन (ज्येष्ठ पुत्र) नूपुर (पौत्री)

चतुर्थ पंक्ति : अपूर्व (पौत्र) सिद्धार्थ (पौत्र) अंकुर (पौत्री) प्रज्ञा (पौत्री) आभा (पौत्री) अरुण (आभा के पति)

गुलाब जी के अमेरिका–स्थित परिवार का चित्र सन २००४

ऊपर से–बायें से दायें

प्रथम पंक्ति : अशोक कुमार (तृतीय पुत्र) कमल नयन (द्वितीय पुत्र) डा. आनंदवर्धन (ज्येष्ठ पुत्र) शरतचंद्र (कनिष्ठ पुत्र)

द्वितीय पंक्ति : चित्रा (शरतचंद्र की पत्नी) अलका (अशोक कुमार की पत्नी) प्रतिभा (ज्येष्ठ पुत्री) डा. शोभा (ज्येष्ठ पुंत्र डा. आनंदवर्धन की पत्नी) मधु (कमल नयन की पत्नी)

तृतीय पंक्ति : प्रभांशु (पौत्र) अपूर्व (पौत्र) डा. विवेक (दौहित्र) नेहा (पौत्री) नूपुर (पौत्री) अंकुर (पौत्री) सिद्धार्थ (पौत्र)

श्री गुलाब खंडेलवाल एवं उनकी पत्नी श्रीमति कृष्णा देवी

व्यक्तित्व-विश्लेषण, व्यक्तित्व और कृतित्व का सम्बन्ध

आधुनिक (विशेषकर अत्याधुनिक) साहित्यालोचन-पद्धति में किसी कवि या रचना का मूल्यांकन सैद्धान्तिक अथवा शास्त्रीय परम्परा का पोषक नहीं रह गया है। ऐतिहासिक, समाजशास्त्रीय, और मनोवैज्ञानिक दबावों से उत्पन्न स्थूल या सूक्ष्म प्रभावों को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से ग्रहण करके ही कोई आलोचक किसी 'कवि' या 'रचना' या 'काल' का सम्यक् विवेचन प्रस्तुत कर सकता है। इस संदर्भ में कवि की काव्य-सम्पदा के साथ-साथ कवि-व्यक्तित्व के अन्तर्वाह्य पक्षों का विस्तृत, गम्भीर और संपूर्ण विश्लेषण अनिवार्य हो जाता है। साहित्यकारों में कवि सर्वाधिक सम्वेदनशील, कल्पक तथा भावुक होता है। वस्तुतः, कवियों की दुनिया निराली होती है। सम्भवतः इसलिए कवि के व्यक्तित्व को परिभाषित करना या विश्लेषित करना असम्भव नहीं तो जटिल अवश्य है। इनकी कई कोटियाँ हैं। कुछ कवि ऐसे होते हैं, जिनका जीवन तो महान नहीं होता है, पर साहित्य महान होता है। इसके विपरीत कुछ कवि ऐसे होते हैं जिनका जीवन महान होता है, पर साहित्य महान नहीं होता; किन्तु कुछ कवि ऐसे भी होते हैं जिनका जीवन और साहित्य दोनों ही महान होते हैं। विश्व के कवियों की ऐसी विविध श्रेणियाँ हैं। इस कथन के साथ बहुसंख्यक कवियों का एक वर्ग ऐसा रह जाता है जो मध्यमार्गी हैं यानी, ऐसे कवि जिनके व्यक्तित्व और कृतित्व साधारण से असाधारण की और उन्मुख हैं। इस शोध-प्रंबध का आलोच्य कवि इसी कोटि में आता है। यह ठीक ही कहा गया है कि 'कवि का जीवन-वृत्त उसके व्यक्तित्व-निर्माण का बाह्य उपादान है, और जीवन-दर्शन अभ्यंतर उपादान। काव्य में कवि का संपूर्ण व्यक्तित्व अभिव्यक्त होता है।'[1] इस कथन की सार्थकता सर आर्थर क्वीलर कूच के कथन से भी सिद्ध हो जाती है ---

---

1. 'मैथिलीशरण गुप्त : व्यक्ति और काव्य' डॉ0 कमलाकान्त पाठक, पृ0-1 प्रथम सं0 जनवरी 1960, प्रकाशक—रंजीत प्रिंटर्स एण्ड पब्लिसर्श, चाँदनी चौक, दिल्ली-6

"The work of so and so is important because it is the perfect expression of his personality. [1] इसलिए किसी कवि की आलोचना के लिए उसकी रचना की आलोचना अनिवार्य है और इसी तरह उसकी रचना की आलोचना के लिए कवि की आलोचना भी आवश्यक है।

हर्बर्ट रीड का मत भी उल्लेखनीय है -- 'criticism must concern it self, not only with finished work of art, but also with the workman, his mental activity and his tools.'

अर्थात्, कवि की आलोचना में उसकी रचना की आलोचना तो आवश्यक है ही, उसकी बुद्धि-प्रक्रिया, उसके उपकरण, एवं उसके पूरे व्यक्तित्व पर प्रकाश डालना भी अनिवार्य समझा जाता है।'[2] रूस के प्रख्यात उपन्यासकार दोस्तोव्यस्की की धारणा भी कुछ इसी तरह की रही है -- 'कला छिपने के लिए शरण-स्थली नहीं, यह दर्द और यातनाओं से निकल भागने का रास्ता नहीं, किन्तु आत्म-स्वीकृति अथवा आत्मग्लानि की सच्ची या स्वाभाविक अभिव्यक्ति है।'[3] इसलिए 'कवि के क्रियात्मक जीवन, मानसिक संकल्प-विकल्प तथा स्वभाव आदि का अध्ययन आवश्यक है।'[4]

निष्कर्ष यह है कि कवि और उसकी रचनाओं के अटूट सम्बन्ध को समझकर ही उसके व्यक्तित्व और कृतित्व का गवेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जा सकता है। कृतित्व के मूल्यांकन से भी अधिक महत्त्वपूर्ण और जटिल कार्य कवि के व्यक्तित्व के प्रस्तुतीकरण का है। व्यक्तित्व का गहरा सम्बन्ध मनोविज्ञान से है। कुछ मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व समझने के पूर्व व्यक्ति की मानसिक शक्तियों का विश्लेषण आवश्यक समझा है। इसी सन्दर्भ में 'चेतन', 'अवचेतन' 'पूर्ण चेतन' के साथ-साथ 'अंह' अथवा 'ईगो' (Ego) से प्रभावित और प्रेरित विचारों, सम्वेदनाओं, वृत्तियों और क्रियाशीलता का विश्लेषण फ्रायड के अनुसार अनिवार्य माना गया है ; क्योंकि हम जिसे मानव-चरित्र कहते हैं, उसके निर्माण के लिए अन्तःसामग्री नींव और उपकरण की तरह अनिवार्य है।

---

1. समीक्षा-शास्त्र, डॉ0 दशरथ ओझा, द्वितीय संस्करण, जुलाई 1957, प्रकाशक राज्य पाल ऐण्ड सन्स, दिल्ली-6, पृ0 31
2. समीक्षाशास्त्र, डा0 दशरथ ओझा, हर्बर्ट रीड का मत, पृ0 31
3. सारिका, (दोस्तोव्यस्की विशेषांक) पृ0 48, 16 दिसम्बर 1982, अंक299
4. मैथिलीशरण गुप्त : व्यक्ति और काव्य, डॉ0 कालाकान्त पाठक, पृ01

रचनाकार (व्यक्ति) के व्यक्तित्व में निहित मूल प्रवृत्तियाँ मुख्यतः नौ मानी गई हैं --- भय (Fear), रति (Sex) कौतूहल (Curiosity) वात्सल्य (perenthood), सामाजिक (Social) आत्म-प्रदर्शन (Self-display) युयुत्सा (Pugnacity) आत्मसत्तात्मकता (Self assertion) और महत्वाकांक्षा (Ambition)। 'इन मूल प्रवृत्तियों में अपार भावात्मक शक्ति भरी रहती है। ये जीवन की गत्यात्मक शक्तियाँ हैं जो हमारे अन्दर उत्साह पैदा करती हैं और इच्छाशक्ति को दृढ़ करती हैं। इन्हीके द्वारा मनुष्य किसी तरह का आचरण या व्यवहार करने के लिए प्रेरित होता है।'[1]

सामान्य मनुष्य से अधिक भावात्मक शक्ति कवि में होती है। फलस्वरूप, ऊपर वर्णित प्रवृत्तियाँ कवि में ज्यादा सजग और क्रियाशील रहती हैं। सच तो यह है कि कवि के व्यक्तित्व की आधार-शिला भोक्तृत्व-शक्ति ही है, अतः प्रवृत्तियाँ जो अन्तःप्रवृत्तियों से श्री-सम्पन्न होती हैं यों तो मनुष्य-मात्र के सामान्य सत्तासार, ज्ञातृत्व ,कर्तृत्व और भोक्तृत्व शक्तियों की एक सम्पृक्त अन्विति हैं, पर व्यक्ति के शील-भवन की आधार-शिला उसकी भोक्तृत्व पद्धति ही है।'[2] इसीलिए कृतित्व के पूर्व कवि के व्यक्तित्व की निर्माण-प्रक्रियाओं को समझना आवश्यक है। व्यक्तित्व के निर्धारक तत्त्वों में वंश-परम्परा, शारीरिक वनावट, स्वभाव, बुद्धि, मेधा, वातावरण, अन्तः और बाह्य प्रभावों के साथ-साथ कवि की संवेगात्मकता, शील, संकोच, चिन्तनशीलता, संघर्ष तथा उत्तरोत्तर मनोविश्लेषणात्मक प्रवृत्तियों के अध्ययन-मनन की अपरिहार्य अनिवार्यता हो जाती है। सच्चा कलाकार सिर्फ अपने समय का ही चित्रकार नहीं होता है, बल्कि बदलते हुए युग के मूल्यों को वह अपनी रचनाओं में अंतर्भुक्त करता रहता है। इस सन्दर्भ में रचनाओं का महत्त्व काल-सापेक्ष और ऐतिहासिक हो जाता है। युग की सम्वेदनाओं तथा अनिवार्य मान्यताओं को स्वीकृत करते हुए उन्हें अपनी रचनात्मक क्षमता से कवि प्रेरित करता रहता है। कालानुसरण की क्षमता रखनेवाला कवि महान होता है और इसी अर्थ में वह युग-स्रष्टा भी कहलाता है। ऐसा होने के लिए कवि का व्यक्तित्व सर्वाधिक प्रखर, सजग, सम्वेदनशील और पारदर्शी होना चाहिए। अतः व्यक्तित्व की सही पहचान आवश्यक है। व्यक्तित्व की सही पहचान या परिभाषा के सम्बन्ध में मनोवैज्ञानिकों

---

1. 'मनोवृत्तानुवर्ती अध्यात्म रचना', डॉ0 देवराज उपाध्याय, पृ0 1, प्रकाशक वसुदेव प्रकाशन आरा, बिहार : प्रथम संस्करण- 1977
2. 'शील-निरूपण : सिद्धान्त और विनियोग', जगदीश पाण्डे, प्रकाशक—अर्चना प्रकाशन : आरा, द्वितीय संस्करण 1963, पृ0 सं0 1

के अनेकानेक दृष्टिकोण हैं। पहला दृष्टिकोण यह मानता है कि 'व्यक्ति की सभी जन्मजात एवं अर्जित प्रवृत्तियों के संग्रह को ही व्यक्तित्व कहते हैं।'[1] इसका अर्थ यह हुआ कि व्यक्ति की सभी जैविक जन्मजात प्रवृत्तियाँ, मनोवेग, झुकाव, अभिलाषा, सहजवृत्ति आदि उसके व्यक्तित्व के अनिवार्य अंग हैं। इस परिभाषा के अनुसार व्यक्तित्व के आन्तरिक पक्षों पर पूरा बल दिया गया है। दूसरी ओर व्यक्तित्व के अन्तर्गत व्यक्ति की सभी प्रवृत्तियों के समन्वय पर बल दिया गया है।[2] तीसरा दृष्टिकोण व्यवहारवादी मनोवैज्ञानिकों का है। उसके अनुसार व्यक्तित्व उन अभ्यासों का समन्वय है, जो वातावरण के प्रति विशिष्ट अभियोजन (Adjustment) का निर्देशन करते हैं।[3] वस्तुतः यह व्यक्तित्व का ही फल है कि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से भिन्न नजर आता है। उसकी प्रवृत्तियाँ, उसकी आदतें, उसके विचार, उसके ढंग तथा उसके अनुभव और अभ्यास दूसरों से भिन्न होते हैं। निस्संदेह, किसी भी व्यक्ति के सभी कार्य उसके व्यक्तित्व से अनुरंजित होते है। फलस्वरुप प्रत्येक व्यक्ति की जीवनशैली में उसके अपने व्यक्तित्व की छाप होती है। व्यक्तित्व के आधार पर ही एक व्यक्ति को बहुत आसानी से अन्य से अलग किया जा सकता है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक ऑलपर्ट (Allpert) ने व्यक्तित्व सम्बन्धी सभी दृष्टिकोणों को

---

1. 'Personality is the sumtotal of all the biological innate disposition, impulses, tendencies, appetites, and instincts of the individual, and the acquired disposition and tendencies of those psychophysical systems that determin his unique adjustment to his environment.'[1]

   -- Horton prince : ' the unconscious' (2nd Ed.) mac millan, new york (1984), page-532.
2. " personality is an integration of patterns (interests) which gives a peculiar individual trend to the bahaviour of the organism." -- J.T. maccurdy : 6 common principles in psychology and physiology (1528),P.333.
3. personality is the integration of those systems of habits that represent an individual's characterstic adjustment to his environment." -- E. jokempf : 'the autonomic functions and the personality." (सामान्य मनोविज्ञान, राम प्रसाद पाण्डेय, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 1977 के पृ0 322 से उद्धृत)

समन्वित करते हुए लिखा है-- 'personality is the dynamic organization within the indlvidual

इस कथन के अनुसार व्यक्तित्व व्यक्ति के भीतर उन मनोदैहिक गुणों का गत्यात्मक संगठन है जो वातावरण के प्रति होनेवाले उसके अपूर्व अभियोजनों का निर्णय करते हैं। निश्चय ही कोई व्यक्ति वातावरण के प्रति अपने अपूर्व और विशिष्ट अभियोजन के कारण ही अपने को अन्य व्यक्तियों से भिन्न पाता है।

व्यक्तित्व के निर्धारक तत्त्वों में वंश-परम्परागत गुणों तथा वातावरण के प्रभाव की मुख्य भूमिका देखी जा सकती है। साथ-ही-साथ मनुष्य अपनी योग्यता, मेधा (Talent), धातु-स्वभाव (Temperament) तथा मानसिक बनावट के कारण भी अपने व्यक्तित्व को विकसित कर लेता है। अतः कथन का निष्कर्ष यह है कि 'व्यक्तित्व न तो केवल वंश-परम्परा पर ही निर्भर करता है और न केवल वातावरण पर ही, वरन् दोनों की क्रिया-प्रतिक्रिया के फलस्वरुप निर्मित होता है। इसलिए व्यक्तित्व को वंश-परम्परा एवं वातावरण का गुणनफल कहा जाता है (व्यक्तित्व = वंशपरम्परा × वातावरण)।'[2] वंश-परम्परा के अन्तर्गत् शरीरिक बनावट (Physique), धातुस्वभाव (Temperament), मेधा (Talent), अन्तःस्रावी पिण्ड (Endocrine glands) आदि आते हैं। अतः व्यक्तित्व के सही विश्लेषण के लिए व्यक्ति के अंगों के अनुपात, स्वास्थ्य, लम्बाई, वजन, शारीरिक सुन्दरता, आदि बाह्य आकर्षण पैदा करने वाले समस्त प्रभावों की व्याख्या वांछित हो जाती है। सर्वप्रथम पहली दृष्टि में ही दर्शक व्यक्ति के बाह्य व्यक्तित्व से ही प्रभावित होता है। तदुपरान्त उसके सम्पर्क, बातचीत, स्वभाव, संस्कार, मेधा, बुद्धि आदि आन्तरिक गुणों की जानकारी प्राप्त करता है। अन्तः- गुण या उपलब्धि व्यक्ति के आन्तरिक व्यक्तित्व के अंग हैं। वंश-परम्परा की तरह ही व्यक्तित्व के निर्माण और विकास में वातावरण बहुत महत्त्वपूर्ण है। वातावरण के अन्तर्गत घर के प्रभाव, समुदाय या संस्कृति का प्रभाव, पारिवारिक अनुकूलता और प्रतिकूलता के प्रभाव, राजनीतिक और धार्मिक प्रभाव आदि उल्लेखनीय हैं।

1- Allport, c.w. ' parsonality -- A psychological interpretation' P.18.
सामान्य मनोविज्ञान -- राम प्रसाद पाण्डेय, पृ0 223 से)

2. सामान्य मनोविज्ञान -- रामप्रसाद पाण्डेय, पृ0 325

व्यक्तित्व के प्रमुख गुणों में अन्तर्मुखता और बहिर्मुखता (Introversion, extroversion) प्रभुत्व-अधीनता (ascendance-submission) संवेगात्मक अस्थिरता (Emotional instability) या संवेगात्मक स्थिरता, भीरुता, या साहसिकता, कल्पनाशीलता, निराशावादिता या आशावादिता आदि प्रमुख हैं।

मुख्यतः व्यक्तित्व की पहचान की सैद्धान्तिक और व्यावहारिक कसौटियों का संक्षिप्तसार वर्णित हो चुका है। इस शोध-प्रबंध में व्यक्तित्व-विश्लेषण की प्रासंगिकता इसलिए है कि महाकवि गुलाब खंडेलवाल के काव्याध्ययन के लिए उनके व्यक्तित्व का विश्लेषण छोड़ा नहीं जा सकता --- ' व्यक्तित्व का विशलेषण किसी भी कवि के काव्याध्ययन के लिए अनिवार्य वस्तु है, जीवनी उसका बहिरंग है और जीवन-दर्शन अन्तरंग। अन्तरंग वस्तुओं में भावनाएँ और अनुभूतियाँ भी परिगणित होंगी, पर उनका समुचित उत्कर्ष जीवन-दर्शन में उपलब्ध होता है तथा वे स्वभाव, आचरण और कर्मशीलता में प्रकट हो जाती हैं।'[1]

यह ठीक है कि जीवन इतना बहुमुखी और अन्तर्वृत्तियाँ इतनी जटिल होती हैं कि उनके फलस्वरूप व्यक्तित्व-विश्लेषण के कारण कवि की काव्य-समीक्षा भ्रान्तिपूर्ण हो सकती है। 'जीवन की जटिल अज्ञेयता से परिचित हो जाने पर साधारण स्थूल-दृष्टि आलोचक इस मार्मिक प्रणाली का त्याग कर दें, यह अच्छा ही है, नहीं तो साहित्य में बड़ा विषम भाव और बड़ा विद्वेष फैलने की आशंका है।'[2] किन्तु सहृदय आलोचक, कवि के जीवन और साहित्य का मूल्यांकन पूरी ईमानदारी और तटस्थता के साथ कर सकता है। कवि के स्वतंत्र विचारों को, उसकी धारणाओं को, परिस्थिति और सामयिक आवश्यकताओं के आलोक में देखते हुए भी महत्त्व देना अनिवार्य है। आलोच्य कवि के जीवन और काव्य को इसी परिपेक्ष्य में प्रस्तुत शोध-कर्त्ता ने देखा है। कवि के व्यक्तित्व-विश्लेषण के क्रम में यह बराबर ध्यान रखना चाहिए कि व्यक्तित्व और चरित्र दोनों पर्यायवाची शब्द नहीं हैं। दोनों में अन्तर है। सामान्यतः व्यक्ति की अन्तर्भूत प्रकृति को ही चरित्र कहा जाता है। इस प्रकृति के कारण व्यक्ति के भावोद्रेक या मनोवेगों पर नियंत्रण किया जाता है। इसके अभाव में व्यक्ति का चरित्र

---

1. मैथिलीशरण गुप्त : व्यक्ति और काव्य, डॉ0 कमलाकान्त पाठक, पृ0 2
2. आधुनिक साहित्य : नन्ददुलारे वाजपेयी, प्रथम संस्करण, 1950, पृ0 402, प्रकाशक : भारती-भंडार, इलाहाबाद

असन्तुलित और ढीला हो जा सकता है। सच ही कहा गया है कि बुद्धि का विकास तो एकान्त में होता है, किन्तु चरित्र-निर्माण संसार के प्रवाह में होता है। दोनों के अन्तर को स्पष्ट करते हुए डॉ0 दशरथ ओझा ने लिखा है --- 'चरित्र बाहर से ग्रहीत एक आदर्श है, जिसके लिए व्यक्ति अपने सभी अधिकारों को तिलांजलि देता है। चरित्र का ठीक प्रतिपक्षी व्यक्तित्व है जो हमारे मनोवेगों और भावनाओं का विधायक बनता है।'[1] चरित्र और व्यक्तित्व के अन्तर को स्पष्ट करने का एक ही कारण है कि प्रस्तुत शोध-प्रबंध में कविवर गुलाब का चरित्र-चित्रण नहीं करना है, अपितु उनके व्यक्तित्व के उन तत्त्वों का विश्लेषण करना है, जिससे उनका व्यक्तित्व समृद्ध हुआ है। साथ ही साथ इस प्रबंध में उनकी जीवनी का स्थूल इतिवृत्त भी नहीं प्रस्तुत करना है। सिर्फ उनके जीवन-विकास की स्वाभाविक स्थितियों तथा परिस्थितियों की जानकारी से उनकी काव्य-सम्पदा की केन्द्रीय चेतना का उद्‌घाटन करना है। अतः गुलाबजी के जीवन-सूत्रों को विभिन्न रूप में प्रस्तुत कर उनके मनोविकास को आसानी से समझा जा सकता है। इसलिए कवि-व्यक्तित्व के अन्तर्बाह्य पक्षों (उपादानों) का सम्यक् मूल्यांकन अनिवार्य है।

1. समीक्षा-शास्त्र', पृ0 33

द्वितीय अध्याय

जीवन-वृत्त

जीवनी

प्रथम अध्याय में व्यक्तित्व-विकास तथा व्यक्तित्व-निर्माण की अनिवार्य परिस्थितियों, मान्यताओं और अनिवार्यताओं पर प्रकाश डाला गया है। व्यक्तित्व और चरित्र के अन्तरों को भी स्पष्ट किया गया है। चरित्र की तरह ही व्यक्तित्व का एक अभिन्न अंग जीवनी है। यह ठीक है कि मात्र जीवनी व्यक्तित्व नहीं है। किन्तु व्यक्तित्व के उत्तरोत्तर विकास तथा समृद्धि का मूलाधार जीवनी भी है। जीवनी से आलोच्य कवि के जीवन के विविध पहलुओं पर प्रकाश पड़ता है। कवि की विविध मार्मिक परिस्थितियाँ तथा कवि-हृदय में परिस्थितिजन्य उठनेवाली करुणा, ममता, उदात्तता, उत्साह, हर्ष, आशा, निराशा, आदि का परिचय मिलता है। निश्चय ही श्रेष्ठ कवि की जीवनी हमें महान बनने की प्रेरणा देती है। हमारे संस्कारों पर परोक्ष रूप से कवि के उदात्त चरित्र का प्रभाव पड़ता है जिससे हमारा चारित्रिक उत्कर्ष सम्पन्न होता है। 'जीवनी अब रचनात्मक साहित्य का ही एक स्वरूप-विधान है।'[1]

कवि के जीवन के विविध पहलुओं के विकास का क्रमबद्ध इतिहास रखना, उसके व्यक्तित्व के निर्माण में योग देनेवाले परिवेश या परिस्थितियों के विविध रूपों का परिचय देना ही जीवनी का मुख्य उद्देश्य है। निश्चय ही जीवनी साहित्य का एक अंग है। फलतः कवि की कृतियों के सम्यक मूल्यांकन के लिए कवि की जीवनी आवश्यक है, क्योकि कवि की जीवनी न्यूनाधिक रूप से उसकी रचनाओं को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित करती है। जीवनी के द्वारा कवि की व्याख्या सामने आती है। यह सही है कि जीवनी इतिहास नहीं है। इतिहास में सिर्फ वस्तु-सत्य रहता है, किन्तु जीवनी में वस्तु-सत्य (इतिहास) और भाव-सत्य (साहित्य) दोनों रहते हैं। किसी कवि की जीवनी के लिए केवल उसके जीवन की असाधारण घटनाओं या परिस्थितियों का वर्णन करना ही पर्याप्त नहीं होता है, बल्कि 'जीवनी-लेखक के लिए चरित्र-नायक की सामान्य

---

1. 'साहित्य के रूप और तत्त्व' : डॉ0 शिवनन्दन प्रसाद, प्रथम संस्करण 1954, पुस्तक भंडार, पटना, 4, पृ0 177

से सामान्य बातें भी महत्त्व रखती हैं। वह चरित्रनायक के खाने-पहनने की रुचि, प्रातःकालीन ईश्वर-वन्दना या भ्रमण आदि का वर्णन उतने ही उत्साह से करता है, जितने उत्साह के साथ इतिहासकार किसी बड़े युद्ध या राज-परिवर्तन का वर्णन करता है। इतिहासकार के लिए ऐसी बातें अनावश्यक प्रतीत होती हैं, किन्तु जीवनीकार के लिए वे अत्यावश्यक हैं।"[1] पर इतना अवश्य ही ध्यान देना चाहिए कि जीवनी में कोई अनावश्यक बात न आने पाये और न कोई आवश्यक बात छोड़ी जाय।

जीवनी की आधार-सामग्री

कविवर गुलाब ने न तो अपनी आत्म-कथा लिखी है, न कोई डायरी और न उनके पास पत्रों की कोई फाइल ही है।[2] उनकी जीवनी का विस्तृत वर्णन अन्यत्र इसलिए भी उपलब्ध नहीं है। क्योकि उनकी रचनाओं का प्रकाशित अलोचना-साहित्य लगभग नहीं के बराबर है। ऐसे प्रख्यात कवि की प्रामाणिक जीवनी की कमी का एक कारण और है कि अधिकांश सहृदय साहित्यकारों ने या आलोचकों ने उनके व्यक्तित्व से बहुत अधिक उनके कृतित्व पर ही प्रकाश डाला है। ऐसे साहित्यकारों और समीक्षकों के मन्तव्य, छिट-फुट रूप में प्रकाशित हुए हैं। हिन्दी आलोचना-साहित्य के लिए यह कोई नयी समस्या नहीं है। ज्ञातव्य है कि हिन्दी के प्रायः प्राचीन और मध्यकालीन शीर्ष साहित्यकारों ने अपने सम्बन्ध में या अपने जीवन-वृत्त के सम्बन्ध में लगभग कुछ नहीं लिखा है। आज यह समस्या इसलिए कठिन नहीं रह गयी है कि आज के साहित्यकार अपनी रचना से अधिक अपने सम्बन्ध में ही लिखते हैं। विशेषकर जीवित साहित्यकारों के जीवन-वृत्त को सहजता और सुलभता से जाना जा सकता है। यह सौभाग्य की बात है कि कवि गुलाब आज हमारे बीच हैं। फलतः, उनके द्वारा, उनके पारिवारिक सदस्यों के द्वारा, उनके सहृदय मित्रों के द्वारा, उनका जीवन वृत्त सर्व-सुलभ है। प्रायः उनकी सभी रचनाओं में कवि-परिचय की पूरी सामग्री उपलब्ध है। उनके अभिनन्दन-अंक (नवकल्प), कमल प्रकाशन से

---

1. समीक्षा-शास्त्र -- डॉ0 दशरथ ओझा, पृ0 198
2. हाँ, गुलाब जी के विभिन्न काव्यों के प्रति विविध साहित्यकारों की अनुशंसाएँ पत्रों के रूप में प्राप्त हैं जो पत्रों की फाइल के रूप में कवि के पास सुरक्षित हैं।

प्रकाशित छोटी पुस्तिका (संक्षिप्त-परिचय), विश्वंभर 'मानव' की आलोचना-पुस्तक (नयी कविता : नये कवि) तथा अन्य साहित्यकारों की सम्मतियों का संग्रह[1] (आकलन-संकलन) के आधार पर तथा स्वयं कवि के साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी के माध्यम से उनकी जीवनी प्राप्त हुई है।

(क) जीवन-वृत्त : (जन्म-स्थान, जन्म-तिथि, जाति-गोत्र, वंश-परिचय, पारिवारिक-व्यवस्था, वात्सल्य-सुख, प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा, आदि)।

जन्म-स्थान, जन्म-तिथि एवं जाति-गोत्र :-

कवि गुलाब का जन्म 21 फरवरी सन् 1924 को उनके ननिहाल, राजस्थान के नवलगढ़ ग्राम में, खंडेलवाल वैश्य परिवार में हुआ था। कविवर गुलाब की जन्म-पत्री निम्न है[2] : --

जन्मतिथि : फाल्गुनवदि - 1 संवत् 1980 वि0।
21-2-1924 सन्।

अथ जन्म-ग्रहाः।

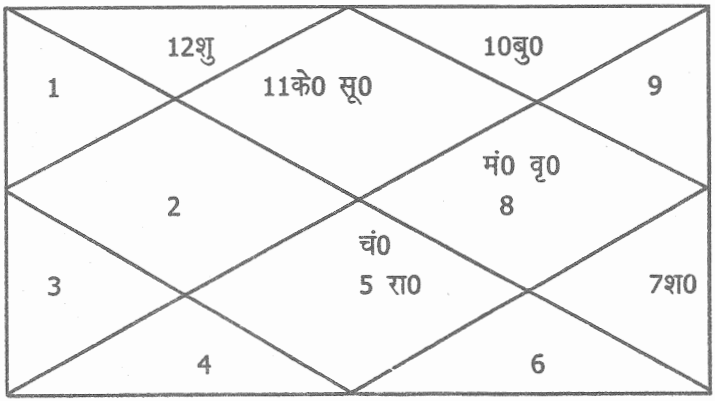

1- 'नयी कविता : नये कवि' -- विश्वम्भर 'मानव', तृतीय संस्करण 1978, लोकभारती प्रकाशन 15 ए0 महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद

2- यह जन्म-पत्री शोधकर्त्ता को कविवर गुलाब से प्राप्त हुई है। उनके कुल के अन्यान्य व्यक्तियों की जन्म-कुण्डलियाँ भी कवि के पास सुरक्षित हैं।

संवत् 19 80 ।। शाके 18 45 ।। फाल्गुन कृष्ण पक्षे 1 गुरुवासरे।। 34 ।। 45 मघानक्षत्रे ।। 0 ।। 21 ।। शुक्र स्थान स्थयोः। जो।। 45।। 00 ।। वारर्क्षे।। 5।। 40।। दिनमान।। 28 ।। 57।। रात्रिभान।। 31।। 3।। अहोरात्र ।। 60।। 00 ।। दारों व पंचागे शती श्री सुर्योदयादिष्टम्।। 1।। 15।। तद्कुम्भलग्ने ब्रह्माह्नेसति साह जी श्री भैरोंलाल जी आत्मज।। चिरंजीव सीतल प्रसाद गृहे भार्यायां पुत्रमजीजनत। तदा अंबकदंडौ ।। चक्रानुसारेण पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्रस्य प्रथम पादे जन्मनो नाम मोहनलाल -- ता0 21-2-1924।

वंश-परिचय

आज से लगभग 125 वर्ष पहले कवि के प्रपितामह स्व0 श्री सदासुख जी

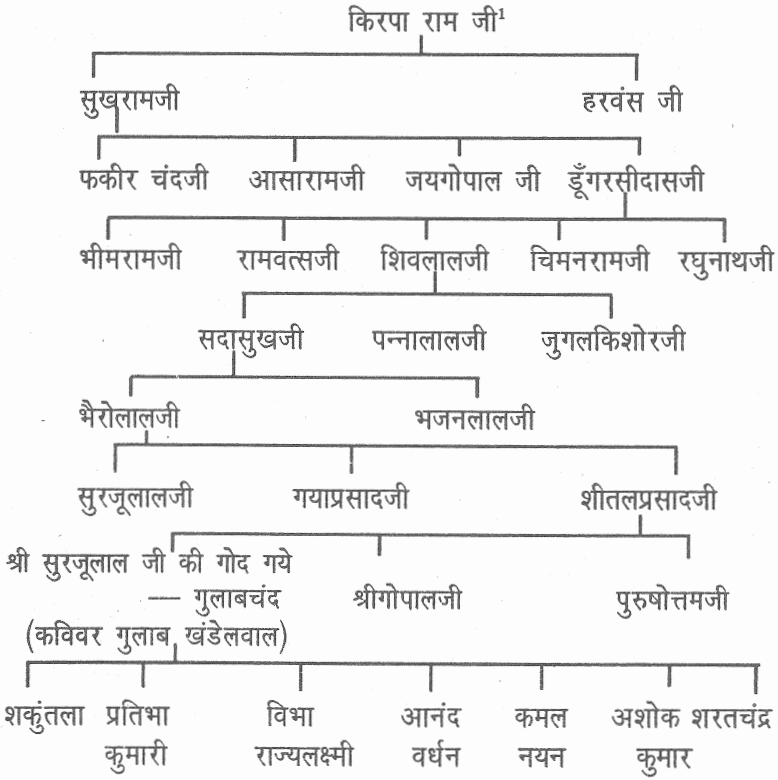

1. इन्होनें परशुराम पुर से आकर नवलगढ़ में नवल सिंह जी की मुसाहबत की। संवत् 1925 में नवलगढ़ में जानकीनाथ जी का मंदिर बनवाया। यहीं साह कहलाये।

राजस्थान के जयपुर राज्य में शेखावटी के अंनर्गत मंडवा गाँव के निवासी थे। वहीं से धनोपार्जन के लिए निकले और कालान्तर में गया (बिहार) में आकर स्थायी रूप से रहने लगे। इसलिए कवि गुलाब का अटूट सम्बन्ध गया से रहा है और आज भी है। गया में इनका अपना भवन[1] है तथा इनका अधिकांस लेखनकार्य यहीं से हुआ है। आज कल कवि का अधिक समय प्रतापगढ़[2] (अवध) में व्यतीत हो रहा है। इनका वंशवृक्ष गत पृष्ठ पर तालिका में दिया जा चुका है।[3]

इनके पिता का नाम शीतल प्रसाद और माता का नाम बसन्ती देवी था।[4] श्री शीतल प्रसाद तथा बसन्ती देवी का दीर्घ वैवाहिक जीवन पुत्र के अभाव में ही बीत रहा था। परिवार में धन-धान्य का बाहुल्य था, कमी थी तो सिर्फ एक पुत्ररत्न की। कवि के माता-पिता ने (जो पुत्र के लिए बहुत चिन्तित रहा करते थे) देवी और देवताओं की पूजा-अर्चना इसी आकांक्षा से प्रारम्भ की। उन लोगों ने संन्यासियों और ज्योतिषियों के आशीर्वाद प्राप्त करने के अथक प्रयत्न किये। फलस्वरूप एक महात्मा के आशीर्वाद के रूप में कवि गुलाब का जन्म हुआ।[5] जन्म से ही बालक रूपवान था। ज्ञातव्य है कि चितांमणि नामक एक ज्योतिषी महात्मा ने जन्म के पूर्व ही इनके रूप-रंग की प्रंशसा करते हुए कहा था कि बालक गुलाब जैसा सुन्दर होगा और इनकी माँ ने तत्क्षण प्रसन्न होकर कहा था, 'तब बालक का नाम 'गुलाब' ही रहेगा' और यही हुआ। इनके अद्वितीय व्यक्तित्व और विद्या-बुद्धि के सम्बन्ध में उस पंडित ने पहले ही भविष्यवाणी कर दी थी। वैसे, इनका स्कूल का नाम दामोदरदास खंडेलवाल था परन्तु माता द्वारा प्रदत्त नाम 'गुलाब' ही बाद में प्रचलित हो गया, जो आज भी है। दामोदरदास खंडेलवाल सिर्फ इतिहास है, और अब सर्वविदित नाम गुलाब खंडेलवाल है।

शिक्षा-दीक्षा

---

1. कवि गुलाब खंडेलवाल का निवास-स्थान, चौक, गया है।
2. प्रतापगढ़ (अवध) में कवि की ससुराल है। यहाँ कवि को पर्याप्त सम्पत्ति और भवन ससुरालवालों से उपहार में मिला है। गुलाबजी के साथ उनकी पत्नी एवं उनके द्वितीय पुत्र का परिवार रहता है।
3. यह वंश-वृक्ष कविवर गुलाब से वार्ता के क्रम में प्राप्त हुआ है। कवि की डायरी में यह वंश-वृक्ष संग्रहीत है।
4. कवि गुलाब से वार्ता के क्रम में जानकारी मिली।
5. उपरिवत्।

कवि गुलाब की प्रारम्भिक शिक्षा गया नगर के चीप स्कूल में सम्पन्न हुई। सिर्फ 15 वर्ष की उम्र में (सन्1939) इन्होनें राजेन्द्र विद्यालय, उस समय के सीटी स्कूल गया से प्रवेशिका परीक्षा में द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्णता प्राप्त की और उच्च शिक्षा के लिए वाराणसी चले आये। इन्होने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के विज्ञान- संकाय में प्रवेश लेकर सन् 1941 ई0 में आई0 एस0 सी0 की परीक्षा पास की। इस बार भी इन्हें द्वितीय श्रेणी मिली। पर, विज्ञान के अध्ययन में इनका मन नहीं लगा। इन्होनें अपना नामांकन कला-संकाय में कराया और वहाँ से 1943 ई0 में स्नातक बने।

तृतीय अध्याय

जीवन-दर्शन

जीवन-दर्शन

उन्नत और उदात्त व्यक्तित्व के चिन्तन-मनन, सिद्धांत, मान्यताएँ, धारणाएँ तथा दृष्टिकोण का सम्मिलित रूप ही जीवन-दर्शन कहलाता है। कवि अपने जीवन-दर्शन को अपनी रचनाओं के माध्यम से व्यक्त करता है। इसे ही काव्य-दर्शन कहा जाता है। निष्कर्ष यह कि किसी कवि का काव्य-दर्शन ही उसका जीवन-दर्शन है। जीवन-दर्शन का प्रारम्भ व्यक्तिगत अनुभूति की तीव्रता से होता है और यह अनुभूति की तीव्रता न तो स्थायी होती है और न स्थिर। ऐसा होना स्वाभाविक भी नहीं है। रचनाकार अपने देश-काल से अगर पूर्णतः लिप्त नहीं रह सकता, तो पूर्णतः तटस्थ भी नहीं रह सकता। सही अर्थ में संवेदनशील और समर्थ कवि अपनी रचनाओं में अपने समसामयिक प्रभावों को अवश्य ही समेट लेता है। समय-समय पर या बदलती हुई परिस्थितियों के अनुकूल, भोगे गये अनुभवों को वह अपनी विभिन्न रचनाओं के माध्यम से प्रकट करता है। यही कारण है कि कवि का जीवन-दर्शन कई दिशान्तरों में बँधा हुआ रहता है। कभी वह प्रेम की अनुभूति से अभिभूत हो जाता है, तो कभी प्रकृति की सुषमा ही उसके लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है। कभी सौन्दर्यानुभूति की ही प्रधानता हो जाती है, तो कभी वह लोक-कल्याण की भावना में पूर्णतः अर्पित हो जाता है। राजनीति तथा राष्ट्रीयता की भावना से वह अपने को मुक्त नहीं कर सकता। कवि गुलाब के जीवन-दर्शन या काव्य-दर्शन को इसी परिप्रेक्ष्य में देखना होगा। चार दशकों से भी अधिक काव्य-रचना में लीन गुलाब जी का जीवन-दर्शन बहुत ही विशिष्ट और वैविध्यपूर्ण है। उनका जीवन-दर्शन उत्तरोत्तर विकास और समृद्धि के सोपानों को पार करता हुआ लोक-कल्याण से पूर्णतः सम्पृक्त हो गया है। ज्ञातव्य है कि कवि गुलाब जी की मूल प्रवृत्ति में छायावादी दृष्टिकोण का पुष्कल प्रभाव निहित है। उनका काव्यारम्भ छायावादी अनुभूतियों से ही हुआ। यह सही है कि गुलाब जी ने छायावादी युग के अंत हो जाने पर अपना काव्य-सृजन प्रारम्भ किया, किन्तु उनकी प्रेमानुभूति एवं सौन्दर्यानुभूति छायावादी कवियों की तरह ही व्यक्तिपरक रही है। अतः इनके जीवन-दर्शन का प्रस्थान-बिन्दु प्रेम और सौन्दर्य ही हैं।

(1) प्रेम और सौन्दर्य के कवि गुलाब :

इस सन्दर्भ में छायावादी कवि पंत का स्मरण हो जाता है। पंत की तरह ही अत्यन्त रूपवान और भाव-प्रवण कवि गुलाब ने अपने प्रारंभिक काव्य-संग्रह **चांदनी**

में अपनी प्रेमानुभूति तथा सौन्दर्यानुभूति को पूरी तीव्रता के साथ अभिव्यंजित किया है। रूप और यौवन के कवि के रूप में गुलाब जी ने अपनी अनिंद्य सुन्दरी पत्नी कृष्णा देवी के सम्पर्क-जन्य भावों को बड़ी ही कलात्मकता के साथ काव्य में मूर्त किया है। पुरुष के जीवन में रूपवती और गुणवती नारी के प्रथम स्पर्श की तीव्रता स्वाभाविक ही होती है। एक युवक और वह भी कवि के लिए ऐसा होना बहुत स्वाभाविक है।

गुलाब जी ने नारी-प्रेम और प्रकृति-प्रेम दोनों को एक साथ एक दूसरे के अनिवार्य-पूरक रूप में लिया है। सही तो यह है कि कवि गुलाब ने प्रकृति को विशेष उद्दीपन और आलम्बन के रूप में स्वीकार किया है और मधुर चांदनी के गीत गाते हुए अपने मिलन का संगीत तैयार किया है --

तारकों में बज रहा यह मिलन का संगीत
मेरे मधुर चांदनी के गीत।[1]

तारकों में मिलन का रूप वस्तुतः अपने मिलन की अनुभूति का ही मानवीकरण है। कवि को लगता है कि उनकी प्रिया के संयोग को अधिक मादक और उल्लासपूर्ण करने के लिए प्रकृति सजकर तैयार है। यही कारण है कि मधु पी-पीकर ज्योत्स्ना मदभरी हो गयी है। अपनी प्रिया के कमल-मुख का विकास आकाश की नीलिमा में कवि देखता है --

नील सरसी में खिली नभ के सरोज-विकास-सी
चांदनी मधुहास सी।[2]

संपूर्ण काव्य में चांदनी के ही विविध रूप वर्णित हैं। कहीं वह चन्द्रलोक की परी है, मोहिनी है, विश्वमोहिनी है या पर्वत की बाला है, निर्जन की रानी है या प्रिया है। शुद्ध और सात्विक, मसृण और मादक, प्रकृति के अनन्य तथा असाधारण प्रभावों को ग्रहण कर गुलाब जी प्रकृति के उन्मुक्त गायक प्रतीत होते हैं। यदि उनकी प्रियानुभूति को प्रकृति पर आरोपित न भी किया जाय, तथापि शुद्ध प्रकृति-चित्रण में कवि की प्रारम्भिक अनुभूति का परिचय मिल जाता है। इनका प्रथम काव्य-संग्रह **कविता** है जिसका प्रतिपाद्य प्रेम और सौन्दर्य है। 'किन्तु **चांदनी** से **कविता** में कवि का दृष्टिकोण अधिक मांसल और स्वस्थ दृष्टिगोचर होता है। इसमें कवि की अनुभूति बुद्धिमत्ता से अधिक मूर्त्त हो गयी है। उसने विरह-मिलन दोनों अनुभूतियों को आत्मसात् किया है। उसकी प्रेम-विह्वलता बढ़ गयी है। अनुभव की अथवा भोगे गये

---

1. चाँदनी, गुलाब खंडेलवाल, पृ0 1
2. वही, पृ0 7

सुखों की काव्यात्मक अनुभूति **कविता** में प्रकट हुई है। पीछे के दिन कवि के लिए एक स्मृति हैं, एक कहानी हैं। यह जीवन की स्वाभाविक नियति है ।

जीवन तप है, जलना होगा
जीवन गति है, चलना होगा
ढुलका दूँ नयनों में जो कुछ है स्मृतियों का पानी
वे दिन, एक कहानी।[1]

संयोग में चांदनी का अच्छा लगना और वियोग में कुसुम का कुम्हला जाना, ये दोनों स्थितियाँ प्रेम के ही दो बिन्दु हैं। प्रिया से 'बस एक बार मुसका दो ना' की याचना प्रेमाग्रह ही है। इस तरह **कविता** की कविताएँ मिलन और विदा के गीतों से आपूरित हैं। निष्कर्ष यह है कि गुलाब जी का जीवन-दर्शन सर्वप्रथम प्रेम, सौन्दर्य और प्रकृति के प्रति आशा-निराशा, विरह-संयोग, त्याग और समर्पण की अनुभूतियों से भरा पड़ा है। इसका मूलाधार स्वानुभूति है और इसकी अभिव्यक्ति इनके प्रारम्भिक काव्यों में हुई है। पुनः ग़ज़लों में गुलाब जी का प्रेमवाद अपने चरमोत्कर्ष रूप में व्यक्त हुआ है,[2] जैसे दिनकर की **रसवन्ती** की भावना कालान्तर में **उर्वशी** में आकर शीर्ष पर पहुँच गयी।

(2) मानवतावादी कवि गुलाब :

एक समर्थ कवि युग-स्रष्टा और युगद्रष्टा दोनों होता है। उसका स्वान्तः-सुखाय भी सर्वान्तः सुखाय होता है। उसकी प्रेमानुभूति और सौन्दर्यानुभूति व्यक्तित्व धरातल से अलग होकर लोकमंगल की भावना बन जाती है। उसके काव्य में सौन्दर्य के साथ-साथ सत्य और शिव के प्रति अटूट आग्रह आ जाता है। ऐसा ही कवि कालजयी होता है और ऐसी ही रचना युग की दीप-शिखा होती है। गुलाब जी की एक बड़ी विशेषता यह है कि उन्होनें युग-बोध को जीवन-बोध के साथ देखा है। उनका जीवन-दर्शन समय की वांछित अनिवार्यताओं और प्रभावों से पुष्ट है। वे सिर्फ **चांदनी** और **कविता** के ही गायक नहीं हैं बल्कि जीवन के गायक के रूप में अपनी महत्ता सिद्ध करते हैं। फलतः शाश्वत

---

1. 'कविता' -- गुलाब खंडेलवाल, प्रकाशक : कलाकुंज, काशी
   प्र0 सं0 संवत् 1941, पृ0 6
2. 'सौ गुलाब खिले', 'पँखुरियाँ गुलाब की' और 'कुछ और गुलाब'
   गुलाब जी के प्रसिद्ध ग़ज़ल-संग्रह हैं।

काव्य का सर्जक न्यूनाधिक रूप से मानवतावादी कवि बन जाता है। अपने लेखन के उत्तरार्द्ध में उनका जीवन-दर्शन (काव्य-दर्शन) मानवतावाद की दृष्टि से उल्लेखनीय है। **उषा**, **बलि-निर्वास**, **कच-देवयानी**, **आलोक-वृत्त**, **अहल्या** आदि महत्त्वपूर्ण रचनाओं में उनका मानवतावादी दृष्टिकोण व्यक्त हुआ है। क्षुद्र स्वार्थों के लिए प्रेरित संघर्ष, पारस्परिक ईर्ष्या- द्वेष तथा विघटन की मनोभूमि अवश्य ही मनुष्यता को ह्रास की ओर ले जाती है। रूढ़िवादिता तथा धर्मान्धता विकासशील भावना को भ्रान्त करती है। महाकवि जयशंकर प्रसाद के प्रसिद्ध महाकाव्य **कामायनी** की तरह गुलाब जी ने अपने महाकाव्य **उषा** में मनुष्य की ऐसी आन्तरिक दुर्बलताओं का चित्रण किया है। विकृत और प्राचीन परम्पराओं के ध्वंस तथा नवीन जीवन-मूल्यों के लिए कवि ने कामना की है ---

समस्त सद्-प्रवृत्तियाँ समस्त सद्-विचार ले
नई मनुष्यते! उठो, विमुक्त-पंक क्षार से।[1]
या--
'खड़ी नवीन मानवी नवीन प्राण-दान को
पुनः नयी मनुष्यता, पुनः नया विधान हो।[2]

इस वैज्ञानिक युग ने मनुष्य को बुद्धिवादी बना दिया है। आज का मनुष्य वैज्ञानिक विकास और औद्योगीकरण से पूर्णतः बदल गया है। अर्थ-युग ने आज के मनुष्य को कम प्रभावित नहीं किया है। हृदय की कोमल और सरस भावनाएँ मृत प्राय हो गयी हैं। बुद्धि के आगे हृदय की भावनाएँ मृतप्राय हो गयी हैं। बुद्धि के आगे हृदय की उपेक्षा हुई और आज के जीवन में यांत्रिकता आ गई है। हृदय की रागात्मक वृत्तियाँ एक तरह से बहुत गौण हो गयी हैं। निश्चय ही मानवीय-मूल्यों के ह्रास का यह प्रधान कारण है कि आज का आदमी बुद्धिवादी है। राष्ट्रकवि दिनकर ने **कुरुक्षेत्र** के षष्ठ सर्ग में और महाकवि जयशंकर प्रसाद ने **कामायनी** के **इड़ा** सर्ग में इस ओर विस्तृत संकेत किया है। अन्य कवियों की तरह ही गुलाब जी ने भी मानवता की इस संकटकालीन स्थिति को समझा और अपना आक्रोश व्यक्त किया :-

---

1. 'उषा' -- गुलाब, पृ0 81
2. वही, पृ0 81।

हरा मनुष्य ने दिया, सुरेश, सूर्य, सोम को
स्वहस्त-न्यस्त-सा किया, धरा, समुद्र, व्योम को
परन्तु हारता गया स्ववृत्ति के प्रभाव से
स्वदेश से, स्वजाति से, स्वबंधु से, स्वभाव से।[1]

या :--
मनुष्यते ! अनन्त में, विलीन हो, विलीन हो
कहीं न व्योम से गिरे, दिनेश ज्योति-हीन हो।[2]

गुलाब जी का मानवतावादी दृष्टिकोण **आलोक-वृत्त** के नायक राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के कथन और सिद्धांत के माध्यम से अभिव्यक्त हुआ है। हिंसा, शोषण, अन्याय तथा छलकपट आदि वृत्तियाँ आज की पतनोन्मुख मानवता के लिए सर्वाधिक उत्तरदायी हैं। महात्मा गांधी ने इन्हीं बुराइयों के विरुद्ध अपना अभियान चलाया। उन्होंने जीवन की सारी शक्ति सत्य, अहिंसा, पारस्परिक सद्भावना के उन्नयन में लगा दी। गांधी का दृष्टिकोण मुख्यतः मानवतावादी रहा है और कविवर गुलाब ने अपने खण्डकाव्य **आलोक-वृत्त** में महात्मा गांधी के मानवतावादी दृष्टिकोण का ही परिचय दिया है। **कच-देवयानी** तथा **बलिनिर्वास** जैसी रचनाओं में जो संदेश हैं वे मानवतावाद के ही पोषक हैं।

सारांशतः कवि के मानवतावादी दृष्टिकोण को इन पंक्तियों में देखा जा सकता है ---

फूल काँटों पर पला करते सदा
मैं उन्हींकी वन्दना करता कि जो
मिट स्वयं जग का भला करते सदा।[1]
या --
गंध बनकर हवा में बिखर जायँ हम
ओस बनकर पँखुरियों से झर जायँ हम

---

1. 'उषा', पृ0 79
2. वही, पृ0 80
3. रूप की धूप -- गुलाब, पृ0 9

तू न देखे हमें बाग़ में भी तो क्या !
तेरा आँगन तो ख़ुशबू से भर जायँ हम।[1]

(3) गांधीवाद :

गांधीवाद का निष्कर्ष मानवतावाद ही है। अतः गुलाब जी का **आलोक-वृत्त** मानवतावाद की दृष्टि से जितना महत्त्वपूर्ण है, गांधीवाद की दृष्टि से भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है। गांधी ने अपने जीवन-दर्शन को भावात्मक समन्वय, सद्भावना, सदाचार, मानवता, आस्तिकता, सत्याचरण, शील, अहिंसा, न्याय-भावना, समत्व-दृष्टि, सत्याग्रह, प्रेम-भावना, साध्य और साधना की पवित्रता तथा करुणा से जोड़ा था। इन प्रभावों को गुलाब जी ने **उषा** में कम, **गांधी-भारती** में विशेष और **आलोक-वृत्त** में अत्यधिक व्यापक रूप से अभिव्यक्त किया है।

यथा -

(क) **सदाचार तथा उन्नत मानवीय मूल्यों के प्रति आस्था-**

धिक् मानव, जो केवल धन के लिए जिये, मर जाये
धिक् जीवन, जो अपमानों में सुख की सेज बिछाये।[2]

(ख) **सत्याचरण :-**

इसी सत्य को धारण कर प्रह्लाद आग में मुसकाया
कवच पहनकर यही कन्हैया कंस-कोप से लड़ पाया[3]

(ग) **अहिंसा :-**

जब फूलों से टकराती है, तलवार शिथिल पड़ जाती है।[4]

(घ) **सत्याग्रह :-**

सत्याग्रह के शब्दकोष में शब्द नहीं दुर्बलता का

---

1. पँखुरियाँ गुलाब की, गुलाब अर्चना-प्रकाशन, जमनालाल बजाज स्ट्रीट कलकत्ता, पृ0 7
2. आलोक-वृत्त -- गुलाब : प्रथम संस्करण 1975, प्रकाशक अर्चना 21 ए0, वी0 के0 पाल ऐवन्यू, कलकत्ता 6, पृ0 19
3. उषा, पृ0 32 4. वही, पृ0 72

पथ का हर व्यवधान बना करता सोपान सफलता का।[1]

(ड़) साध्य और साधन की पवित्रता :

साध्य से न विरोध, साधन किन्तु हो निष्पाप[2]

(5) साम्यवाद :

वस्तुतः, गुलाब जी का लेखन-कार्य उस समय प्रारम्भ हुआ जब गांधीवाद और मार्क्सवाद, दो विचारधाराओं का समसामयिक परिवेश में विशेष महत्त्व था। पंत की तरह ही गुलाब जी का जीवन-दर्शन प्रेमवाद, मानवतावाद, गांधीवाद से समृद्ध होता हुआ साम्यवाद से भी प्रभावित हुआ। अर्थ का विभाजन व्यक्तिपरक न होकर व्यक्ति की सामाजिक आवश्यकता के रूप में होना चाहिए। साम्यवाद में पूँजीवाद और महाजनवाद का विरोध अनिवार्य माना गया। सर्वहारा के शोषण और आर्थिक वैषम्य का विरोध किया गया। गुलाब जी ने **उषा** महाकाव्य में साम्यवादी विचारधारा को किरण नामक एक नारी-पात्र के द्वारा स्पष्ट किया है :--

सभी अंग समाज के सेवा सभी का ध्येय
सुख-विकास-समर्थता सबके लिए अभिप्रेय
चाहिए जितना जिसे उतना उसे हो प्राप्त
शक्ति भर सेवा, अधिक या कम नहीं पर्याप्त।[3]

या--
क्यों बने कोई किसी का भाग ले धनवान !
सृष्टि के कल्याण से ही व्यष्टि का कल्याण।[4]

साम्यवादी दर्शन के अनुसार गुलाब जी ने पूँजीवादी विचारधारा के विरोध में स्वार्थ-साधना की भी भर्त्सना की है ---

तड़प मर जायें निरौषध, दीन जन के बाल
सभ्यता वह ! अन्न को तड़पा करें कंकाल

---

1. वही, पृ0 32 2. वही, पृ0 72
3. वही पृ0 72
4. उषा, पृ0 72

भोग कर्मों का बता कर दें उन्हें हम तोष
दें बना अधिकार-हित संघर्ष करना दोष।[1]

पूँजीवादी जिस ईश्वर को जन्म, कर्म का प्रदाता, चिर-अविकार, सर्व-भोक्ता तथा सर्व-शक्तिवान मानता है, उसे साम्यवादी कार्य-कारण मूलक, अटल भौतिक नियमों के अतिरिक्त कुछ नहीं कहता :--

एक चेतन शक्ति का पीटा करो तुम ढोल
दीखता है किंतु मुझको ढोल में सब पोल।[2]
या --
'जन्म-कर्मों का प्रदाता, अगुण, चिर-अविकार
भोगता सीमा-रहित निज निरंकुश अधिकार
वही तो ईश्वर तुम्हारा ? वह हमारे हेतु
भूत-नियमों का अटल, ध्रुव, कार्य-कारण-सेतु।[3]

उषा महाकाव्य का राजीव साम्यवाद का विरोधी है, किन्तु किरण के वर्चस्व को दिखलाकर कवि गुलाब ने साम्यवादी दृष्टिकोण के प्रति अपनी युगीन आस्था व्यक्त की है।

(5) राष्ट्रीयतावाद :

गुलाब जी की रचनाओं में अभिव्यंजित उनकी राष्ट्रीय भावना अपना विशेष महत्त्व रखती है। पर, गुलाब जी की राष्ट्रीयता राजनीतिक नहीं, सांस्कृतिक है। छायावाद के प्रमुख कवि जयशंकर प्रसाद तथा सूर्यकान्त त्रिपाठी **निराला** की तरह गुलाब जी की राष्ट्रीय भावना में उद्‌बोधन तथा देश-प्रेम की भावना प्रच्छन्न है। सन् 1962 में जब चीन ने हमारी उत्तरी सीमा पर आक्रमण किया, कवि गुलाब ने **मेरे भारत, मेरे स्वदेश** नामक मुक्तक-काव्य-कृति की रचना की। राष्ट्रकवि दिनकर का काव्य **परशुराम की प्रतीक्षा** इस सन्दर्भ में स्मरणीय है। स्वयं गुलाब जी ने स्वीकार किया है -- 'आज की संकटकालीन परिस्थिति ने साहित्यकार को भी वीणा छोड़कर शंख-घोष करने को विवश कर

---

1. उषा, पृ0 72
2. वही, पृ0 73
3. वही, पृ0 73

दिया। में तो केवल इतना ही कहता हूँ कि मैंने हृदय के स्वाभाविक आवेश से प्रेरित होकर ये रचनाएँ की हैं।'[1] कवि ने चीन के इस अप्रत्याशित आक्रमण को विफल करने के लिए भारतवासियों को ललकारा --

आज हिमालय के शिखरों से स्वतंत्रता ललकारती
शीश चढ़ा दे जो स्वदेश पर, वही उतारे आरती।[2]

प्रसाद[2] की तरह पूर्वजों की गौरवशाली परम्परा यानी 'प्रशस्त पुण्य पंथ' की ओर संकेत करते हुए गुलाब जी ने देशवासियों में उमंग जगायी ---

हम अगस्त्य-सुत, सप्त सिंधुओं को पी जाते घोलकर
भौंह हमारी लीक खींच देती भूगोल-खगोल पर
बढ़ जाते हम तोपों के मुँह पर निज सीना खोलकर
दे सकते हैं रक्त हिमालय के बदले में तोलकर।[3]

या --
मुकुट नगाधिराज का, झुका तनिक सँभाल दो
बढो कि आज चीन की जमीन को उछाल दो।[4]

मेरे भारत, मेरे स्वदेश काव्यग्रंथ में 'वीर-भारती' शीर्षक से लिखे गयें 108 दोहों में गुलाब के राष्ट्रीयतावाद का विस्तृत परिचय मिलता है। इनके जीवन-दर्शन में राष्ट्रीयतावाद का महत्त्व राष्ट्रीय एकता तथा देश-भक्ति के परिप्रेक्ष्य में देखा जा सकता है।

---

1. 'उषा' -- गुलाब, पृ0 73
2. 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश', -- गुलाब खंडेलवाल, आमुख, पृ0 क
3. 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश', -- गुलाब, पृ0 6
4. वही, पृ0 8

द्वितीय खण्ड
प्रथम अध्याय

कृतित्व

यह सही है कि किसी भी कवि की काव्य-कृति का अस्तित्व स्वतन्त्र भी होता है, किन्तु वह निरपेक्ष नहीं होता है। उसका घनिष्ट सम्बन्ध कवि के मनोविकास के साथ होता है। सम्भवतः इसीलिए लक्ष्मीनारायण सुधांशु ने **जीवन के तत्त्व और काव्य के सिद्धांत** में लिखा है -- कवि के व्यक्तित्व का अन्तरंग जीवन के प्रवाह में ही निर्मित होता है। अतएव प्रत्यक्ष जगत और मनोजगत दोनों ही मिलकर काव्य-सृष्टि के कारण होते हैं। निष्कर्ष यह कि कवि की कृतियों का सही मूल्यांकन उसकी काव्य-सृष्टि के क्रम-विकास को दृष्टि में रखकर ही किया जा सकता है, अन्यथा वह मूल्यांकन अपूर्ण होगा।

कविवर गुलाब खंडेलवाल की कृतियों का क्रम-विकास[2]

कृतियाँ	रचनाकाल	प्रकाशक	प्रकाशन-तिथि
क्रम	प्रथम संस्करण कलाकुंज, छोटी पियरी, काशी सन-1941		
1. **कविता**	सन् 1939-41	वाणी मंदिर, चौक प्रतापगढ़ अवध (द्वितीय संस्करण)	सन् 1969
2. **चांदनी**	सन् 1939-43	प्रथम संस्करण कलाकुंज, गया	सन् 1945
3. **बलि-निर्वास**	सन् 1942-43	अवध प्रकाशन, प्रतापगढ़, चौक (द्वितीय संस्करण) प्रथम संस्करण, कलाकुंज, गया सन् 1945	सन् 1986

---

1. जीवन के तत्त्व और काव्य के सिद्धान्त, पृ0 10
2. गुलाब जी की रचनाओं के क्रम-विकास के साथ उनका संक्षिप्त परिचय इस अध्याय में इसलिए नहीं दिया गया है कि अलग से (स्वतन्त्र रूप में) इन सभी रचनाओं का संक्षिप्त परिचय द्वितीय अध्याय में दिया गया है। शोधकर्ता की दृष्टि में पुनरावृत्ति से बचना ही अभीष्ट है।

4. **कच-देवयानी** सन् 1945 कमल प्रकाशन, सन् 1946
शहीद रोड, गया
द्वितीय (संस्करण) 1971

5. **गांधी-भारती** सन् 1948। कलाकुंज, गया, द्वितीय संस्करण
कामता प्रकाशन, पटना-1 : सन् 1957

6. **अहल्या** सन् 1948-51 अर्चना, 55 जमना लाल बजाज स्ट्रीट
कलकत्ता-6

7. **मेरे भारत, मेरे स्वदेश** सन् 1962 : पारिजात प्रकाशन, डाक बंगला
रोड, पटना-1 : सन् 1963

8. **उषा** सन् 1946-48 अर्चना प्रकाशन, 21 ए0, वी0 के0
पाल एवेन्यू, कलकत्ता-6 : सन् 1965

9. **रूप की धूप** सन् 1960-70 अर्चना, 21 ए0, वी0 के0 पाल
एवेन्यू,कलकत्ता-6 सन् 1971
वी0 के0 पाल एवेन्यू,कलकत्ता-6

10. **सौ गुलाब खिले** सन् 1970-73 अर्चना 21, ए0, वी0 बी0 के0
(ग़ज़ल-संग्रह) पाल एवेन्यू, कलकत्ता-6 : सन् 1973

11. **आलोक-वृत्त** सन् 1969-71 अर्चना, 21 ए0, वी0 के0 पाल एवेन्यू,
कलकत्ता-6 : सन् 1975

12. **पँखुरियाँ गुलाब** की 1974-77 अर्चना, जमनालाल बजाज स्ट्रीट,
(ग़ज़ल-सग्रंह) कलकत्ता-7 : सन् 1975

13. **नूपुरबँधे चरण** सन् 1940-70 कमल प्रकाशन, चौक प्रतापगढ
(अवध) : सन् 1978

14. **राजराजेश्वर अशोक** सन् 1958 वाणी-मन्दिर, चौक पतापगढ
(गद्य-नाटक) (अवध) : सन् 1978

15. **कुछ और गुलाब** सन् 1977-79 कमल प्रकाशन चौक प्रतापगढ़
(ग़ज़ल-संग्रह) (अवध) : सन् 1979

16. **सीपी-रचित रेत** सन्1940-43 अर्चना, 55 जमनालाल बजाज स्ट्रीट,
कलकत्ता-7 : सन् 1980

17. **भूल** : प्रथम संस्करण पारिजात प्रकाशन डाक बगला रोड़ सन् 1962
सन् 1950 कमल प्रकाशन, चौक, प्रतापगढ़ (अवध)
द्वितीय संस्करण सन् 1980

18. **आयु बनी प्रस्तावना** 1948-70 कमल प्रकाशन, चौक प्रतापगढ
(अवध) प्रथम संस्करण : सन्1981

19. **शब्दों से परे** 1960-80 वाणी मन्दिर, चौक, प्रतापगढ़, प्रतापगढ़
(अवध) : सन् 1981

20. **व्यक्ति बन कर आ** सन् 1981-82 कमल प्रकाशन, चौक, प्रतापगढ़
(अवध) : सन् 1983

21. **बूँदें: जो मोती बन गयीं** सन्1981-82 वाणी मन्दिर, कचहरी
रोड प्रतापगढ़ (उ0 प्र0) सन् 1983

22. **आधुनिक कवि** सन् 1983 हिन्दी साहित्य सम्मेलन,
प्रयाग : सन् 1983

23. **हर सुबह एक ताज़ा गुलाब** -- -- (प्रकाश्य) (ग़ज़ल-संग्रह)

द्वितीय अध्याय

विधा की दृष्टि से कृतियों का वर्गीकरण एवं उनका संक्षिप्त परिचय

-- कृतियों का वर्गीकरण

-- गुलाब की कृतियों का संक्षिप्त परिचय

विधा की दृष्टि से कृतियों का वर्गीकरण

गुलाब जी मूलतः कवि हैं। छायावाद के प्रधान कवियों (प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी) की तरह इन्होंने भी प्रबंध की अपेक्षा मुक्तक-काव्यों की अधिक रचना की है। इन समस्त रचनाओं के विधागत वर्गीकरण के पूर्व संक्षेप में विधा-शिल्प का निकष अपेक्षित है।

हिन्दी में काव्य का विभाजन 'बंध' की दृष्टि से ही अधिकांश आलोचकों ने किया है। पश्चिम में अन्तःप्रेरणा के आधार पर काव्य का विभाजन किया गया है। समान्यत :, 'बंध' को ध्यान में रखकर काव्य के तीन भेद माने जाते हैं --

प्रबंध-काव्य, निबंध-काव्य, और बंधाबंध-काव्य

प्रबंध-काव्य :- प्रबंध-काव्य के तीन तत्त्व होते हैं--वस्तु-विधान, चरित्रांकन, और भाव या रस-व्यंजना। वस्तु-विधान में घटना-विकास, दृश्य-योजना, और परिस्थिति-निर्माण का उल्लेख होता है। कुछ आचार्यो ने प्रकृति-चित्रण को भी प्रबंध का एक प्रमुख अंग माना है। संक्षिप्ततः, प्रबंध-काव्य के निम्नलिखित लक्षण मान्य है।

(1) प्रबंध में कथा की अपेक्षा होती है।
(2) कथा की घटनाओं में पूर्वापर सम्बन्ध होता है।
(3) मूलकथा और प्रासंगिक कथाओं का ताल-मेल होता है।
(4) इसमें वस्तु-विधान, चरित्र-चित्रण और रस-व्यंजना की अनिवार्यता होती है।
(5) दृश्य-विधान और प्रकृति-चित्रण भी प्रबंध-काव्य के प्रमुख अवयव हैं।
(6) इसमें मानव-जीवन का एक पूर्ण दृश्य होता है।
(7) प्रबंध-काव्य में सामाजिक अथवा राष्ट्रीय कोई न कोई एक महान उद्देश्य होता है।
(8) प्रबंध-काव्य में मार्मिक परिस्थितियों की योजना रहती है।
(9) प्रबंध-काव्य में एक से अधिक रसों की व्यंजना रहती है।
(10) यह जीवन के वैविध्य को प्रस्तुत करता है तथा इसमें जीवन की प्रायः

प्रमुख अनुभूतियाँ व्यंजित होती हैं।

(11) प्रबंध के वर्णन में रचनाकार अपने काव्य-कौशल, छन्द-विधान आदि काव्यांगों का पूरा परिचय देता है।[1]

प्रबंध-सम्बन्धी मत-भिन्नताएँ और सम्मतियाँ :-

विद्वानों ने प्रायः 'प्रबंध-काव्य' से महाकाव्य का ही बोध किया है। यह उनके द्वारा प्रबध-काव्य के दिये गये लक्षणों से सिद्ध होता है। पंडित रामचन्द्र शुक्ल ने **जायसी ग्रन्थावली** की भूमिका में 'प्रबंध-काव्य' शब्द का प्रयोग सर्वत्र महाकाव्य के ही अर्थ में किया है। उन्होने प्रबंध-काव्य को मानव-जीवन का पूर्ण दृश्य माना है 'प्रबंध-काव्य में मानव-जीवन का एक पूर्ण दृश्य होता है।'[2]

हिन्दी-साहित्य-कोश में प्रबंध के जो लक्षण दिये गये हैं, वे भी उसे महाकाव्य ही ठहराते हैं।[3]

डॉ0 नागेन्द्र ने भी **भारतीय काव्य-शास्त्र की भूमिका** में इसी आशय की पुष्टि की है -- 'प्रबंध-काव्य में जीवन का सर्वांग-विस्तार तथा संपूर्ण अभिव्यक्ति रहती है। इसीलिए आनन्द के अतिरिक्त काव्य के अन्य महत्त्वपूर्ण उद्देश्य 'पुरुषार्थ चतुष्टय' की प्राप्ति का साधन प्रबंधकाव्य अधिक है। इस प्रकार काव्य के ऐहिक और आमुष्मिक दोनों सिद्धांतो का माध्यम होने के कारण प्रबंध-काव्य भारतीय काव्य-शास्त्र में मूर्धन्य पद पर शोभित रहा है।'[4]

लेकिन इतना होने पर भी यह नहीं कहा जा सकता कि प्रबंध-काव्य महाकाव्य के लिए रूढ़ हो गया है। अतः प्रबंध-काव्य के शाब्दिक अर्थ को

---

1. छायावादोत्तर प्रबंधकाव्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन--पटना विश्वविद्यालय से स्वीकृत शोध-प्रबंध (1974), डॉ0 दीनानाथ सिंह पृ0 106
2. जायसी-ग्रंथावली (भूमिका): आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ0 66-67, प्रथम संस्करण, संवत् 2008
3. 'हिन्दी साहित्यकोश' : डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा, सम्पादक : पृ0 478-479
4. भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका, डॉ0 नागेन्द्र, पृ0 290, प्रथम सस्करण 1955 ई0

ध्यान में रखते हुए इसके अन्तर्गत महाकाव्य, खंडकाव्य और एकार्थकाव्य तीनों हैं।

महाकाव्य :

प्राचीन लक्षण ग्रंथों में महाकाव्य के लिए 'सर्गबन्ध' शब्द का प्रयोग हुआ है। इसमें कवि जीवन के संपूर्ण अंगों का सर्गबद्ध वर्णन करता है जिससे एक व्यापक आदर्श और युग के लिए नवीन संदेश की अभिव्यक्ति होती है। आचार्य भामह (काव्यालंकार), आचार्य दण्डी (काव्यादर्श) आचार्य रुद्रट (काव्यालंकार), आचार्य हेमचन्द्र (काव्यानुशासन) के बाद संस्कृत काव्यशास्त्र की आचार्य-परम्परा में महाकाव्य-सम्बंधी प्रायः अन्तिम लक्षण आचार्य विश्वनाथ का माना जाता है। इन्होंने महाकाव्य के लक्षणों में पूर्ववर्त्ती सभी आचार्यो के लक्षणों को समेट लिया है ---

(1) सर्गों का निबन्ध ही महाकाव्य है।
(2) इसमें एक देवता अथवा सद्वंश क्षत्रिय, जिसमें धीरोदात्त आदि गुण हों, नायक होता है। कहीं पर एक सत् वंश के कुलीन अनेक भूप भी नायक होते हैं।
(3) श्रृंगार, वीर, शान्त में से कोई एक रस प्रधान होता है, अन्य रस गौण होते हैं।
(4) महाकाव्य में सभी नाटक-सन्धियाँ रहती हैं।
(5) कथा ऐतिहासिक या लोक में प्रसिद्ध सज्जन संबंधी होती है।
(6) धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष -- इस चतुर्वर्ग में से एक उसका फल होता है।
(7) प्रारम्भ में आशीर्वाद, नमस्कार, या वर्ण्य-वस्तु का निर्देश होता है।
(8) इसमें न तो बहुत ही छोटे, न बहुत ही बड़े आठ से अधिक सर्ग होते हैं।
(9) प्रत्येक सर्ग में एक ही प्रकार का छंद होता है, किन्तु सर्गान्त में छन्द का परिवर्तन होता है।
(10) सर्गान्त में अग्रिम कथा की सूचना रहती है।
(11) इसमें संध्या, सूर्य, चन्द्रमा, रात्रि, प्रदीप, अंधकार, दिन, प्रातःकाल, मध्याह्न, मृगया, पर्वत, ऋतु, वन, समुद्र, संयोग, मुनि, स्वर्ग, नरक, यज्ञ, संग्राम, यात्रा, विवाह, मंत्र, पुत्र तथा अभ्युदय आदि

का यथासम्भव सांगोपांग वर्णन होता है।

(12) महाकाव्य का नामकरण कवि के नाम से या चरित्र के नाम से अथवा नायक के नाम से होता है।

(13) इसमें प्राकृत तथा अपभ्रंश का भी उल्लेख होता है।

(14) महाकाव्य जिस भाषा में प्रारम्भ हो, उसका अन्त भी उसी भाषा में होना चाहिए।[1]

अंग्रेजी का एपिक (Epic) जिन अर्थों में प्रयुक्त होता है, उन्हीं अर्थो में हिन्दी का महाकाव्य शब्द प्रयुक्त होता है। 'एपिक' कहते ही जिस प्रकार पश्चिमी पाठक के समक्ष प्रथम 'होमर और वंर्जिल' की जैसी कृतियाँ सामने आती हैं उसी तरह हिंदी महाकाव्य कहते ही **रामायण** और **महाभारत** जैसी कृतियाँ सामने आती हैं। पर इन दिनों भारतीय और पाश्चात्य काव्यशास्त्रियों में लक्षणोन्मुख महाकाव्य (शास्त्रसम्मत महाकाव्य) की जगह विकासोन्मुख तथा प्रयोगोन्मुख महाकाव्य ही अधिक उल्लेखनीय हैं। आज के महाकाव्य बदलते हुए समय के जीवन-मूल्यों को ही प्रस्तुत करते हैं। कथानक, चरित्र, तथा भाषा-सम्बन्धी रूढ़ लक्षण टूट गये हैं और आज के महाकाव्यों में नये पात्र, नया कथानक और नये भाव स्पष्टतः दिशान्तर पैदा कर चुके हैं। अतएव आज पंत का **लोकायतन**, दिनकर का **कुरुक्षेत्र** भी महाकाव्य कहलाते हैं, और गुलाब जी का **उषा** भी महाकाव्य माना जाता है।

खण्डकाव्य :

1- 'साहित्य-दर्पण' , आचार्य विश्वनाथ, षष्ठ परिच्छेद, श्लोक संख्या 315 से 328 (का हिन्दी अनुवाद) चौखम्भा विद्या भवन, वाराणसी, सन् 1957।
साहित्य-दर्पण के श्लोक ---

'सर्गबन्धो महाकाव्यं तत्रैको नायक : सुर : ।। 315
सद्वंशः क्षत्रियो वापि धीरोदात्त गुणान्वित :।
एकवंश भवा भूपाः कुलजा बहवोपि वा।। 316
श्रृंगारवीरशान्तानामेकोंगी रस इष्यते।
अंगानि सर्वेऽपि रसा : सर्वे नाटकसंधय : ।। 317 ।।
इतिहासोद्भवं वृत्तमन्यद्वा सज्जनाश्रयम्।
चत्वारस्तस्य वर्गा : स्युस्तेष्वेकं च फलं भवेत् ।। 318 ।।

'महाकाव्य और खण्डकाव्य में तात्त्विक अन्तर नहीं है, दोनों में मात्रा का भेद है, प्रकार का नहीं।'[1] ऐसी ही बात डॉ0 शकुन्तला दूबे भी कहती हैं -- वास्तव में देखा जाय तो महाकाव्य में जब कवि की अनुभूति प्रतिभा के सहारे अपनी उच्चतम अवस्था को पहुँच जाती है, तब उसमें जीवन की सर्वांग पूर्णता के अनुरूप सर्वविध महत्ता आ जाती है। किन्तु खण्डकाव्य में कवि की अनुभूति उस विश्व-कल्पना की चोटी पर नहीं पहुँच पाती । उसमें जीवन का एक ही खण्ड लिया जाता है, किन्तु वह खण्ड अपने में स्वत : पूर्ण होता है।'[2]

आदौ नमस्क्रियाशीर्वा वस्तुनिर्देश एव वा।
क्वचिन्निन्दा खलादीनां सतां च गुणकीर्तनम् ।। 319 ।।
एकवृत्तमयैः पद्यैरवसानेऽन्यवृत्तकैः।
नातिस्वल्पा नातिदीर्घाः सर्गा अष्टाधिका इह ।। 320 ।।
नानावृत्तमयः क्वापि सर्गः कश्चन दृश्यते।
सर्गान्ते भाविसर्गस्य कथायाः सूचनं भवेत् ।। 321 ।।
संध्यासूर्येन्दुरजनी प्रदोषध्वान्तवासराः।
प्रातर्मध्याह्नमृगयाशैलर्तुवनसागराः ।। 322 ।।
संभोगविप्रलम्भौ च मुनिस्वर्गपुराध्वराः।
रणप्रयाणोपयममन्त्रपुत्रोंदयादयः ।। 323 ।।
वर्णनीया यथायोगं सांगोपांगा अमीइह।
कवेर्वृत्तस्य वा नाम्ना नायकस्येतरस्य वा ।। 324 ।।
नामास्य, सर्गोपादेयकथया सर्गनाम तु।
अस्मिन्नार्षे पुनः सर्गा भवन्त्याख्यानसंज्ञकाः ।। 325 ।।
प्राकृतैर्निर्मिते तस्मिन्सर्गा आश्वाससंज्ञकाः।
छन्दसा स्कन्धकेनैतत्क्वचिद् गलितकैरपि ।। 326 ।।
अपभ्रंशनिबद्धेऽस्मिन्सर्गाः कुडवकाभिधाः।
तथापभ्रंशयोग्यानि च्छन्दांसि विविधान्यपि ।। 327 ।।
भाषाविभाषानियमात्काव्यं सर्ग समुत्थितम्।
एकार्थ प्रवणैः पवद्यैः संधिसामग्रयवर्जितम् ।। 328 ।।'

2. हिन्दी के मध्यकालीन खंडकाव्य डॉ0 सियाराम तिवारी, पृ0 36, हिन्दी साहित्य-संसार, दिल्ली 6, पटना 4 प्रथम संस्करण 1964 ई0।
3. काव्यरूपों के मूल-स्रोत और उनका विकास डॉ0 शकुन्तला दूबे, पृ0 144 -145, हिन्दी-प्रचारक पुस्तकालय वाराणसी-2, प्रथम संस्करण, 1958 ई0।

खण्डकाव्य के प्रसिद्ध लक्षण इस प्रकार हैं --

(1) खण्डकाव्य का नायक सुर-असुर, मनुष्य, इतिहास-प्रसिद्ध अथवा कल्पित में से किसी भी प्रकार का हो सकता है।

(2) खण्डकाव्य में नायक के जीवन की एक ही घटना वर्णित होती है।

(3) इसमें कथा-संगठन आवश्यक है।

(4) सर्गवद्धता अनिवार्य नहीं है।

(5) खण्डकाव्य की कथा का ख्यात अथवा इतिहास-प्रसिद्ध होना अनिवार्य नहीं है।

(6) इसमें प्रासंगिक कथाओं का अभाव होता है।

(7) खण्ड काव्य अपने छोटे आकार में भी पूर्ण होता है। 'खण्ड' शब्द से उसे किसी अन्य काव्य-रूप का खण्ड नहीं समझना चाहिए।

(8) खण्ड काव्य में एक रस समग्र अथवा अनेक रस असमग्र रूप में रहते हैं।

(9) इसके कथानक में सभी सन्धियाँ होती हैं।

(10) इसकी रचना भाषा अथवा विभाषा में हो सकती है।

महाकाव्य की तरह ही खण्डकाव्य के शास्त्रीय लक्षणों में अनेकानेक परिवर्तन हुए हैं। वस्तुतः आज के खण्डकाव्यों में कालानुसरण की क्षमता है। जहाँ दिनकर की **रश्मि-रथी** भी खण्ड काव्य है, वहाँ निराला का **तुलसीदास,** धर्मवीर भारती का **कनुप्रिया,** मैथिलीशरण गुप्त का **विष्णु-प्रिया** आदि भी सर्गविहीन प्रयोगशील खण्ड-काव्य हैं।

एकार्थ-काव्य :

'हिन्दी में कुछ ऐसी रचनाएँ हुई हैं जिनमें जीवन-वृत्त तो पूर्ण लिया गया है पर, महाकाव्य की भांति वस्तुविस्तार नहीं दिखायी पड़ता है। ऐसी रचनाओं में जीवन का ही कोई पक्ष विस्तार से प्रदर्शित किया जाता है। इन्हें एकार्थ काव्य कहना उपयुक्त होगा। **प्रिय-प्रवास, साकेत, वैदेही-वनवास, कामायनी,** आदि उसी प्रकार की रचनाएँ हैं।'[1] **साहित्य-दर्पण** में भी एकार्थ काव्य की चर्चा मिलती है --

---

1. समीक्षाशस्त्र, डॉ0 दशरथ ओझा, पृ0 45

(क) भाषा या विभाषा में इसकी रचना होती है।

(ख) इसकी कथा सर्गबद्ध होती है।

(ग) पंच सन्धियों में से सब नहीं होती हैं।

(घ) कोई एक अर्थ अथवा प्रयोजन की सिद्धि उसका उद्देश्य होता है।[1] 'इससे यह नहीं समझना चाहिए कि इसमें खण्डकाव्य की तरह नायक का खण्ड जीवन ही अंकित हो पाता है, बल्कि उसमें समाविष्ट जीवन अपने पूर्ण रूप में पूर्ण जीवन ही होता है।'[2]

निर्बध-काव्य (मुक्तक-काव्य) :

'निर्बध' या 'अबंध' तथा 'मुक्तक' समानार्थी हैं। इसमें किसी कथा का न तो आग्रह ही रहता है और न उसके द्वारा किसी प्रकार का 'बंध' ही खड़ा किया जाता है। इसमें प्रत्येक पद्य की इकाई स्वतंत्र होती है जो अपने में पूर्णार्थ देने की शक्ति रखती हैं। 'अबंध काव्य की विशेषता इस कारण होती है कि उसमें जीवन का सहारा लेकर दृश्य-विधान या भाव-व्यंजना तो की जाती है, परन्तु कोई वृत्त लेकर उसका विस्तृत वर्णन कवि नहीं करता है। यही कारण है कि अबंध काव्य वर्णनात्मक न होकर भावात्मक या आत्माभिव्यंजक होते हैं।'[3]

मुक्तक-काव्य में 'पूर्वापर' सम्बन्ध एकदम अपेक्षित नहीं है, लेकिन सीमित घेरे में कवि ऐसा चमत्कार उत्पन्न करता है, जिसका प्रभाव पाठकों पर पड़ता है। कोई भी पाठक मुक्तक-काव्य के किसी प्रसंग को उठाकर पढ़ सकता है और पूर्ण रसानुभूति का आस्वादन कर सकता हैं। अबंध-काव्य या मुक्तक-काव्य के जिस अंश में अधिक भावात्मकता या रसात्मकता होती है, उसे 'गीतिकाव्य' की संज्ञा दी जाती है तथा जिसमें कवि भाव की जगह कलात्मक चमत्कार उत्पन्न करता है तथा जिसके द्वारा किसी वस्तु को प्रकट करता है

---

1. साहित्य-दर्पण, आचार्य विश्वनाथ पृ0 108
2. हिंदी के मध्यकालीन खण्डकाव्य-- डॉ0 सियाराम तिवारी, पृ0 40-41
3. काव्यरूपों के मूल स्रोत और उनका विकास -- डॉ0 शकुन्तला दूबे, पृ0 39

जिससे कवि की शास्त्रीयता ही अधिक व्यंजित होती है, उसे मुक्तक कहते हैं। अतः सुविधा की दृष्टि से अबंध के दो भेद किये गये हैं -- (क) गीतिकाव्य (ख) मुक्तक-काव्य। वृन्द के दोहे, गोस्वामी तुलसीदास की **दोहावली**, तथा **बिहारी सतसई** के दोहे मुक्तक के उदाहरण हैं। विद्यापति की पदावलियाँ, सूर के पद, तथा मीरा के पद गीतिकाव्य के उदाहरण हैं।

बन्धाबन्ध-काव्य :

इस प्रकार के काव्यरूप में 'प्रबन्ध' और 'मुक्तक' दोनों का मिश्रण रहता है। फिर भी इसमें न तो प्रबंध की तरह शास्त्रीय बंधन ही रहता हैं और न अबंधकाव्य की तरह पूर्ण मुक्तता ही रहती है; बल्कि प्रबंध की एकसूत्रता, श्रृंखलाबद्धता, और 'अबंध' की रसात्मकता आदि मिलकर एक 'मिश्रकाव्य' जैसी विधा को जन्म देती हैं। बन्धाबन्ध काव्य में नाटक के तत्त्वों की विशेष प्रधानता रहती है। संवाद-योजना, दृश्य-विधान, स्वगत-कथन आदि नाटकीय तत्त्व विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। वस्तुतः नाटकीयता कवि की आत्माभिव्यंजना, अनुभूति और कथातत्त्व के कारण इसके नाट्यात्मक, स्वानुभूति-प्रधान तथा आख्यान-प्रधान[1], तीन रूप देखने को मिलते हैं।

काव्य-तालिका

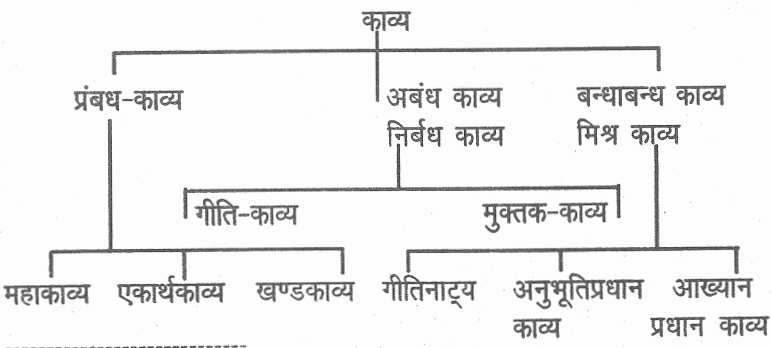

(क) इसे 'निर्बध-काव्य' भी कहा जाता है। निबंध-काव्य उस काव्यरूप का अभिधेय है जो विषय अथवा आख्यान का वस्तुपरिबन्ध स्वीकार करता है, पर जिसे प्रबध-काव्य की संज्ञा नहीं दी जा सकती।' -- मैथिलीशरण गुप्त व्यक्ति और काव्य -- डॉ0 कमलाकान्त पाठक, पृ0 250।

ऊपर वर्णित काव्य-शिल्प की दृष्टि से विवेचन करने पर कवि गुलाब की रचनाओं में वैविध्य मिलता है। इन्होंने काव्य-विधा के अनेकानेक प्रयोग किये हैं। इस दृष्टि से इनकी कृतियाँ मुख्यतः प्रबंध, मुक्तक, काव्यरूपक के अतिरिक्त ग़ज़ल आदि के अन्तर्गत स्थान ग्रहण करती हैं। इनकी काव्य-कृतियों का क्रम-विकास कवि की उत्तरोत्तर समृद्ध होती हुई काव्य-क्षमता का परिचायक है। **कविता** (सन् 1941) इनकी प्रथम रचना है और **बूंदें : जो मोती बन गयीं** इनकी सद्यः प्रकाशित पुस्तक है। इस तरह गुलाब जी का रचनाकाल पूरे चार दशकों का है। इस अवधि में गुलाब जी ने काव्य-साहित्य के जो विविध स्वरूप प्रस्तुत किये हैं, उनकी तालिका द्रष्टव्य है ---

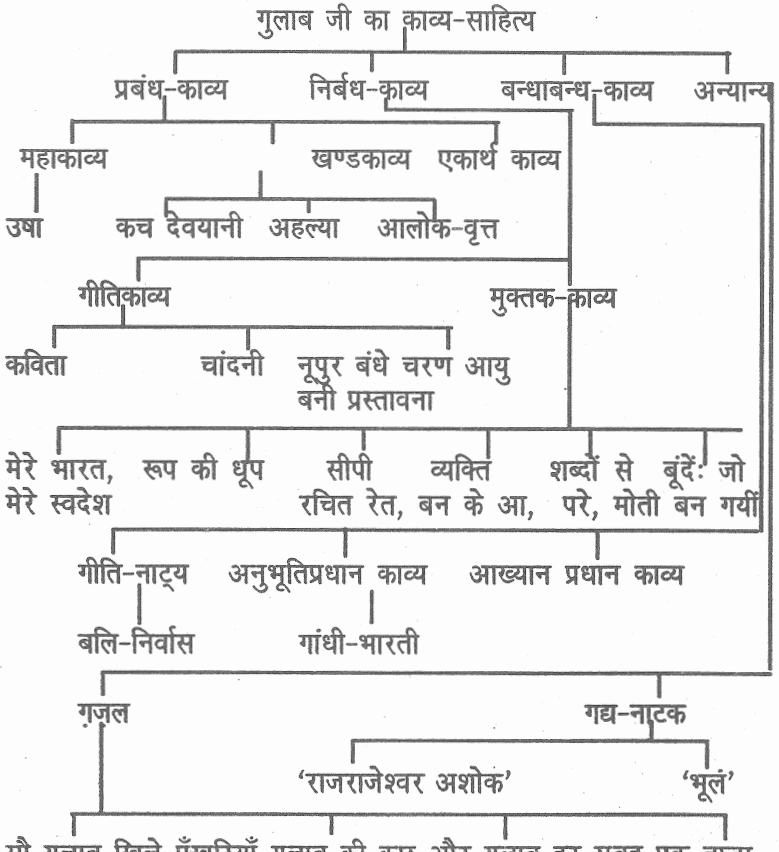

(प्रकाश्य)

गुलाब के प्रबधों का कथानक की दृष्टि से वर्गीकरण

(1) प्रबंधकाव्य के कथानक का महत्त्व और स्वरूप :

प्रबंधकाव्य की प्रबंधात्मकता कथानक के सभी उपकरणों से गठित होती है। इसलिए प्रबंधकाव्य में कथानक की घटनाओं के पूर्वापर सम्बन्ध की अनिवार्यता बतलायी गयी हैं। कथानक के उपकरणों में घटनाएँ, सर्गबद्धता, नाटक की सभी सन्धियाँ एवं इनकी सुश्रृंखलाबद्धता आदि प्रमुख हैं। वस्तुतः काव्य के चरित्र भी कथानक-प्रवाह को ही लेकर चलते हैं अथवा कथानक-प्रवाह में ही उनका चरित्रांकन होता है। इस तरह कथानक का प्रमुख सम्बन्ध प्रबंध के विषय से रहता है। विषय की रोचकता, मार्मिकता, नवीनता एवं व्यापकता के कारण ही प्रबंधकाव्य का कथानक रोचक, मार्मिक एवं प्रभावपूर्ण होता है। कथानक निश्चित रूप से, प्रबंधकाव्य का प्रमुख तत्त्व है। इसीकी आधारशिला पर महाकाव्य आदि प्रबंध रचनाओं को खड़ा किया जाता है। 'उसके अभाव में न चरित्रों का विकास संभव है, न पाठकों की उत्सुकता जाग्रत रह सकती है।'[1] अतः प्रबंध-काव्य (महाकाव्य तथा खण्ड-काव्य) के लिए कथानक अनिवार्य है। प्राचीन लक्षणकारों ने इसीलिए महाकाव्य के लक्षणों में इसकी अपरिहार्य आवश्यकता बतलायी है। आचार्य भामह ने महाकाव्य के लिए 'व्याख्यारहित सुगठित कथानक' की बात कही है। आचार्य दण्डी ने कथानक के महत्त्व को स्वीकारते हुए उसे ऐतिहासिक (प्रख्यात) अथवा सदाश्रय होना बतलाया है। इन दोनों के अतिरिक्त आचार्य रुद्रट ने 'अनुत्पाद्य कथानक' के साथ 'अवान्तर कथाओं' का होना भी महाकाव्य के लिए आवश्यक माना है। अतएव लक्षणकारों के अनुसार कथानक ऐतिहासिक, काल्पनिक तथा सदाश्रित (सद्वृत्त पर आधारित) तो होते ही हैं, उनमें अवान्तर अथवा प्रासंगिक कथाओं की भी धारा प्रवाहित होती है। इस दृष्टि से कथानक के दो

(ख) निर्बंध-काव्य वह काव्यरूप है जो आकार में लघु अथवा वृहत् हो सकता है, जो आख्यानक अथवा निराख्यानक हो सकता है तथा रचना-पद्धति की दृष्टि से विवरणात्मक अथवा वर्णनात्मक हो सकता है।' -- वही, पृ0 251

1. आधुनिक हिन्दी-महाकाव्यों का शिल्प-विधान' : डॉ0 श्यामनन्दन किशोर, पृ0 112, सरस्वती पुस्तक-सदन, आगरा, 1963 ई0

भेद हो जाते हैं -- (क) आधिकारिक कथा और (ख) प्रासंगिक कथा। मूल कथा को आधिकारिक और गौण कथावस्तु को प्रासंगिक कथा कहते है। नायक के साथ जिसका सम्बन्ध सीधा रहता है, उसे आधिकारिक कथा कहते हैं; क्योंकि महाकाव्य के फल को भोगनेवाला अथवा स्वामित्व-अधिकार को प्राप्त करनेवाला पात्र ही अधिकारी (नायक) कहलाता है। मुख्य कथावस्तु की सौन्दर्य-वृद्धि एवं व्यापार-विकास में सहायता देनेवाली कथावस्तु गौण या प्रासंगिक कथावस्तु कहलाती है। प्रासंगिक कथावस्तु भी दो प्रकार की होती है ---

(1) पताका और (2) प्रकरी। जब कथावस्तु बराबर चलती रहती है, तब उसे पताका कहते हैं, लेकिन जब थोड़े समय तक चलकर समाप्त हो जाती है, तब उसे प्रकरी कहते हैं। **रामचरित मानस** में राम का चरित्र-विधान आधिकारिक कथावस्तु के अन्तर्गत है और सुग्रीव का चरित्र प्रासंगिक कथावस्तु के साथ सम्बद्ध है। पुनः इसी सुग्रीव के चरित्र और कथा 'प्रकरी' के उदाहरण हैं। अत : वस्तुभेद को निम्न लिखित तालिका के द्वारा समझा जा सकता है--

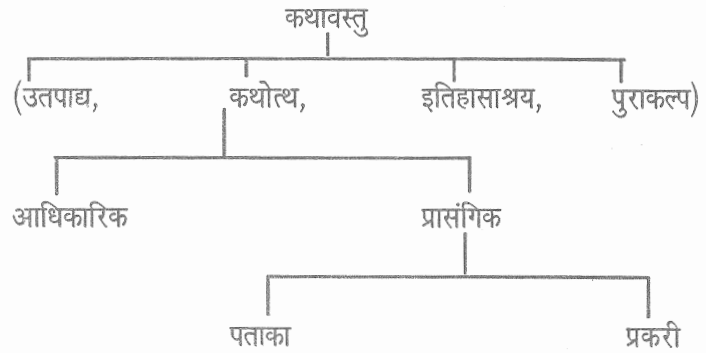

प्राचीन लक्षणकारों ने महाकाव्य के कथानक में नाटक की सभी संधियों की श्रृंखलाबद्धता बतलायी है। लेकिन 'अर्थ-प्रकृति' और 'अवस्था' का उल्लेख नहीं किया है।[1] सच तो यह है कि लक्षणकारों ने नाटक की सन्धियों की चर्चा करके 'कार्य-व्यापार-अवस्था' और 'अर्थ-प्रकृति' को भी समेट लिया है, क्योकि अवस्थाओं की अर्थप्रकृति के रूप में संयोग से विस्तारी कथानक के

1- भारतीय नाट्यशास्त्र के अनुसार 'वस्तु-विन्यास' अथवा 'कथावस्तु' से सम्बन्धित तीन बातें विचारणीय हैं -- (क) अर्थ-प्रकृति (ख) अवस्था (ग) संधि।

पाँच भेद (मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श, और निर्वहण) ही, 'पंच संधि' कहलाते हैं। निम्नलिखित तालिका बनाकर इस कथन को स्पष्ट किया जा सकता है :--

कार्य-व्यापार-अवस्था[1] ,		अर्थप्रकृति	संधि
1.	आरम्भ +	बीज	= मुख
2.	प्रयत्न +	बिन्दु	= प्रतिमुख
3.	प्राप्त्याशा +	पताका	= गर्भ
4.	नियताप्ति +	प्रकरी	= विमर्श
5.	फलागम +	कार्य	= निर्वहण (उपसंहति)

वस्तुतः नाटकीय सुगठित कथावस्तु की ऐसी व्यापकता महाकाव्य के कथानक में ही देखी जा सकती है। महाकाव्य की कथा जीवन के संपूर्ण चित्र को उपस्थित करती है, अतः 'महत्' शब्द की सार्थकता उसके साथ है। खण्डकाव्य जीवन की एक दिशा को लेकर चलता है, इसलिए उसका कथानक अवान्तर या प्रासंगिक कथाओं का आग्रह नहीं रखता है। परन्तु महाकाव्य और खण्डकाव्य दोनों के लिए कथानक अत्यन्त ही अनिवार्य है। यह दूसरी बात है कि आज के प्रबंधों में कथानक की विशालता और व्यापकता को बहुत महत्त्व नहीं दिया गया है, अपितु प्रतीकों और घटनाओं के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण आदि के द्वारा कथानक को संक्षिप्त और सूक्ष्म बना दिया गया है। कथानक की स्थूल इतिवृत्तात्मकता की जगह सूक्ष्म प्रतीकात्मकता एवं मनोवैज्ञानिकता आ गयी है। इससे कथानक अधिक जीवन्त और प्रभावपूर्ण हो गया है। इसके बावजूद हर हालत में सूक्ष्म अथवा स्थूल कथानक का रहना आवश्यक ही है।

(2) कथानक के स्रोत :

यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है कि कवि अपनी प्रबंध-रचना का कथानक कहाँ से लेता है। वस्तुतः इसके लिए कोई नियम निर्धारित नहीं है। लक्षणकारों (पुराने लक्षणकारों) ने कथानक के सम्बन्ध में प्रख्यात, उत्पाद्य और सद्वृत्त पर आधारित मात्र कहा है। अतः 'कथावस्तु

---

1. पाश्चात्य विद्वानों ने अवस्थाओं को क्रमशः 1. प्रारम्भ (Initial action) 2. विकास (Rising action) 3. चरमसीमा (Climax) 4. उतार या निर्गत (Falling action) 5. समापन को (Catastrophe) कहा है।

क्या रखी जाय, इसके लिए कोई नियम निधार्रित नहीं किया जा सकता। इतिहास-पुराण, कथा-आख्यायिका, प्राचीन महाकाव्य, समसामयिक घटनायें और ख्यात, यहाँ तक कि विशुद्ध कल्पना से भी कथा का चुनाव और निर्माण किया जा सकता है। आज के युग की प्रवृत्ति अतीतोन्मुखी नहीं है, वर्तमान और भविष्य की ओर ही आज के समाज की आखें रहती हैं। अतः महाकाव्य की कथावस्तु वर्तमान जीवन से सम्बन्धित भी हो सकती है।[1] डॉ0 शम्भुनाथ सिंह के इस मत को स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं है कि आज के प्रबंधकाव्य वर्तमान जीवन से सम्बन्धित होते हैं। प्रबंधकाव्यों के विश्लेषण से पता चलता है कि इनमें पौराणिक, ऐतिहासिक एवं काल्पनिक कथानकों की ही प्रधानता है। गुलाब जी के अधिकांश प्रबंध पौराणिक अथवा ऐतिहासिक वृत्त पर ही आधारित हैं। इसके मूलतः दो कारण हैं। पहला कारण यह है कि 'प्राचीन कथानकों को आधुनिक युग के महाकवियों ने भी स्वीकारा है, क्योकि इनसे उन्हें पाठकों के संस्कार को जाग्रत करने और रसोद्रेक के लिए पृष्ठभूमि तैयार करने में सुविधा मिलती है।'[2] दूसरा कारण यह है कि आज के जीवन-मूल्यों को प्राचीन आदर्शों और जीवन-मूल्यों के साथ विश्लेषित करना है। प्राचीन आदर्शों की रूढिवादिता आदि तत्त्व आधुनिक प्रबन्धों में विशेष निषेध के साथ उपस्थित किये गए हैं। प्राचीन कथानकों को आधुनिक युग के महाकवियों ने भी स्वीकारा है। लेकिन आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों में कथानक-सम्बन्धी प्राचीन धारणाओं में अनेक परिवर्तन हुए हैं। आधुनिक बुद्धिवाद ने अनेक मान्यताओं को खंडित कर दिया है। ज्ञान-विज्ञान के नवीन आलोक को कथानक की जीर्ण परम्पराएँ सह न सकीं, ढह गयीं। साथ ही, आधुनिक काल के महाकाव्यों के लिए कथा-द्रव्य उस सीमा तक स्वीकार नहीं किया गया जिस सीमा तक उसकी आवश्यकता प्राचीन महाकाव्यों में मानी गयी। ऐसे भी महाकाव्य लिखे गये हैं जिनमें कथानक की मांसलता न रहकर विचारों, चिन्तनों और मनोवैज्ञानिक चित्रणों का प्राधान्य है। युग बदलता गया और आज व्यस्त समाज के अनुकूल छोटे आकार के भी महाकाव्य लिखे जाने लगे।'[3]

---

1. 'हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप-विकास', डॉ शम्भुनाथसिंह, पृ0 112 हिन्दी-प्रचारक-पुस्तकालय, वाराणसी, द्वितीय संस्करण -- 1962 ई0
2. 'आधुनिक हिन्दी-महाकाव्यों का शिल्प-विधान', डॉ0 श्यामनन्दन किशोर, पृ0 120
3. 'आधुनिक हिन्दी-महाकाव्य का स्वरूप-विकास', डॉ0 शम्भुनाथ सिंह, 120-121

निष्कर्षतः, प्रबंधो के कथानक-स्रोत को कई श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है।

प्रबंधकाव्यों के कथानक की श्रेणियाँ

प्रबंध-कवियों के कथानक को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है।

(क) पुराणों के ख्यातवृत्त पर आधारित कथानक।
(ख) इतिहास के महत्त्वपूर्ण चरित्र और घटनाओं पर आधारित कथानक।
(ग) विशुद्ध कवि कल्पना से उत्पन्न कथानक।

पुराण :

पौराणिक कथानकों की व्यापकता के अन्तर्गत **श्रीमद्भागवत् , रामायण** और **महाभारत** के पात्रों और घटनाओं पर आधारित कथानक आ जाते हैं। वस्तुतः शास्त्र जिस तत्त्व का प्रतिपादन करते हैं, पुराण उसके लीला-रूपान्तर हैं। इस लीला-रूपान्तरण के दो रूप हो सकते हैं -- (1) तत्त्व या तो अपने को अभिव्यक्त करेगा अथवा अवतरित होगा। (2) नायक या पात्र अपने आन्तरिक दिव्य भाव को अक्षुण्ण रखते हुए भी प्राकृत गुण धारण करते हैं, लेकिन उनका मूल्य प्रतीकपात्रों का होता है। ऐसे दिव्य पात्रों के अतिरिक्त, पौराणिक कथानक से सम्बद्ध गौण पात्रों को लेकर भी प्रबंध की रचना हुई है। चूंकि ये गौण पात्र पौराणिक कथा के ही सहायक अंग हैं, अतः इन्हें पौराणिक प्रबंध के पात्र के रूप में ही माना जायगा। यह सही है कि पौराणिक कथानकों को गुलाब जी ने आज के युग के परिवेश में देखने और विश्लेषण करने की कोशिश की है। इन्होंने पुराने जीवन-मूल्यों और आदर्शों की नवीन और मनोवैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत की है, पौराणिक कथा के प्रासंगिक अवतरण या गौण पात्र को अपनी निजता में काव्य की गरिमा देकर उनका वैशिष्ट्य बतलाया है।

इतिहास :

इतिहास का सम्बन्ध पात्रों के अतीत (व्यतीत) की घटनाओं से होता है। अतः ऐतिहासिक कथानक में होनेवाली घटनाओं को पूर्ववर्ती तथा परवर्ती सामाजिक शक्तियों के कार्य-कारण के रूप में जाना जा सकता हैं। इतिहास की

घटनाओं में कवि कल्पना-तत्त्व के माध्यम से सरलता तथा रसोद्रेक की स्थिति लाता है। यही कारण है कि इतिहास और ऐतिहासिक काव्य में बहुत बड़ा अन्तर हो जाता है। 'इतिहासकार काव्यकार की भाँति घटनाओं की तह में घुसकर उनका विश्लेषण नहीं करता, केवल ब्योरेवार घटनाओं का ब्योरा देना चाहता है। उसके फल और परिणति से उसका कोई सम्बन्ध नहीं होता। इसका तात्पर्य यह है कि साहित्य में जो सत्य, शिव और सुन्दर की योजना होती है, उसका इतिहास में अभाव होता है, परन्तु मानव मन की बाह्य क्रियाओं की अपेक्षा उसकी आन्तरिक क्रियाएँ अधिक सत्य होती हैं। काव्य इसी सत्य का प्रतिपादन करता है।'[1] ऐतिहासिक प्रबन्धों में इतिहास और कल्पना का सुन्दर समन्वय होता है। ऐसे प्रबंधों के कथानक इतिहास से लिऐ जाते हैं, लेकिन कवि इतिहास को दुहराता नहीं है। वस्तुतः कवि अपनी कल्पना से ऐतिहासिक पात्रों एवं घटनाओं को रसोद्रेक के अनुकूल बनाकर उनके द्वारा वर्तमान और भविष्य की सामग्री तैयार करता है। इतिहास का अतीत, निश्चित रूप से, ऐतिहासिक प्रबंधों में वर्तमान का प्रेरक और भविष्य का निर्देशक बन जाता है। निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि ऐतिहासिक प्रबंधकाव्यों में ऐतिहासिक तत्त्व और कल्पना-तत्त्व दोनों मिले होते हैं।

पौराणिक और ऐतिहासिक कथानक की तुलना :

काल, पात्र और क्रियान्वयन के सन्दर्भ में पौराणिक और ऐतिहासिक प्रबंधों के कथानक ख्यातवृत्त होते हैं, लेकिन जहाँ इतिहास की कथावस्तु कालक्रम की निश्चितता से पूर्ण रहती है, पुराण के कथानक शास्त्र-सम्मत या सदाश्रित होते हैं। वस्तुतः पुराणों का कोई निश्चित इतिहास नहीं है। पौराणिक गाथाओं की मान्यता यह भी है कि दिव्य दृष्टि-सम्पन्न साधकों द्वारा भक्ति की पराभूमि में उन घटनाओं का साक्षात्कार या रसास्वादन होता रहता हैं। ऐतिहासिक घटनाओं की ऐसी पुनरावृत्ति सम्भव नहीं है। ऐसा तभी सम्भव होगा जब विज्ञान काल-श्रृंखला के साथ हस्तक्षेप करने की क्षमता भौतिक स्तर पर आविष्कृत कर लेगा। शील-निरूपण की दृष्टि से भी दोनों में अन्तर है। पौराणिक पात्रों का शील-निरूपण **सम्बद्ध-परस्पर** के आधार पर होता ही है। उनकी भीतरी प्रेरणा वैयक्तिक कम होती है, लीला-परक विशेष। दूसरी और

---

1. 'दिनकर और उनकी उर्वशी' : श्री देवराज भाटी, पृ0 44 पृ0 सं0 1963, अशोक प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली-6

ऐतिहासिक पात्रों के कर्मों में मनोविज्ञान और परिवेश, वंश-परम्परा आदि का भी योगदान देखने में आता है। जहाँ तक काल का प्रश्न है, इतिहास का सम्बन्ध अतीत से है, उस अतीत से जिसकी तिथि है, नहीं तो इतिहास सुदूर अतीत को प्रागैतिहासिक कहकर अपना दायित्व पूरा कर लेता है। इसके विपरीत पुराणों में त्रेता, द्वापर, सत्ययुग, और कलियुग आदि युगों का विभाजन (क) काल्पनिक है और (ख) नित्य-वर्तमान भी। लेकिन पौराणिक प्रबंध और ऐतिहासिक प्रबन्ध में एक उभयनिष्ठ धर्म यह है कि कवि तथ्यों के विन्यास में थोड़ा हेरफेर ला सकता है, परन्तु मूल बात यही होगी कि पुराण से सम्बद्ध पौराणिक प्रबंध का कोई निष्कर्ष होगा, तो वह सत्यपरक होगा और ऐतिहासिक प्रबंध का निष्कर्ष तथ्य-परक होगा।

काल्पनिक कथानक पर आधारित प्रबंध :

यह पहले ही बतलाया जा चुका है कि पौराणिक और ऐतिहासिक प्रबंधों में पुराण और इतिहास के क्रमशः सत्य तथा तथ्य, काव्य में कल्पना-तत्त्वों के मंजुल समन्वय से सरस और काव्यपूर्ण हो जाते हैं। कुछ ऐसे भी प्रबंध-काव्य होते हैं, जिनमें कथानक ही 'उत्पाद्य' नहीं, मुख्य और गौण पात्र आदि सभी उपकरण काल्पनिक होते हैं। ऐसे कल्पनाजन्य प्रबंधकाव्य में कवि अपनी ही कल्पना से काव्य की कथावस्तु और उसके पात्रों का निर्माण करता है। इसमें तत्त्व केवल इतना ही होता है कि उस काल्पनिक कथावस्तु और उन पात्रों के द्वारा कवि जिस निष्कर्ष का प्रतिपादन करता है, वह मनोवैज्ञानिक होने के कारण सत्य प्रतीत होता है। ऐसी सफलता के लिए प्रबंधकार की क्षमतापूर्ण प्रतिभा की अपेक्षा होती है। पात्र और घटनाएँ काल्पनिक होकर भी आदर्श एवं जीवन के मूल्यों को जगा देती हैं। गुलाब जी का **उषा** प्रबंधकाव्य इस संदर्भ में विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

गुलाब जी के प्रबंध काव्यों का वर्गीकरण : कथानक की दृष्टि से --

गुलाब जी के प्रबंधकाव्यों को कथानक की दृष्टि से तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। ये तीन श्रेणियाँ इस प्रकार हैं ---

(क) पौराणिक, प्रबंधकाव्य -- (**अहल्या और कच-देवयानी**)

(ख) ऐतिहासिक प्रबंधकाव्य -- (**आलोक-वृत्त**)

(ग) काल्पनिक प्रबंधकाव्य -- (**उषा**)।

गुलाब जी की कृतियों का संक्षिप्त परिचय

(क) गुलाब जी के प्रबंध-काव्यों का संक्षिप्त परिचय :

महाकाव्य (1) उषा [1] :--

गुलाब जी ने 12 सर्गो के महाकाव्य **उषा** में कल्पित पात्रों की काल्पनिक कथा के द्वारा आधुनिक युग के जीवन-मूल्यों को अभिव्यक्ति दी है। **उषा** में मैंने आधुनिक युग के काल्पनिक कथानक के आधार पर एक मध्यम वर्ग के परिवार की आद्यन्त जीवन-गाथा चित्रित करने का प्रयास किया है।'[2] इस महाकाव्य का कथानक उषा और प्रभात के प्रेम वर्णन से शुरू होता है। महाकाव्य की नायिका उषा प्रयाग के एक मध्यम श्रेणी के परिवार की किशोरी है। उसे अपने सहपाठी प्रभात से प्रेम है। पर, परिस्थिति की प्रतिकूलता के कारण उसका विवाह प्रभात से नहीं होता है। काशी के एक सम्पन्न परिवार का युवक राजीव उसका पति बनता है। उषा प्रेमी प्रभात से साश्रु विदा लेकर पतिगृह चली जाती है। ससुराल में जाकर भी वह प्रभात को भुला नहीं पाती है। उसके सहज आत्मसमर्पण के अभाव से राजीव दुखी रहता है --

मैं सह न सकूँगा यह ज्वाला
जीवन-घट जो कर रही चूर
मेरी मानस-नभ-ज्योत्स्ने तुम
मुझसे क्यों इतनी दूर-दूर ? [3]

अन्ततोगत्वा इस मानसिक तनाव का अन्त होता है। पत्नीत्व के कर्त्तव्य तथा नारी-हृदय की सहज प्रेम-भावना से भरकर उषा अपना खुला समर्पण पति

1- रचना-काल (1946-48), प्रकाशन-काल (1965)। यद्यपि उषा के पूर्व कवि गुलाब की कई कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी थीं, किन्तु शोध-प्रबन्ध के प्रस्तुत अध्याय में विधा की दृष्टि से कृतियों के वर्गीकरण के अनुसार ही उनकी रचनाओं का संक्षिप्त परिचय दिया गया है।

2- उषा - गुलाब खंडेलवाल, प्रथम संस्करण (उषा का निवेदन), पृ0 6

3- उषा, पृ0 19

को उपलब्ध कराती है। कुछ दिनों के बाद मुकुल का जन्म होता है और उषा जननी की भूमिका में प्रवेश करती है। चार वर्षों के बाद एक दिन प्रभात को राजीव के साथ आया देखकर उषा पुरानी स्मृतियों में बहने लगती है। धीरे-धीरे प्रभात का आना-जाना प्रारम्भ होता है। एक दिन गणतंत्र दिवस के अवसर पर राजीव और मुकुल की अनुपस्थिति में प्रभात आता है और उषा को उत्सव देखने के लिए ले जाता है। जनता प्रभात के राजनीतिक जीवन के कारण उसका सम्मान करती है। साहचर्य के कारण उषा भी इस अभिनन्दन की अधिकारिणी हो जाती है। दूर भीड़ में खड़े राजीव को यह अच्छा नहीं लगता है। उसके हृदय में ईर्ष्या का अंकुर फूट पड़ता है। ऐसी ही विक्षुब्ध मनःस्थिति में एक दिन प्रभात आता है। राजीव अपने को रोक नहीं पाता है और वह उषा और प्रभात के सम्बन्धों को लेकर व्यंग्य करता है। प्रभात अपने पूर्व प्रेम को छिपा नहीं पाता है ---

सुन लो कानों को खोल, उषा थी मेरी ही
प्रिय सहचर दीन, बने तुम निठुर अहेरी ही
हर विवश मृगी-सी उसे प्रेम के कानन से
वह तन से हुई तुम्हारी सदा नहीं मन से।[1]

राजीव का भावुक मन इसे सह नहीं पाता है और वह घर छोड़कर चला जाता है। उषा को बहुत दुःख होता है। प्रभात अपने प्रयत्नों में विफल होता है। वह राजीव को नहीं खोज पाता है। वह उषा को अपने साथ नवीन जीवन व्यतीत करने का आमंत्रण देता है, लेकिन वह उसे अस्वीकार कर देती है। दूसरी ओर राजीव विदेश जानेवाले जहाज की दुर्घटना का शिकार होता है। मूर्च्छित राजीव की प्राण-रक्षा एक छोटे द्वीप में रहने वाली (मातृ-पितृ-हीन कुमारिका) किरण करती है। स्वस्थ होने पर राजीव का सम्बन्ध किरण से हो जाता है। साम्यवादी अधिनायक-प्रणाली से शासित उस द्वीप पर पड़ोसी द्वीप भयानक आक्रमण करता है। इस युद्ध में राजीव भाग लेता है और विजयोपरान्त उसे सेना-नायक का पद मिलता है। इधर काशी में उषा का एकमात्र सहारा पुत्र मुकुल बीमारी के कारण चिर-निद्रा में सो जाता है। पुनः प्रभात उषा को विवाह का आमंत्रण देता है, पर उषा के लिए इसका कुछ भी महत्त्व नहीं रह जाता है। प्रभात को उक्त द्वीप के संघर्ष की तथा राजीव के विजय की खबर मिलती है। उषा को प्रभात इसकी सूचना देता है। उषा वहाँ के लिए यात्रा प्रारम्भ करती

---

1. उषा , पृ0 43

है। बिना उषा को कहे प्रभात उसका अनुसरण करता है। कई दिनों की तलाश के बाद उषा राजीव को समुद्र के किनारे देखती है। उसके साथ एक युवती तथा एक छोटा बालक है। उस बालक में उषा को मुकुल का प्रतिबिम्ब दिखायी पड़ता है। प्रसन्नता, पीड़ा, आशा, निराशा, प्रेम एवं ईर्ष्या की भावनाओं से उषा भर जाती है लेकिन अन्त में त्याग और बलिदान की भावना की विजय होती है। वह पति के नये जीवन की सुख-शान्ति को कायम रखने के लिए आत्म-बलिदान का निश्चय कर समुद्र में कूद पड़ती है। पीछे-पीछे आ रहा प्रभात भी उषा को पुकारता हुआ समुद्र में कूद पड़ता है।

(2) पौराणिक खण्ड-काव्य : कच-देवयानी[1]

कच-देवयानी की कथा प्रख्यात और पौराणिक है। उसकी कथा देवासुर-संग्राम के रमणीय अंश पर आधारित है। इसकी कथा **महाभारत, पुराण, श्रीमद्भागवत** एवं **सूरसागर** में भी मिलती है। गुलाब जी ने **महाभारत** की कथा के एक अंश को ग्रहण किया है जो इस प्रकार है ---

वृहस्पति-पुत्र कच शुक्राचार्य के यहाँ संजीवनी विद्या सीखने जाता है। वहाँ शुक्राचार्य की कन्या देवयानी उसके ऊपर मोहित हो जाती है -- बस इसी घटना पर यह खण्डकाव्य आधारित है। इसमें कामासक्ति और कर्त्तव्यनिष्ठा का बड़ा मनोरम द्वंद्व दिखाया गया है। जब कच अध्ययन समाप्त करके गुरु-आश्रम से जाना चाहता है तब देवयानी अपने हृदय में सँजोये प्रेम-भाव को उसके समक्ष प्रकट करते हुए कहती है --

तुम ऐसे विद्यालीन रहे
पुस्तक के आगे बढ़ न सके !
पढ़ लिये शास्त्र, इतिहास सभी
नारी के मन को पढ़ न सके ![1]

नारी, पुरुष के हाथों में अपने को समर्पित करने में ही सच्चे सुख का अनुभव करती है और इसी में अपने नारी-जीवन को धन्य मानती है। इसी भावना से युक्त हो देवयानी कच को अपना सर्वस्व समर्पित करते हुए कहती है :--

---

1. रचनाकाल (1945), प्रकाशन काल (1946)।
2. कच-देवयानी - पृ0 21, संस्करण तृतीय।

सागर से मिलने भादों की
मदभरी नदी-सी बढ़ आयी
में नील जलद-प्राचीरों से
बिजली-सी बाहर कढ़ आयी।[1]

बृहस्पति-पुत्र कच ने देवयानी के पिता शुक्राचार्य से संजीवनी विद्या की शिक्षा पायी है। अतः, देवयानी और कच का सम्बन्ध भाई-बहन जैसा पवित्र है। इस पवित्रता की पुष्टि गुलाब-कृत **कच-देवयानी** की निम्न पंक्तियों में देखी जा सकती है --

गुरु-कन्या भगिनी तुम मेरी
श्रद्धा की प्रतिमा प्रभापूर्ण
अब उसकी याद दिलाओ मत
जो स्नेह-स्वप्न हो चुका चूर्ण।[2]

पौराणिक आधार पर यदि देखा जाय तो कच और देवयानी का सम्बन्ध सहोदर जैसा है। देवयानी तो शुक्र से सम्भूत है ही जब दैत्यों ने कच को मारकर, जलाकर उसकी राख को मदिरा के साथ घोलकर शुक्राचार्य को पिला दिया, तब संजीवनी विद्या के प्रभाव से वह शुक्राचार्य का उदर विदीर्ण कर बाहर निकला, इस दृष्टि से कच देवयानी का सहोदर ठहरता है। इस सहोदर (समान उदरवाले) के स्वभाव में समानता का अभाव है। कच निरन्तर भाई-भगिनी के पवित्र-प्रेम के निर्वाह का यत्न करता है, जबकि देवयानी कामाभिभूत अपने पिता के शिष्य से, जो उसके धर्मभाई के समान है, प्रणय निवेदन कर, उसके पवित्र प्रेम को कलुषित करने का प्रयास करती है। वह कहती है --

अब भी खोये से देख रहे
धृत मृगी, अजान अहेरी तुम
जैसे पलकों से पी लोगे
सारी सुन्दरता मेरी तुम।[3]

---

1. 'कच-देवयानी' , गुलाब ; पृ0 42 , संस्करण तृतीय।
2. 'कच-देवयानी' गुलाब पृ0 22 संस्करण, तृतीय।
3. वही, पृ0 43

कच उसे समझाता हैं कि कामासक्ति से श्रेष्ठ कर्त्तव्यनिष्ठा है : --

'वह पाप हृदय का, आँखो का
स्मृति में भी उसके पाप छिपा
तम-तस्कर सा दिन उगते ही
भय खाकर अपने आप छिपा
इस पावन नव छवि से मंडित
तुम कितनी सुन्दर आज, बहन !
स्वर्गंगा की लघु लहरी-सी
तारक-आभा का चीर पहन ![1]

कच के मुख से कर्त्तव्यनिष्ठा की बात एवं स्वयं के लिए 'बहन' शब्द सुनकर देवयानी का हृदय मर्माहत हो जाता है। उसकी वह दशा हो जाती है, जो दशा अपने प्रियतम के मुख से अपने वैधव्य की कथा सुनकर किसी नववधू की हो जाती हों ---

परिणय-क्षण सुनकर नयी वधू
वैधव्य-कथा निज पति से ही
ज्यों चीख उठे पा बाँहों में
केवल साँसें छाया-देही।[2]

देवयानी मर्माहत हृदय से चीत्कार कर उठती है --

यह कैसा झूठा सत्य, भीरु
वीरत्व, सदय निर्दयता है
जो हृदय निमिष में चूर करे
वह भी अच्छी सहृदयता है ![3]

देवयानी कच को नाना प्रकार से प्रेमपाश में बाँधने का यत्न करती है, पर हर प्रकार से विफल होने पर वह क्रोधाग्नि में जलने लगती है। वह मानसिक संतुलन खो बैठती है। जिस कच को तीन बार उसने जीवन-प्रदान करवाया था उसीको क्रोधावेश में शाप देती है --

---

1- कच-देवयानी, पृ0 43
2- 'कच-देवयानी', गुलाब-पृ0 44, संस्करण तृतीय
3- वही, पृ0 44

स्वातंत्र्य न खोयेगा स्वदेश
चढ़ प्रेम-तुला पर नारी की
संजीवन-शक्ति विफल होगी
तुमसे निर्मम अधिकारी की।[1]

क्रोधावेश में वह शाप देती है, पर उसके दुःख की सीमा भी नहीं है --

जलती अनंत बाड़व-सी अब
यह ज्वाला शांत नहीं होगी
परित्यक्त प्रणय की तीव्र व्यथा
पल भर विश्रान्त नहीं होगी
रह गये भग्न सपनों से जो
आँसू वरुणी की नोकों में
मैं हार उन्हींका लिये, विकल
भटकूँगी तममय लोकों में।[2]

किन्तु, इस करुणा-निवेदन का कच पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता क्योंकि वह जा चुका है। पौराणिक कथा में देवयानी जब कच को शाप दे देती है, तो कच भी उसे अभिशप्त कर देता है, परन्तु गुलाब की देवयानी शाप तो देती है, प्रेम के प्रभंजन में लतिका की तरह काँप कर रह भी जाती है ---

तनु-लता सिहरती थी रह-रह
मूर्च्छित लिपटी तरु-माला से
जल-जल उठती हो ज्योति बुझी
जैसे अपनी ही ज्वाला से
प्रश्नों की मूक शिलाओं में
मलयानिल सिर टकराता था
फूलों से रो-रोकर कहतीं
किरणें, इतना ही नाता था,[3]

अतः पौराणिक कथा से गुलाब जी की **कच-देवयानी** की कथा का

1- 'कच-देवयानी', गुलाब पृ0 69, संस्करण तृतीय
2- 'कच-देवयानी', पृ0 72, गुलाब, तृतीय संस्करण
3- रचनाकाल (सन् 1945) प्रकाशन काल (सन् 1946)

अन्त अधिक मार्मिक है।

पौराणिक खण्डकाव्य : अहल्या

अहल्या गुलाब जी का दो खण्डों में लिखित एक पौराणिक लघु-प्रबंध (खण्डकाव्य) है। इस कथा के स्रोत **बाल्मीकि रामायण, अध्यात्म रामायण** और **रामचरित मानस** आदि ग्रंथ हैं।

अहल्या और गौतम की प्रख्यात कथा को गुलाब जी ने अपनी सरस उद्‌भावना, कल्पना, संवेदना और मौलिकता से अत्यन्त ही सशक्त बना दिया है। सच तो यह है कि कथा पुरानी होने पर भी इस रचना में गुलाब जी की अपनी भंगिमा है। 'गुलाब जी ने प्राचीन कथा में आधुनिक मनोवैज्ञानिकता के सामंजस्य जैसा कठिन कवि-कर्म अत्यन्त सहज ढंग से सम्पन्न किया है। पात्रों की अनुभूतियों और भावनाओं का चित्रण बहुत ही स्वाभाविक और हृदयग्राही हैं।'[1] गौतम ऋषि से मिलन के पूर्व अहल्या के प्रकटीकरण, रूप और यौवन के वर्णन में कवि की कल्पना की ही प्रधानता है। अत्यन्त ही क्षीण कथा को कवि ने भावनाओं और कल्पनाओं का व्यापक विस्तार दिया है। अपरिचिता अहल्या का आगमन अत्यन्त ही नाटकीय ढंग से प्रथम खण्ड के प्रारम्भ में दिखलाया गया है। वह अलौकिक तेज से दीप्त माधवी-लता की तरह प्रफुल्ल यौवन-हास-तरंगो में आत्मा-प्रदीप-सी प्रज्वलित नीले नभ के गवाक्ष पर से सकुचती हुई अवतरित होती है --

आवर्त्त शून्य के जलद-पटल-सी खोल सघन
नव ज्योति इंद्र-धनु-शर-सी प्रतनु, अतनु-मोहन
माधवी लता-सी फुल्ल, उल्लसित, दोलित-मन
उतरी नीले नभ के गवाक्ष पर से निःस्वन
क्षण-क्षण सहमी, सकुचाती।[2]

अहल्या के सौन्दर्य-वर्णन में गुलाब जी ने अतिशय कल्पनाशीलता से काम लिया है। कालिदास की शकुंतला (नव अनाघ्रात, अनबिँधी कली-सी स्मिति-रेखा), जायसी की पद्‌मिनी (वह निज से निर्मित आदि उषा नभ को रँगती) से भी अधिक सुंदर अप्सराओं में भी श्रेष्ठ है (रति, रभा, रमा उमा,

---

1- अहल्या, भूमिका, गंगाशरण सिंह, पृ0 6

2- 'अहल्या' गुलाब, पृ0 1

जिसकी प्रतिकृति लगती)। ऐसी अलौकिक रूपवती को देखकर वृद्ध पितामह भी विभ्रम में पड़ जाते हैं। सुरराज (इन्द्र) उसके जावकमय पगतल पर सिर झुकाए, छवि के स्वागत के लिए तत्पर हैं। दानवगण इस मोहिनी को देखकर अंतर्द्वंद्व में पड़ जाते हैं, वासुकी विचलित हो जाते हैं और देवों में खलबली मच जाती है, तथा महेश भी उन्मद होकर इसे भुजापाशों में भरने को ललकते हैं --

दानव दौड़े, 'इस बार प्राण क्या रहे शेष !
ले गई अमृत-घट एक बार तो छद्मवेष'
वासुकी विकल, संत्रस्त जलधि, भू, नभोदेश
मच गई खलबली देवों में, उन्मद महेश
भुजपाशों में भरने को। [1]

पर, स्वयं अहल्या आत्मचिंतन में खोयी है --

मैं कौन ? कहाँ से तिर आई हिमकणिका-सी
सम्मुख लहराती दृग के स्वप्न-यवनिका-सी
पितु ! जननी मेरी कहाँ, नहीं स्मृति क्षणिका-सी
क्या मैं भी सुरपुर में उड़ जाऊँ गणिका-सी
देवों को, हाय ! रिझाने ? [2]

यौवन के वेग से विचलित अहल्या (अंगों में कैसा यह अनजाना बेसुधपन) एक साथ कई प्रश्न लेकर वृद्ध पितामह ब्रह्मा के सामने प्रस्तुत होती है --

मैं कली ? सूँघ सब जिसे निमिष भर दें उछाल
मैं रत्न ? कि रख लें जिसको युग-युग तक सँभाल
मैं यौवन-तरु का मूल कि उसका आलबाल ?
मैं विष की प्याली हूँ कि अमृत से भरा थाल !
हे वृद्ध पितामह ! बोलो [3]

वृद्ध पितामह इस रहस्यमयी युवती को देखकर अपनी असमर्थता व्यक्त

1- अहल्या, पृ0 2
2- 'वही' , गुलाब , पृ0 3
3- वही, पृ0 4

करते हैं --

बेटा ! ललाट का लिखा कौन कब सका मेट ?
मैं स्वयं कमल-धृत बिन्दु, सिंधु से नहीं भेंट।[1]

और ब्रह्मा और भी आगे कहते हैं --

मैं चिर-अनादि से एकाशन शासन तत्पर
मुझसे तो अच्छे देव, मनुज, हँसकर, रोकर
सुख-दुख में लेते जो नूतन आकृतियाँ धर
चढ़ जन्म-मरण-दोलों पर। [2]

तदुपरान्त अहल्या शून्य से तथा नयनों की स्वप्निल दुनिया से निकलकर, नींद के द्विधा-द्वंद्व से मुक्त होकर यथार्थ की दुनियाँ (धरती) में उतरती है। बक्सर के पावन सिद्धाश्रम में उसके प्रवेश से मधुमास छा जाता है। वहाँ गौरांग, स्वस्थ, तप-पूत, ज्योति के सायक के समान पुरुषोत्तम, सर्वगुणोपम, विश्व-विधायक की तरह, ऋतुपति-नायक के समान गौतम मिलते हैं। उज्ज्वल ललाट, घनश्याम लहराते केश-जाल, गैरिक पट कटि-तट कसे, कंठ में सुमन-माल पहने, यशोदीप्त गौतम की छवि क्षण-क्षण तप से निखर रही है। उन्हें देखकर अहल्या की चेतना शिथिल हो जाती है, उसका अपनापन सर्वस्व समर्पण करने के लिए तत्पर हो जाता है। गौतम मुनि भी आकृष्ट होते हैं ---

ज्योतित लपटों-सी ग्रीवा, उड़ते चिकुर-जाल
तिर्यक् मुख, नत आकर्ण नयन, भौंहें अराल
गोरे अंगों पर हँसता ज्यों मधु-ऋतु-रसाल
लावण्यमयी शोभा पहने तारुण्य-माल
तप-सम्मुख भक्ति-प्रणत थी। [3]

जिन्हें रंभा, उर्वशी, मेनका जैसी अप्सराएँ भी डिगा नहीं सकीं, 'क्या आज पराजय होगी?' सहसा नभ-ध्वनि होती है, 'रत्न दिया जो स्रष्टा ने, यह ग्रहण करो।' भग्नगेह, कृश, नग्नदेह, हिम-ताप-शीर्ण, कामकला से हीन गौतम को अहल्या समर्पण का आश्वासन देकर कहती है --

---

1- वही, पृ0 6।
2- अहल्या, पृ0 7
3- 'वही', पृ0 9

अंतर की अकलुष स्नेह-वृत्ति कब हुई मृषा
तन मिलता उससे जिससे मन की बुझी तृषा
सेवा-वंचित यह, आर्य ! आपकी खिन्न दशा
मैं दूँगी इन सूखे अंगों में सुरभि बसा
जो असमय कुम्हलाये हैं।'[1]

अथवा --

दिन भर तप रवि-से लौटोगे, प्रिय ! जभी गेह
मैं संध्या-सी देहरी-दीप में भरे स्नेह
अर्पित कर दूँगी यह नामांकित सुमन-देह
मैं बरस, बिखर, जैसे पावस का प्रथम मेंह
अंतर मधु से भर दूँगी[2]

युवती (अहल्या) के इस समर्पण-भाव से गौतम के प्राणों के तार-तार झनझना जाते हैं और उनके संयम-नियमों के सारे बंधन टूट जाते हैं। उनके युगों से प्यासे अधर आतुर हो जाते हैं और दोनो का दाम्पत्य जीवन प्रेम के ज्वार में बहने लगता है। जीवन के ऐसे ही कितने सम्वत्सर बीत जाते है और प्रेम का यह ज्वार धीरे-धीरे समाप्त हो जाता है। अपनी निष्फलताओं में गौतम खीझ से भर जाते हैं और अहल्या शल्या की तरह चुभने लगती है। अब तो संध्या में लौटनेवाले गौतम मुनि की प्रतीक्षा मात्र ही शेष रह गयी है। अहल्या का षोड़श श्रृंगार लज्जित-सा बनकर रह जाता है। और सहसा एक दिन --

नभ से जाते सुरपति ने भू की देख ओर
अन्तर की शांति गँवाई।[3]

इन्द्र अहल्या के प्रेम में दीवाने हो जाते है और उन्हें अपना जीवन व्यर्थ लगने लगता है :-

जीवन से क्या, सुरपुर से, कल्प वयस से क्या !
धन से, प्रभुता से, त्रिभुवन-विजयी यश से क्या !
विद्युत बन नस-नस में न बहा उस रस से क्या !

1- अहल्या , पृ0 11
2- 'अहल्या', पृ0 11
3- वही, पृ0 15

रमणी-अपांग-विद्धांग-प्राण परवश से क्या !
छूटें, छूटें, सब छूटें [1]

वे संकल्प लेते हैं अहल्या को प्राप्त करने का किन्तु अहल्या के भालपर सिन्दूर का रक्तारुण टीका देखकर विवशता से भर जाते हैं। अहल्या का मन भी इंद्र को देखकर सागर-सा लहराने लगता है और सतत प्रतीक्षा के बाद उसे अपना नारीत्व निष्फल महसूस होता है। वह इंद्र के प्रेम में डूब जाती है। जब संध्या को गौतम घर आते हैं तो अहल्या भावांकित मूर्ति की तरह बेसुध और अवाक् रह जाती है और उन्हें प्रणाम तक नहीं कर पाती। अहल्या के इस रूपोन्माद को, अधरों पर नूतन रस और अंगो में नयी साज-सज्जा देखकर ऋषि काँप उठते हैं। तब अहल्या को बोध होता है --

पल तोड़ गया कल्पों के संकल्पित व्रत को।

दूसरी और उर्वशी, मेनका, रंभा, तिलोत्तमा जैसी अप्सराओं के साथ रहने वाले 'सुरपति को मिलती पलभर भी स्थिरता कहीं न, परिषद या अतंःपुर में।[1] जीवन की शत्-शत् राजनीति की हलचलों में सुरपति उचटे- से रहते हैं'। स्वामी की ऐसी दशा देखकर स्मर (कामदेव) अपने प्रभाव से सर्वत्र त्रिभुवन में उन्मादमयी मोहनिशा ला देते हैं। मानवेतर प्राणियों में भी कामातुरता व्याप्त हो जाती है --

खग-खगी चोंच में चोंच दिये कामातुर-से
तरु-बेलि केलि-रत, सहज सुवेष्ठित उर उर से
गाता रसाल पर नर-कोकिल पंचम सुर से
चौंका देती जिसको क्षण-क्षण क्वण नूपुर से
मंजर-मंजीरित भ्रमरी।[2]

इस षड्यन्त्र से भोर के पूर्व ही दिन-सा प्रकाश सहसा आँगन में छा जाता है। प्रभात समझकर, गौतम मुनि संध्या-वंदन के लिए नदी-तट पर चले जाते हैं। इसी बीच सुरपति (इंद्र) गौतम की अनुकृति धारण कर अहल्या के पास चले आते हैं। अहल्या भ्रमित हो जाती है। 'थी शेष रात कुछ' कहकर इन्द्र

1- अहल्या।

2- 'अहल्या' , पृ0 30

अहल्या को सुख-संगम की दुनिया में ले जाते हैं। इन्द्र के छल को समझ कर भी अहल्या नहीं समझना चाहती है। वह छद्मवेशी इन्द्र के उन्मद कामातुर आमंत्रण को स्वीकार कर लेती है और आत्मसमर्पण कर देती है। पूजोपरान्त लौटकर गौतम आश्रम के द्वार पर भयभीत सुरपति को देखकर आश्चर्यचकित रह जाते हैं। अहल्या भय से थर-थर काँपने लगती है। उसका पत्नीत्व अपराधी-सा हतप्रभ रह जाता है। गौतम इस छद्म प्रातः के प्रंसग को समझ जाते हैं और उनकी मुद्रा बदल जाती है ---

पल में विद्युत-सा कौंध गया निशि का प्रसंग
वह छद्म प्रात का ढंग, अचानक स्वप्न-भंग
नख-शिख तनु में व्यापी जैसे ज्वाला-तरंग
रक्ताभ नयन, आनन पर क्षण-क्षण चढ़ा रंग
अपमान, घृणा, पीड़ा का।[1]

वे सुरपति को धिक्कारते हैं। इन्द्र अभिशापित होते हैं। पुनः गौतम विवर्ण-मुखवाली पत्नी को भी 'पाषाणी' की संज्ञा देते हैं। अहल्या अपने अपराध के लिए क्षमा माँगती है, पर नियति का क्रूर व्यंग्य मुनि के अभिशाप (पाषाणी) में स्थिर हो जाता है। अहल्या पति-वंचिता हो जाती है। कुटीर सूना हो जाता है, आश्रम उजड़ जाता है और रह जाती है व्यथा-कथा --

रह गई गौतमी शिला-सदृश सुखदुखातीत
निज भाग्य-अंक ले फूटे।[2]

अहल्या काव्य का द्वितीय-खण्ड उसके उद्धार की कहानी है। कवि ने प्रारंभ में राजा दशरथ के यहाँ से राम और लक्ष्मण को 'यज्ञ के रक्षार्थ' मुनि विश्वामित्र द्वारा माँगकर लाने की मार्मिक कथा संक्षेप में प्रस्तुत की है।

मृदुल अल्प-वयवाले राम-लक्ष्मण राक्षसों के विनाश में सफल होते हैं। उनकी दिव्य शक्ति में ऋषियों और मुनियों को विश्वास हो जाता है।

दूसरी और पुरजन-परिजन से तिरस्कृता अबला अहल्या समाज की घृणा को अनाथ होकर सहती है। इसी तरह उसके दिन और रात किसी अमृत-कण की प्रतीक्षा में जड़वत बीतने लगते हैं। और एक दिन जब वह सद्यःस्नाता कटि

1- 'अहल्या', पृ0 27।
2- वही, पृ0 29

पर घट लेकर चलती है तो उसको गौर-श्याम युगल भ्राता (राम-लक्ष्मण) मुनि के साथ दिखायी पड़ते हैं। तिरस्कृत और लांछित अहल्या के नयन प्रभु को देखकर शीतल हो जाते हैं। उसे लगता है कि शायद इसी दिन की प्रतीक्षा वह कर रही थी। वह अपने कलंकमय मुख को ढँककर भगवान राम के आगे रोती हुई गिर जाती है।

मंगल-गौरव-छवि-धाम, राम निष्काम भाव से आगे बढ़कर अहल्या का स्पर्श करते हैं। राम के पावन स्पर्श से शिला-सी-नारी अहल्या शाप-मुक्त हो जाती है। उसका युग-युग का पाप-ताप समाप्त हो जाता है। वह श्री राम के चरणों की शरण पाकर अपने जीवन-कलंक को धो डालती है। जड़ता को नवचेतना मिलती है। प्रभु यह कहकर उसे धन्य-धन्य कर देते हैं --

तू पावन सदा पूर्णिमा की ज्यों चंद्र-कला
अब और नहीं तपना है।[2]

(iv) ऐतिहासिक खण्डकाव्य आलोक-वृत्त[2]

आलोक-वृत्त 13 सर्गों में विभक्त एक प्रबन्धकाव्य है। यह काव्य राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के जीवन से सम्बद्ध है। महात्मा गांधी इसके नायक हैं और उनका जीवन इस काव्य का विषय है। इस प्रबंधकाव्य में महात्मा गांधी का जीवन-दर्शन, चिंतन और कृतित्व का बड़ा ही काव्यमय निरूपण हुआ है।

सन् 1957 ई0 की सशस्त्र क्रांति के विफल हो जाने के कारण भारत में अंग्रेजी राज्य पूर्णतः स्थापित हो गया था । संसार का सबसे पुरातन देश, मानव-सभ्यता की जन्मभूमि, महान ऋषि-मुनियों की तपोभूमि, भारतवर्ष दासता के राहु से ग्रस्त हो गया था। सुरलोक के विजेता भारतवासी अपनी प्राचीन गौरव-गरिमा को भूलकर पराधीनता के सुविधाभोगी जीवन के अभ्यस्त हो गये थे। ऐसे ही घोर अन्धकारपूर्ण समय में अभिनव ज्योति के अवतरण के रूप में गुजरात के पोरबन्दर नामक स्थान में सन् 1969 ई0 में मोहनदास गांधी का जन्म हुआ।

किशोरावस्था में ही गांधी का ध्यान देश की पराधीनता की ओर था और उन्हें अंग्रेजी शासन को समाप्त करने की चिन्ता होने लगी थी --

---

1- 'अहल्या' पृ0 51

2- रचनाकाल (1969-1971), प्रकाशन काल 1975।

चिंता व्याप्त हुई शिशु-मन में, गोरों का शासन क्यों
टूट न पाता है प्राणों की जड़ता का बंधन क्यों ?[1]

उस समय उन्हें लगा कि स्वतंत्रता अर्जित करने के लिए शारीरिक शक्ति आवश्यक है और अंग्रेज शरीर-शक्ति से सम्पन्न हैं क्योकि वे मांसाहारी हैं। उन्होंने भारत माता की मुक्ति के लिए मांसाहार करने का निश्चय किया तथा अपने वैष्णव परिवार में इसकी सुविधा नहीं होने के कारण घर से पैसा चुराकर और छिपाकर मांस खाने लगे। लेकिन, उनके पवित्र और सत्यनिष्ठ हृदय को यह आचरण बहुत दिनों तक सहन नहीं हुआ और अन्ततः उन्होंने अपने पिता जी को एक पत्र लिखकर इस झूठ और चोरी को स्वीकार कर लिया। पिता-पुत्र की सम्मिलित अश्रुधारा से सारा कल्मष धुल गया।

समय पाकर गांधी जी का विवाह हुआ। उनकी पत्नी कस्तूरबा गुणमयी और पति की अनुगामिनी थी। गांधी जी यौवन-काल में अपनी पत्नी में इतने अनुरक्त थे कि उनका पत्नी-प्रेम उनकी अनुपम पितृभक्ति में अपने लिए अवसर निकाल ही लेता था। रोगशय्या पर पड़े पिता की उन्होंने भरपूर सेवा की। पिता के देहान्त के बाद गांधी जी उच्च अध्ययन के लिए इँग्लैंड गये। मद्य-मांस और मुक्ताचार के उस देश में जाने के पहले गांधी जी ने अपनी माता के सामने धर्माचरण बचाकर लौटने की कसम खायी जिसका उन्होंने सफलतापूर्वक निर्वाह किया। इंगलैंड में रहकर उन्होंने सत्यनिष्ठ जीवन और कष्ट-सहिष्णुता का मंत्र सीखा और राजनीतिक स्वतंत्रता का अर्थ समझा। परन्तु अध्ययन समाप्त करके बैरिस्टर बनकर स्वदेश लौटने तक उनकी माता का स्वर्गवास हो चुका था, और अब भारतमाता ही उनकी माँ थी।

बैरिस्टरी के सिलसिले में गांधी जी को दक्षिण अफ्रिका जाना पड़ा। वहाँ भी अंग्रेजों का राज्य था। वहाँ के काले मूल निवासियों और वहाँ बसनेवाले भारतीयों को गोरे अंग्रेज नीची दृष्टि से देखते थे। प्रथम श्रेणी का टिकट लेने पर भी जब गांधी जी को एक अंग्रेज-यात्री के विरोध के कारण अपमानित करके रेल से उतार दिया गया तो उन्होंने इस अन्याय का विरोध करने का निश्चय किया। उन्होंने अपनी जीविका की चिन्ता छोड़कर रंग-भेद की इस अमानवीय नीति के विरुद्ध आवाज उठायी। गांधी जी के सत्य, अहिंसा, और प्रेम के सिद्धांतों और सत्याग्रह की कार्य-प्रणाली का सूत्रपात अफ्रिका में ही हुआ।

1- 'आलोक-वृत्त' -- गुलाब, पृ0 6, प्रकाशन अर्चना 29 ए0 वी0 के0 पाल एवेन्यू, कलकत्ता 6, 1975 प्रथम संस्करण।

अफ्रिका में सत्याग्रह की सफल परिणति के बाद गांधी जी स्वदेश लौटे। भारत की पराधीनता की कसक उनके मन में पहले से ही थी। देश को स्वतंत्र करने का निश्चय, अफ्रिका से लौटने पर दृढ़ हो गया। उन्होंने गुजरात में साबरमती नदी के किनारे एक आश्रम स्थापित किया और सत्य, अहिंसा और प्रेम के आधार पर स्वतंत्रता के लिए अहिंसक सैनिकों का निर्माण करने लगे। उनकी पुकार पर भारत के सभी प्रदेशों से सच्चे देशभक्त वीर एकत्र होने लगे। गांधी जी ने पराधीन देशवासियों को निर्भयता और परिश्रम का मंत्र दिया तथा सबको चरखा चलाकर उद्यमशील और आत्म-निर्भर होना सिखाया। इस प्रकार देश में स्वतंत्रता का नव-जागरण आरंम्भ हो गया ---

कोटि-कोटि जन नव मंत्रों से प्रेरित जाग चुके थे
प्राणों में छायी युग-युग की जड़ता त्याग चुके थे।
जागा पहला मंत्र अभय का और दूसरा श्रम का
मंत्र तीसरा था चरखे से घर-घर के उद्यम का।[1]

इस बीच निलहे साहबों के अत्याचारों से त्रस्त किसानों के उद्धार के लिए वे बिहार के चम्पारन नामक स्थान में पहुँचे। अंग्रेज-सरकार ने उनकी गतिविधि को रोकने का प्रयत्न किया, लेकिन जनता के अपार उत्साह के कारण वह सफल नहीं हो पायी। उन्हें गिरफ्तार करके उन पर मुकदमा चलाया गया। परन्तु अन्ततः सरकार को समझौते की नीति अपनानी पड़ी और देश के भाल पर से नील का दाग धुल गया।

जब गुजरात के खेड़ा जिले में अकाल पड़ा और अंग्रेज-सरकार ने किसानों से लगान वसूलने में कोई रियायत नहीं की तो गांधी जी ने लगानबन्दी का सत्याग्रह-आन्दोलन छेड़ दिया। उन्होंने सिद्ध कर दिया कि जनता की स्वीकृति के बिना उस पर शासन नहीं किया जा सकता। खेड़ा सत्याग्रह की सफलता पर गांधी जी ने कहा था कि यदि ऐसा संपूर्ण भारत में हो जाय तो सदियों की हमारी गुलामी पलभर में समाप्त हो जाय।

दासता की निद्रा से देश को झकझोर कर जगाने और अंग्रेज-सरकार के अन्यायपूर्ण कानूनों के प्रति भारतीयों का विरोध मुखर करने के उद्देश्य से गांधी जी ने नमक-सत्याग्रह आरम्भ किया। नमक बनने पर लगायी गयी सरकारी रोक का विरोध करने के लिए उन्होंने साबरमती-आश्रम से दो सौ

1- आलोक-वृत्त , गुलाब जी, पृ0 38

मील दूर समुद्र-तट पर स्थित डाँडी नामक स्थान की पैदल यात्रा की और वहाँ जाकर नमक-कानून भंग किया। इस सत्यग्रह से सारे देश में जाग्रति की लहर दौड़ गयी और स्वाधीनता की आकाक्षा प्रबल हो उठी।

सन् 1942 ई0 में महात्मा गांधी ने 'अंग्रेजो, भारत छोड़ो' का नारा बुलन्द किया। उन्होंने देशवासियों को 'करो या मरों' का मन्त्र देकर असहयोग द्वारा अंग्रेज-सरकार को समाप्त करने का मार्ग बतलाया। गांधी जी और अन्य नेता गिरफ्तार कर लिये गये। लेकिन देश के कोने-कोने में क्रांति की ज्वाला फैल गयी और जनता ने अपने सात्विक रोष और उत्सर्ग की क्षमता का अपूर्व परिचय दिया। गांधी जी की धर्म-पत्नी, श्रीमती कस्तूर बाई का जेल में ही निधन हो गया।

अन्ततः 15 अगस्त, 1947 को, गांधी जी के अथक प्रयत्नों के फलस्वरूप भारत स्वतंत्र हुआ ; लेकिन अंग्रेजों की भेद-नीति के कारण हिन्दू-मुसलमानों का पारस्परिक वैमनस्य अलगाव की सीमा तक पहुँच चुका था। देश का एक टुकड़ा काटकर पाकिस्तान बना दिया गया और पथभ्रष्ट धर्मान्धता के कारण दोनों सम्प्रदायों के बीच दंगे होने लगे। गांधी जी ने आजादी का कोई समारोह नहीं मनाया। इधर भारत आजाद हो रहा था और उधर वे साम्प्रदायिक द्वेष और हिंसा की लपटों के बीच निर्भय खड़े होकर अहिंसा और प्रेम का सुधावर्षण कर रहे थे --

खिले थे फूल तो रवि के उदय में
न थी पर शांति बापू के हृदय में
घृणा अब भी हवा में पल रही थी
अहिंसा-ज्योति अब भी छल रही थी
हृदय में वेदना का भार लेकर
मनुजता की अमर झंकार लेकर
खड़े वे अडिग हिंसा के भँवर में
रहे थे प्रार्थना कर आर्त स्वर में। [1]

गुलाब जी की अन्य कृतियों (मुक्तकों) का संक्षिप्त परिचयः-

कविता[2] :-

1- 'आलोक-वृत्त' , गुलाब, पृ0 77
2- रचनाकाल (1939-41), प्रकाशनकाल (1941 ई0)

कविता कवि गुलाब का प्रथम काव्य-संग्रह है, जिसमें 49 गीत हैं। कवि गुलाब के किशोर तथा तरुण हृदय के भावोद्‌गार इस रचना के गीतों में निबद्ध हैं। आरम्भिक रचना होने पर भी कविता में प्रौढ़त्व के साथ-साथ सौंदर्य, संवेदना, श्रृंगार, कल्पना, और सूक्ष्म अनुभूतियाँ भरी हुई हैं। विषय की दृष्टि से कविता में मन की अभिलाषायें, सूक्ष्म प्रेमानुभूति, प्रकृति के प्रति प्रेमानुराग तथा अन्य मृदुल भावनाओं की ओर संकेत करना उचित है। गुलाब के किशोर हृदय की तरल भावनाएँ '**कविता**' की कविताओं में मूर्त हो गयी हैं। प्रथम कविता 'वाणी का वर दो' में कवि माँ शारदा से साहित्य-साधना के लिए वरदान मांगता है ---

मेरा कवि वह गीत सुनाये
सुन जिसको कोयल शरमाये
चारों और धूम मच जाये
कवि-प्रतिभा-रच ! वरद ! विश्व नव-छवि-विमुग्ध कर दो
वाणी का वर दो।[1]

प्रस्तुत काव्य-संग्रह के एक-एक गीत में क्रमशः कवि की काव्य-कला उत्तरोत्तर निखरती हुई दीख पड़ती है। कभी कवि के हृदय में किसीके प्रति रागात्मक भाव आया होगा जिसकी अभिव्यंजना कविता के कुछ गीतों में मिलती है। यथा --

देख तुमको खिल, पड़ा मैं
लाज से सिहरा, झड़ा मैं
प्यार से तुमने उठा, दी धूल तन की झाड़
मैं तुम्हारे ही गले का हार।[2]

अथवा ---
तुम घन-अवगुंठन खोल अरी
क्षण भर तो राह दिखा दो ना !
बस एक बार मुस्का दो ना ![3]

---

1. कविता गुलाब, पृ0 2
2. वही, पृ0 8
3. वही, पृ0 18

प्रकृति की रमणीयता मानवीकरण के रूप में **कविता** के कुछ गीतों में मिलती है, जो 'वन-श्री', 'चाँदनी' , तथा 'नक्षत्रों' के सम्बन्ध में हैं। यथा --

अँग रँगे तारों की झलकें
नत चितवन, निद्रालस पलकें
पग-तल-चुंबित श्यामल अलकें
आधी रात, विचरती जूही-वन में बाला कोई
चाँदनी खिली दूध की धोई।[1]

अथवा --

लगती कितनी आज भली तू
कर सोलह श्रृंगार चली तू
क्या मुझ-सी, सखि ! गई छली तू ?
देखादेखी प्रेम नहीं होता है ओ पाषाणी !
ज्योत्स्ने ! ओ निर्जन की रानी ![2]

भाव-समृद्धि की दृष्टि से यह काव्य-संग्रह अपेक्षाकृत अधिक विचारणीय है।[3] सच तो यह है कि 'छायावादी भाषा-शैली की लाक्षणिकता, पदावली की कोमलता, सुघरता तथा लालित्य, अमूर्त का मूर्त-विधान, मानवीकरण, कल्पना की अतिरंजना, निराशा, पलायन, और अन्तर्वेदना, यथार्थ से दूर कल्पना के वायव्य लोक में स्वच्छन्द विहार, इन सभी दृष्टियों से **कविता** के गीत सफल एवं संगीतमय हैं।

चाँदनी[4] :-

चाँदनी काव्य-सग्रंह में 47 गीत हैं। इन सभी गीतों में चाँदनी विषय के रूप में है। इसके कुछ गीत **कविता** काव्य-संग्रह में भी संकलित हैं। शुभ्र निर्मल चन्द्रिका ने कवि को इतना प्रभावित किया है कि एक ही विषय को भावना का आधार बनाकर अनेक गीत लिखे गये हैं। कवि ने चाँदनी का मानवीकरण

1- 'कविता', पृ0 99
2- 'कविता', पृ0 98
3- इसका विस्तृत वर्णन भाव-पक्ष के विश्लेषण के सन्दर्भ में होगा।
4- 'उषा : मूल्यांकन तथा विश्लेषण' , प्रो0 शम्भुशरण , प्रकासन 1967

करते हुए उसे नारी के रूप में विविध चित्रों में प्रस्तुत किया है। इन गीतों के संग्रह में गीतकार कवि की वह ईमानदारी कूट-कूटकर भरी है जिसकी प्रेरणा से अलग-अलग मनोभूमि में एक ही वस्तु को तरह-तरह से देखने तथा वर्णन करने की प्रवृत्ति का जन्म होता है। विषय की कमनीयता की दृष्टि से उनकी अन्य रचनाओं की अपेक्षा **चाँदनी** अधिक महत्त्वपूर्ण सिद्ध होती है। गीति-काव्य की दृष्टि से चाँदनी के अधिकांश गीत अत्यन्त ही उत्कृष्ट हैं। यथा ---

नव मृणाल-से भुज लचकीले
नभ-वेणी बंधन से नीले
झरते तारक-कुसुम रँगीले
देख रही मुख-आभा अपनी ओसों के दर्पण में
चाँदनी फूल चुन रही वन में।[1]

अथवा --
अलकों में मुक्ताहल भरके
भाल बीच शशि-बिंदी धरके
हँसी सिँगार सोलहों करके
नभ पर खड़ी-खड़ी
आज तो पूनो मचल पड़ी।[2]

इस प्रकार **चाँदनी** काव्य-संग्रह में एक चाँदनी के अनेक उपमान आये हैं जो रूप-गुण में तत्सदृश कोमल, मसृण तथा मनोहर हैं। कवि की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उपमानों की पुनरावृत्ति नहीं हुई है। यह भी कवि की असाधारण प्रतिभा का प्रमाण है। एक 'धुनी रुई-सी' विशेषण-वाचक उपमान की अवश्य तीन बार आवृत्ति देखी जाती है , पर यह विषय-विशेष के प्रति कवि की आसक्ति मात्र है। विश्वम्भर 'मानव' ने चाँदनी शीर्षक रचना में एक चाँदनी के प्रति की गई विभिन्न कविताओं को देखकर कहा है -- 'अपनी दूसरी कृति **चाँदनी** में एक ही विषय को भावना का आधार मानकर इन्होंने पचास के आस-पास गीत लिखे हैं। इससे दो बातें सिद्ध होती हैं -- एक, इनका प्रकृति-प्रेम और दूसरी, एक ही रम्य वस्तु के प्रति इनके हृदय का अत्यधिक अनुराग। चाँदनी पर यों थोड़ा बहुत सभी लिखते हैं, पर ऐसे जमकर नहीं।'[3]

1- रचनाकाल (1939-43), प्रकाशनकाल (1944)
2- ' चाँदनी' , गुलाब , पृ0 28, प्रथम संस्करण
3- वही , पृ0 10

बलि-निर्वास[1]

बलि-निर्वास हिन्दी का महत्त्वपूर्ण दुखान्त काव्य-नाटक है। इसमें नाटक की सभी शैलियों का प्रयोग मिलता है। प्रथम दो अंकों में तुकान्त कविता है तथा अन्त के तीन अंकों में अंग्रेजी के अतुकान्त छन्द का प्रयोग हुआ है। इस काव्य-नाटक में एक दृश्य में **भ्रमरगीत** के समान पदों का प्रयोग किया गया है , जो गेय हैं। इस नाटक को पौराणिक गीति-नाट्य भी कहा जा सकता है। अभिनय की दृष्टि से इस नाटक के अंत के तीन अंक प्रधान हैं।

बलि-निर्वास में दानव-सम्राट् बलि को त्रासदी के नायक के रूप में चित्रित किया गया है। नाटक की कथावस्तु संक्षेप में इस प्रकार है --

प्रथम अंक के प्रथम दृश्य में देवसभा में इन्द्र अपने अजेय बल की गर्वभरी घोषणा करते हैं --

नहीं शतक्रतु कहलाने को मिला किसी को श्रेय अभी
तत्त्वों के बल से है दैवी शासन-चक्र अजेय अभी
मधुर ऊर्वशी के अधरो-सी अरुण सोम की हाला में
भाग हमीं पाते हैं पहले मंत्र-मुखर मखशाला में
हमीं सृष्टि के आदि रत्न हैं ऋषियों की पूजा के योग्य
रंभा की त्रिवली-से तीनों लोक हमारे ही उपभोग्य
साहस किसमें आज हमारी सहे प्रलय सी चितवन वक्र
दो ही अस्त्र अमोघ कहाते, यह दृढ़ वज्र, सुदर्शन चक्र।[2]

इसी समय किसी दूत के द्वारा उन्हें यह सूचना मिलती है कि बलि के नेतृत्व में दानवों की विशाल रण-वाहिनी अमरावती की ओर बढ़ी आ रही है। इसे सुनकर इन्द्र बहुत चिन्तित होते हैं। गुरु वृहस्पति की बात सुनकर वे तुरत रण की तैयारी की घोषणा करते हैं।

द्वितीय अंक में नंदन-कानन में एकत्र अप्सराएँ वार्तालाप करती हुई दिखायी गयी हैं। मृदुभाषी अप्सराओं को कोमल भावनाओं के प्रतीक के रूप में ग्रहण किया गया है। परस्पर वार्तालाप करते समय उन्हें दूत द्वारा युद्ध की सूचना मिलती है। वे सब नन्दनवन से ही युद्ध का दृश्य देखती हैं तथा उसे

1- 'नयी कविता : नये कवि' -- विश्वम्भर मानव, पृ0 90, द्वितीय संस्करण, 1 जनवरी 1968

2. रचनाकाल (1942-43) प्रकाशन-काल (1945)

एक दूसरे से आतुर होकर बताती भी जाती हैं। युद्ध में पराजित होकर इन्द्र, वरुण और अग्नि के साथ भागते हुए वहाँ आते हैं और मंत्रिमंडल-सहित ब्रह्मलोक की ओर पलायन करने की सूचना देते हैं।

तीसरे अंक में दानव-सम्राट् बलि का इन्द्र-पद पर अभिषिक्त होने का वर्णन है तथा शुक्राचार्य द्वारा यह जानकारी होने पर कि जब तक सौ अश्वमेघ-यज्ञ पूरे नहीं किये जायेंगे, इन्द्रत्व स्थायी नहीं होगा, बलि अश्वमेघ-यज्ञ करने की घोषणा करते हैं। इसी अंक के द्वितीय दृश्य में ब्रह्मलोक-स्थित पदच्युत देवताओं की मंत्रणा का भी वर्णन है, जिसमें ब्रह्मा इन्द्र को विष्णु की सहायता प्राप्त कर संकट दूर करने की सलाह देते हैं।

चतुर्थ अंक में बलि की पत्नी तथा अप्सराएँ गीतों के माध्यम से अपनी मनोव्यथा का वर्णन करती हैं। इसी अवसर पर उन्हें यह सूचना मिलती है कि सम्राट् बलि ने 99 यज्ञ पूरा कर लिये हैं और शीघ्र ही सौवें यज्ञ की आहुति पड़नेवाली है जिसके बाद उनकी विरह-व्यथा का भी अन्त हो जायगा।

पंचम् अंक में बलि की राज्यसभा में वामन-रूपधारी विष्णु के आने तथा बलि से तीन पग भूमि लेने के संकल्प का वर्णन है। संकल्प होते ही वामन विराट् रूप धारण कर लेता है और बलि के तीनों लोकों के साम्राज्य को दो ही पग में नाप लेता है। इस प्रकार बलि के स्वर्ग-राज्य से पतन होने के साथ ही नाटक का अंत हो जाता है।

यह काव्य-नाटक दुःखान्त होते हुए भी पाठकों या दर्शकों पर दुःख या निराशा की छाप नहीं छोड़ता है। प्रो शम्भुशरण ने इस काव्य-नाटक के सम्बन्ध में अपना विचार व्यक्त करते हुए लिखा है -- 'इसमें छन्दों का प्रयोग इतना विपुल है कि इस दृष्टि से इसका वैभव देखते ही बनता है। इसमें हिन्दी के पूर्ववर्ती छंदों का रुचि के अनुसार गुलाब जी ने समावेश कर लिया है तथा कई नये छंदों को भी स्थान दिया है। अंग्रेजी के ब्लैंकवर्स का हिंदी रूप भी इसमें मिलता है और सॉनेट भी। इन दृष्टियों से गुलाब जी महान हैं। दिनकर के 'उर्वशी' के तृतीय सर्ग का मिलान, **बलि-निर्वास** के अप्सरा-प्रसंग से करके देखना चाहिए। इससे गुलाब जी का महत्त्व स्पष्ट हो जायेगा और यह पता चलेगा कि गुलाब जी के समसामयिक तथा परवर्ती इनकी काव्य-साधना से कितने लाभान्वित होते आ रहे हैं। **बलि-निर्वास** का वैशिष्ट्य इस बात में भी है कि इसमें **भ्रमरगीत** की परम्परा को खड़ी बोली के माध्यम से विकसित किया गया है। खड़ी बोली में **भ्रमरगीत** लिखे गये हैं, किन्तु गुलाब जी ने गीत की अभिधा को सुरक्षित रखते हुए **भ्रमरगीत** का जो स्वरूप अभिव्यक्त किया है, वह सर्वथा परिष्कृत एवं काव्यात्मक गुणों से सम्पन्न है।'[1]

1- 'बलि-निर्वास', गुलाब , पृ0 2

गांधी-भारती [1]

गांधी-भारती कविवर गुलाब जी का अनुभूति-प्रधान काव्य है। महात्मा गांधी की मृत्यु के तुरत बाद इस काव्य की रचना हुई। प्रस्तुत काव्य में सॉनेट का प्रयोग किया गया है। **गांधी-भारती** में भारतीय संस्कृति के आलोक में गांधी जी के व्यक्तित्व एवं विचारों को साहित्यक कलेवर दिया गया है। कवि ने अपनी आँखो से अंग्रेजों के दमन, और अत्याचार को देखा था। महात्मा गांधी एक युग-पुरुष थे जिन्होंने भारतवासियों को सत्य, अहिंसा एवं स्वतंत्रता का पाठ पढ़ाया। बापू ने भारतीयों के हृदय में देशभक्ति की भावना जगा दी। जनता में राष्ट्रीय भाव जाग्रत होने लगे। गांधी जी के साथ सारा भारत कदम से कदम मिलाकर चलने लगा जिसके चलते भारत को आजादी मिली। किन्तु भारत का दुर्भाग्य था कि सन् 1948 में नाथूराम गोडसे नामक एक व्यक्ति ने उनकी हत्या कर दी। इस घटना से सारा विश्व दुःख में निमज्जित हो गया। इस दुर्घटना से कवि के हृदय पर गहरा आघात पहुँचा। इसी कारण गांधी जी की मृत्यु के दूसरे-तीसरे दिन ही इस काव्य के 46 सॉनेट स्वतः स्फुर्त हुए। कवि के शब्दों में 'महात्मा गांधी के अवसान का दूसरा-तीसरा दिन। अचानक संध्या समय लिखने बैठ गया और प्रभात तक लिखता रहा। यही क्रम दूसरे दिन भी रहा। फलस्वरुप ये स्वानुभूतियाँ सामने आईं। जो मर्मान्तक पीड़ा विश्व के अणु-अणु में परिव्याप्त थी, जो विराट् क्रन्दन आसुमेरु सप्त सागरों के हृदय को मन्थित कर रहा था तथा जिस गहन-भावना-ज्वार से जन-जन-मन विक्षुब्ध थे, विमर्दित थे, उन्हींकी अभिव्यंजना मेरी सरस्वती ने इन स्वानुभूतियों के रूप में की है। भावावेश की प्रबलता में भाषा पिछड़ जाती थी और एक पंक्ति के लेखनी-बद्ध होते न होते दूसरी पंक्ति सम्मुख मँडराने लगती थी।' [2] महात्मा गांधी भारतीय संस्कृति के पूर्ण प्रतीक थे। उन्होंने सत्य, अहिंसा की ज्योति को पुनः प्रज्वलित किया, जो सदियों से मन्द पड़ गयी थी। कोटि-कोटि जनता बापू के साथ चल पड़ी --

सत्य अहिंसा का था वह संदेश जिसे फिर तुमने आज
भीत भारतीयों को देकर, रख ली माँ के मुँह की लाज।[3]

भारतवासी जग पड़े। राष्ट्रप्रेम की भावना से संपूर्ण भारत आलोकित हो उठा --

---

1- 'उषा : मूल्यांकन तथा विश्लेषण' , प्रो0 शम्भुशरण, पृ0 6
2- 'गांधी-भारती' , (ये स्वानुभूतियाँ) गुलाब , पृ0 3
3- वही , पृ0 29

स्वतंत्रता का झंझानिल वह, जगा दिया कन्धे झकझोर
सोये हुए राष्ट्र को जिसने, दिया विश्व को नव संदेश
सत्य-अंहिसा का, निस्पंद पड़े मानस में उठा सुवर्ण-हिलोर
राष्ट्र-प्रेम की, महातेज से किया प्रभासित सारा देश।[1]

देश-प्रेम से सारे देश में क्रांति की लहर दौड़ गई। फलस्वरूप गुलामी की बेड़ियाँ टूट गयीं --

टूट गयीं तड़-तड़ करके बेड़ियाँ युगों की बाँधी थी
महाक्रांति बनकर आई जब वह गांधी की आँधी थी।[2]

महात्मा गांधी ने भारतवासियों में सत्याग्रह, सत्य, प्रेम, अहिंसा, शांति, त्याग इत्यादि भावनाओं को भर दिया। फलस्वरूप दलितों, दुखियों का भी उत्कर्ष हुआ --

मिला व्यष्टि को सत्याग्रह का शस्त्र, समष्टि हृदय को सत्य,
प्रेम-अहिंसा की कोमल भावना, विश्व को दृष्टि नवीन
आत्मिक बल की, मिली ज्ञान को शांति, भाव को कर्मठ भृत्य
सेवा-यन्त्र-सदृश, प्राणों को पीर, त्याग वैभव को दीन।[3]

कवि के जीवन पर महात्मा गांधी का अमिट प्रभाव है। कवि उसे त्रेता का तापस और द्वापर का सारथी मानता है। उसी तेज से विभूषित गांधी की आत्मा गाँव-गाँव में ध्वनित हो रही है --

त्रेता का तापस, द्वापर का वही सारथी, कलि में आज
संत बना सेगावँ गाँव का पहने सित खद्दर का साज।[4]

गांधी युग-पुरुष थे। उनके प्रयास से संपूर्ण विश्व का भेद-भाव मिट गया। उन्होंने विश्व में समानता एवं एकता का उद्घोष किया ---

मिटे द्वैत के भाव, राष्ट्र-कुल-धर्म-अर्थ-गत भेद सभी,
एक विश्व कर उठा एकता का अपनी उद्घोष तभी।[5]

1- 'गांधी-भारती', पृ0 37
2- वही, पृ0 37
3- 'गांधी-भारती', गुलाब, पृ0 42
4- वही, पृ0, 47
5- 'गांधी-भारती', पृ0 48

कवि ऐसे युग-पुरुष की वंदना करते हुए आकांक्षा रखता है --

मेरा क्षण-क्षण, देव ! तुम्हारी शुचिता से आलोकित हो,
कण-कण में देखूँ मैं निर्मल मूर्ति तुम्हारी, करुणाधाम !
मेरी वाणी में, कर्मों, संकल्पों में प्रतिभासित हो
स्निग्ध तुम्हारा ही उज्ज्वल व्यक्तित्व, अनघ, अकलुष, अभिराम।[1]

गांधी ने मानवता एवं जन-सेवा-भावना को फैलाने का अथक प्रयास किया। ग्राम-सेवा, राष्ट्र-सेवा, और भू-सेवा की भावना उनके जीवन में कूट-कूट कर भरी थी --

जन-सेवा, जीवन-सेवा, पुर-ग्राम-राष्ट्र-भू की सेवा
सेवा निखिल मनुजता की, कष्टों के पारावार-निमग्न।[2]

कवि गांधीवाद से प्रभावित है, बापू के मानवतावादी विचार का समर्थक है। कवि की मान्यता है कि अगर बापू की तरह हम जन-सेवा कर सकें, तभी भारतवासी कहलाने योग्य हैं, अन्यथा हमें कृतघ्न की संज्ञा मिलेगी ---

ऐसी हो सेवा तो बापू के भारत के वासी हम
जीवनमृत अन्यथा कृतघ्न, अविश्वासी, कुलनाशी हम।[3]

मेरे भारत, मेरे स्वदेश [4]

मेरे भारत, मेरे स्वदेश कविवर गुलाब का एक मुक्तक-संग्रह है। इसका स्वर राष्ट्रीय है, देश-प्रेम से ओत-प्रोत। राष्ट्र कवि दिनकर के **परशुराम की प्रतीक्षा** काव्य की तरह ही भारत पर चीनी आक्रमण की प्रतिक्रिया में इस ग्रंथ की अधिकांश कविताएँ लिखी गयीं। राष्ट्र की संकटकालीन परिस्थिति ने कवि को शंखनाद करने के लिये विवश कर दिया। कवि ने राष्ट्र के लिए प्रयाण-गीत, डिंगल-काव्य के प्रतिरूप वीररस के दोहे तथा राष्ट्रीय

1- गाँधी-भारती, पृ0 49
2- 'गांधी-भारती', गुलाब ,पृ0 41
3. 'गाँधी-भारती' गुलाब, पृ0 41
4. रचनाकाल (1962), प्रकाशन-काल (1963)

भावना से युक्त कविताओं का प्रणयन किया। **मेरे भारत, मेरे स्वदेश** शीर्षक कविता में कवि ने देश की महिमा का गान किया है --

तू राम-कृष्ण की मातृ-भूमि
सौमित्रि-भरत की भ्रातृ-भूमि
जीवन-दात्री भव-धातृ भूमि
तुझको प्रणाम, हे पुण्य-वेश !
मेरे भारत, मेरे स्वदेश ![1]

कवि ओजभरी वाणी में भारतवासियों को युद्ध के लिए प्रेरित करता है। किन्तु यह युद्ध शांति के लिए है --

द्वादश रवि तेरी भृकुटि क्रुद्ध
तू काल-रूप हनुमत प्रबुद्ध
कर आज शांति के लिए युद्ध
उठ जाग जाग, ओ सुप्त शेष !
मेरे भारत, मेरे स्वदेश ![2]

कवि गुलाब की राष्ट्रीयता राजनीतिक नहीं, सांस्कृतिक है। आलोच्य काव्य की अनेक कविताओं में कवि की राष्ट्रीयता ओजपूर्ण वाणी में अभिव्यक्त हुई है :--

दे मसल, बढ़े जो चरण क्रूर
कर दे मतंग-मद चूर-चूर
हिमगिरि क्या ! उत्तर ध्रुव सुदूर
तेरी ध्रुव सीमा हो अशेष
मेरे भारत, मेरे स्वदेश ![3]

इसमें गुलाब जी का 'प्रयाण-गीत' भी बहुत सुन्दर है। यथा --

मुकुट नगाधिराज का, झुका तनिक सँभाल दो
बढ़ो कि आज चीन की जमीन को उछाल दो
बढ़ो की आज मोड़नी

---

1. मेरे भारत, मेरे स्वदेश, गुलाब , पृ0 2
2. वही, पृ0 4
3- मेरे भारत, मेरे स्वदेश, पृ0 4

तुम्हें लहर अनन्त की
बढ़ो कि आज तोड़नी,
अनी दिंगत-दंत की।[1]

'प्रस्तुत काव्य-संग्रह में 'वीर-भारती' शीर्षक के अन्तर्गत 108 दोहों को संकलित किया गया है जो वीर रस के हैं और जिन्हें गुलाब-शतक ही कहना चाहिए। इन दोहों ने कवि को प्राचीन तथा नवीन वीर-काव्य प्रणेताओं की पंक्ति में प्रतिष्ठित कर दिया है। कवि ने **बिहारी-सतसई** का बीसों बार पाठ किया है ; अतः दोहों के स्वस्थ स्वरूप का कवि को अच्छा ज्ञान है। फिर भी कवि ने कहीं से मजमून छीनने की कोशिश नहीं की है, सर्वत्र मौलिकता है। बिहारी तथा अन्य श्रृंगारिक कवियों के मजमून छीन लेने की बात तो इसलिए भी नहीं उठती कि गुलाब जी के ये दोहे वीर-रसात्मक हैं। मुक्तक-रचना में सफलता विधायक जिन तत्त्वों की चर्चा आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने की है, वे सभी गुलाब जी में हैं।

इन दोहों में कल्पना की समाहार शक्ति के साथ-साथ भाषा की समास शक्ति का अद्‌भुत संयोग दिखलायी पड़ता है। यह ज्ञातव्य **अवश्य** है कि गुलाब जी उन कवियों में नहीं हैं जो भावानुभूति के बाद उच्छिष्ट की-सी अवस्था में काव्य लिखते जाते हैं। गुलाब जी शब्द और उनके अर्थो पर विचार करते रहते हैं, उनके द्वारा प्रयुक्त शब्द बाह्य जगत् में जिस रूप को अभिव्यक्त करते हैं उनको वे मन ही मन समझते और तौलते रहते हैं।'[2]

गुलाब जी को शब्दों की आत्मा की परख है और वे उनका उचित व्यवहार करते हैं। यथा --

मरे न कविता रसमयी, मरे न सत्य विचार
रण में मरे न शूरमा, उठ-उठ करें हँकार। [3]

गुलाब जी के इन दोहों में रीतिकालीन कवियों की तरह नायिकाओं का श्रृंगार-व्यापार एवं सौन्दर्य-चित्रण नहीं मिलता। किन्तु अलंकरण के प्रति उनका झुकाव अवश्य दिखायी पड़ता है।

1- 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश', पृ0 9
2- 'उषा' : मूल्यांकन तथा विश्लेषण , प्रो0 शम्भुशरण, पृ0 7
3- 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश', गुलाब (दोहा सं0 10) , पृ0 17

निष्कर्षतः, आलोच्या काव्य-ग्रंथ गुलाब जी की राष्ट्रीयता एवं स्वदेश-प्रेम की प्रतिनिधि-रचना है जो कवि को राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी, सुभद्रा कुमारी चौहान तथा राष्ट्रकवि दिनकर की पंक्तियों में प्रतिष्ठित करती है।

रूप की धूप[1] :-

रूप की धूप शीर्षक मुक्तक-संग्रह में कविवर गुलाब ने सौ से अधिक दोहे और लगभग पाँच सौ चौपदों को प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत काव्य-संग्रह का सर्वप्रथम अंश है 'अस्मिता' जिसमें कवि की विभिन्न मन-स्थितियों का चित्रण मिलता है। यहाँ कवि ने अपनी विवशता, आशा, निराशा, उपेक्षा एवं वेदना को व्यक्त किया है। कवि की उपेक्षा इन पंक्तियों में मुखरित हुई है --

घूँट मैं विष का पिये जाता हूँ
विश्व को अमृत दिये जाता हूँ
अब न कोई कहीं उदास रहे
सबका दुर्भाग्य लिये जाता हूँ।[2]

कवि की निराशा को इन पंक्तियों में भी देखा जा सकता है --

तिनके-सा आँधी में तनकर ढह गया हूँ मैं
सागर के ज्वार-सा उफनकर बह गया हूँ मैं।
बनना तो चाहा था विजय-स्तंभ वाणी का
दंभ का समाधि-स्थल बनकर रह गया हूँ मैं।[3]

अथवा --
गीतों को देख कभी हँसे कभी रोये
बालू पर लिखो, लहर-लहर में पिरोये
प्रतिध्वनि लौटी न कभी जीवन के सुर की
निशि में जो स्वप्न बुने, दिन में सब खोये।[4]

1- रचनाकाल (सन् 1960-70) प्रकाशन (सन् 1971)।
2- 'रूप की धूप' , गुलाब , पृ0 13।
3. 'रूप की धूप', पृ0 12

ऐसे अंशों में कवि निराशा से उत्पन्न क्षोभभरी निष्क्रियता को ही प्रदर्शित करता है। ऐसी विषम स्थिति में भी कवि पराजय स्वीकार करने को तैयार नहीं है। अभी भी उसके पास आत्मबल है ---

काँटों को फूल, रजता को रजत मानता
हार-हार कर भी नये युद्ध सदा ठानता
माना मन एक चूर-चूर पड़ा धरती पर
किंतु एक मन है जो पराजय न जानता[2]

इसी संग्रह में फारसी-पद्धति से छंदों को ग्रहण कर व्यक्तिगत भावों की अभिव्यक्ति की गयी है; लेकिन उर्दू और फारसी के कवियों की तरह प्रदर्शन और आडम्बर नहीं है। 'महत्त्वशील तत्त्व यह है कि सभी भावनाएँ पूर्णतः सात्विक हैं, फारसी या उर्दू कवियों की बाह्य अभिव्यक्ति के समान केवल प्रदर्शन और शब्दाडम्बर में उलझकर सस्ती वाहवाही लूटने का छलपूर्ण प्रयास मात्र नहीं।'[3]

रूप की धूप हिन्दी-संसार में एक नव्य प्रयोग है। कवि ने निश्छलतापूर्वक अपनी सारी भावनाएँ प्रकट की हैं। 'रूप की धूप' शीर्षक अंश में कहीं भी हास्यास्पद स्थिति नहीं आने पायी है। इसीलिए इसकी पंक्तियाँ मार्मिक हो गयी हैं। इसमें रूप की मीमांसा, उसका विश्लेषण, प्रभाव, निकटता का आनन्द, रूप के कारण मन की कसमसाहट, उससे दूर होने पर खीझ और वेदना आदि का मोहक रूप प्रस्तुत करना कवि का उद्देश्य रहा है। रूप के प्रति आकर्षण को कवि बड़ी सादगी से प्रस्तुत करता है ---

ज्योति-सी उमड़ चली लगती है
स्वर्णमय गली-गली लगती है
श्याम-घन-केश हटा लो मुख से
रूप की धूप भली लगती है।[4]

---

1 'रूप की धूप', पृ0 5
2. 'रूप की धूप', पृ0 5
3. 'रूप की धूप' , भूमिका, पृ0 6 , सीताराम चतुर्वेदी
4. वही, पृ0 44

कवि रूप का विश्लेषण करते हुए लिखता है --

प्रेम की प्रथम चेतना है रूप
मर्म की मूर्त वेदना है रूप
व्यक्त मुस्कान-सी विधाता की
सृष्टि की अमर प्रेरणा है रूप
फूल के हास से बना है रूप
चाँद की छाँह से छना है रूप
चेतना-मुकुर, प्रेम का प्रतिबिम्ब
ईश की आत्मकल्पना है रूप।[1]

कवि नेत्र के प्रभाव को विश्लेषित करते हुए कहता है --

नेत्र विष, अमृत हैं, शराब भी हैं
मधुप हैं चाँद हैं, गुलाब भी हैं
कौन इनसे न मर, जिये, झूमे
मौन हैं, प्रश्न हैं, जवाब भी हैं।[2]

यह 'दृष्टि' शुद्ध स्वकीया नायिका तुल्य है जो अपने प्रिय के द्वारा दी जाने वाली समस्त यातनाओं को स्वीकार करने के लिए व्याकुल और उत्सुक है --

हारती गई पर न हारी है
हार में भी सदैव प्यारी है
भाँवरें सैकड़ों भरीं फिर भी
रूप की दृष्टि चिर-कुमारी है।[3]

'योग-वियोग' नामक खण्ड में कवि ने संयोग-वियोग-जनित भावनाओं को चित्रित किया है। गुलाब जी ने योग-वियोग को पूर्णतः भारतीय तथा अभिनव परिधान में प्रस्तुत किया है, उर्दूवालों की तरह इसमें बाह्य प्रदर्शन नहीं है। कवि ने संयोग की उत्सुकता को बड़ी ही कोमलता के साथ प्रस्तुत किया है ---

---

1- 'रूप की धूप' , पृ0 48।
2- वही, पृ0 61।
3- वही, पृ0 62।

प्यार का फूल यह, खिले न खिले
विश्व की यवनिका, हिले न हिले
आज जी भरके देख लेने दो
कल मधुर रात यह मिले न मिले।[1]

कवि ने वियोग को भी बड़े सात्त्विक ढंग से प्रस्तुत किया है --

खो गयी तुम जगत के रेले में
यों तड़पता हूँ मैं अकेले में
अपने माता-पिता से छूटा हुआ
जैसे बालक हो कोई मेले में

'उमरखय्याम' शीर्षक अंश में कवि ने खय्याम के दर्शन को रुबाइयों में प्रस्तुत किया है। कवि ने जिस रीति से उमरखय्याम के दर्शन को प्रस्तुत किया है, वह निश्चय ही श्लाघ्य एवं नवीन है --

स्वर्ण इतना कि सके तौल हिमालय के श्रृंग
राज्य का भूमि-गगन, दूर ग्रहों तक विस्तार
आप जब तुम न रहे, बंधु ! सभी निष्फल है
मृत्यु, बस, मृत्यु यही एक तुम्हारा अधिकार ।[2]

कवि ने इसी काव्य-संग्रह में 'विविधा' शीर्षक अंश में विभिन्न यात्राओं का भी वर्णन किया है। इनमें कश्मीर, बदरीनाथ और हरिद्वार की यात्राएँ मुख्य हैं। इन यात्राओं में कवि ने भावुकता के साथ-साथ भक्ति और प्रकृति-मुग्धता का रस-वर्षण किया है। हरिद्वार की गंगा की महिमा का वर्णन करते हुए कवि कहता है --

अंग में उमंग ही उमंग लिये आई है
शिव की विभूति निज संग लिये आई है।[3]

रूप की धूप में कवि ने अपने स्वजनों की मृत्यु से उत्पन्न दुःख को

1- रुप की धूप , गुलाब , पृ0 70।
2- वही, पृ0 74।
3- वही , पृ0 91।

भी प्रस्तुत किया है जिसकी झलक 'बेढब जी' शीर्षक कविता में मिलती है। 'दोहा-शतदल' इस काव्य-संग्रह का एक नवीन अंश है। इसमें विभिन्न विचारों, अनुभवों, प्रयोगों तथा वृत्तियों को नये प्रकार से अभिव्यक्त किया गया है ---

अब आँसू कैसे थमें, मिलकर दिया बिछोह
दृग में काँटे बो गई, वही कँटीली भौंह।[1]

कुछ दोहों पर रीतिकालीन कवि बिहारी की छाया भी दिखाई पड़ती है। बिहारी के निम्नांकित दोहे का प्रभाव उपर्युक्त दोहे पर दिखाई पड़ता है --

नासा मोरि, नचाइ दृग, करी ककी की सौंह।
काँटे सी कसकति हिये, वहै कँटीली भौंह।[2]

यह काव्य कवि के जीवन में घटित घटनाओं के आधार पर निर्मित है। कवि के प्रेमी-जीवन का परिचय इस काव्य की 'कुँवारी दृष्टि' , 'आज की रात' और 'उमरख़्य्याम' आदि कविताओं से मिलता है। विशुद्ध सात्त्विक एवं भारतीय भावों को फारसी एवं उर्दू के छंदों मे पिरो देना कवि की सबसे बड़ी सफलता है।

नूपुरबँधे चरण[3] :-

नूपुरबँधे चरण कवि गुलाब का एक ऐसा काव्य-संग्रह है जिसमें कवि-जीवन की 16 वर्ष की अवस्था से लेकर करीब 35-36 वर्ष की अवस्था तक की अनुभूतियाँ संग्रहीत हैं। 20 वर्ष की सृजनकाल की अवधि अपने आप में बहुत लम्बी होती है। इस बीच कवि मन की अनेक अनुभूतियों से प्रभावित हुआ है। उन्हीं सारी अनुभूतियों का चित्रण प्रस्तुत काव्य-संग्रह में मिलता है। कवि ने भी ऐसा स्वीकार किया है -- 'मुझे आशा है, किशोर मन की रोमांटिक कल्पनाओं से लेकर जीवन की प्रौढ़तम अनुभूतियों की ये रचनायें सभी अवस्था के पाठकों को रुचिकर लगेंगी।'[4]

प्रस्तुत काव्य-संग्रह में कवि ने विविध प्रकार की विधाओं का प्रयोग किया है। अंग्रेजी साहित्य की विधाओं का भी सफल प्रयोग हुआ है। जैसे 'एक कुम्हार

1- 'रूप की धूप' , गुलाब , पृ0 14
2- वही , पृ0 145
3- रचनाकाल (1940-60) प्रकाशन-काल (1978)
4- 'नूपुरबँधे चरण', पृ0 4

बाला के प्रति' सम्बोध-गीत जो अंग्रेजी में ओड के नाम से जाना जाता है तथा गाथा-काव्य (Lyrical Ballad) तथा प्रतीक-काव्य (Allegary) भी जिनका प्रयोग क्रमशः 'जादू का देश' एवं 'मृगतृष्णा' नामक कविताओं में किया गया है, इस संग्रह में हैं। इनके अतिरिक्त 'गड़ेरिये के गीत' और 'हवा का राजकुमार' जैसे मौलिक काव्य-प्रयोग भी हैं। यही नहीं, प्रस्तुत काव्य-पुस्तक में 'शकुंतला के प्रति' जैसे शोक-गीत और 'परशुराम का पश्चाताप', जिसे कवि ने 'एकालाप' का नाम दिया है, भी कवि की मौलिक सूझ-बूझ के परिचायक हैं।

प्रस्तुत काव्य-संग्रह में प्रकृति के प्रति प्रेमानुराग, मन की अभिलाषाओं सूक्ष्म प्रेमानुभूतियों , सौन्दर्य-बोध , मिलन, विरह, तथा शोक की स्थितियों का चित्रण मिलता है। कवि संध्या को मानवीकृत रूप में प्रस्तुत करता है, जिसका रमणीय चित्र निम्न है ---

नूपुरबँधे चरण,
संध्या के, नूपुरबँधे चरण
सागर की लहरों पर थिरक-थिरक कर
नाच रही है किरण-बालिका थर-थर
पिछल रहीं जल पर चंचल पगतलियाँ
मुक्त पवन में उड़ता अंचल फर-फर
श्याम अलक, पलकें मद-लोहित, मुखछवि पीत-वरण
संध्या के नूपुरबँधे चरण। [1]

कवि के तरुण हृदय ने मिलन और विरह की स्थितियों का बड़ा ही मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है। 'एक कुम्हार-बाला के प्रति' 'सम्बोध-गीत' से एक इसी भाव की बानगी प्रस्तुत है --

सो जाने पर गृह में सब के
आयेंगे जीवन-धन दुबके
तेरी कोमल बाँहें
कितनी भी वे चाहें
खड़ी मौन कोने में रहना छिपा प्रकंपित काया
खोल न देना प्रथम-निशा में गाँठ अधर-कलिका की।
फिर न लौटती, री ! लुट जाती निधि जो कुमारिका की[2]

1- 'नूपुरबँधे चरण' , गुलाब , पृ0 10
2- वही , पृ0 14

विरह की स्थिति को ''जादू का देश' की निम्न पंक्तियाँ प्रस्तुत करती हैं --

इधर प्रेम-वंचित अभागिनी
गातीं व्याकुल विरह-रागिनी
'रात पिया बिन काल-नागिनी
डँसने को आयी।'[1]

एक समय था जब कवि का मन संत विनोबा से जुड़ा हुआ था, कवि की भावनाएँ उनके स्वागत में शब्दों के रूप में उमड़ पड़ीं ---

गाँव-गाँव में गाता कोई बापू का संदेश चला
छ्यासठ कोटि पगों से उठकर, यह लो, सारा देश चला
कोटि-कोटि हलधर के जोड़े चले नील घन-माला-संग
भूमि चली, नभ चला, चराचर चले, स्वयं सर्वेश चला
सत्य-अहिंसा-साधक जग में, किसने कहा, 'अकेला है !'
आज धरा-माँ के मंदिर में भू-पुत्रों का मेला है।[2]

कवि की शोक-गीतियाँ भी इस काव्य-संग्रह में हैं। अपनी दादी, गोद लेने वाली माता एवं पुत्री शकुंतला की स्मृति में इन गीतियों को कवि ने लिखा है। इस संग्रह में शोकसम्बन्धी आठ गीत हैं। 'शकुंतला के प्रति' शोक-गीत में कवि की प्रवृत्ति अधिक रमी है। यह बहुत ही मार्मिक गीत है। कवि की अन्य शोक-गीतियाँ भी काफी मार्मिक हैं। 'मेरा हृदय कुलिश कठोर' शीर्षक गीत भी बहुत सुन्दर है। 'इसमें 'प्राण के जलजात' द्वारा कवि ने आलम्बन के साथ अपने सम्बन्ध की बड़ी सुन्दर अभिव्यक्ति की है --

भग्न सर-सा साँस मैं भरता रहूँ दिन-रात
तोड़कर ले जाय कोई प्राण का जल-जात।[3]

निश्चय ही निराला के प्रख्यात शोक-गीत 'सरोज-स्मृति' की परम्परा को इस संग्रह के शोक-गीत समृद्ध करते हैं। भावों की समृद्धि की दृष्टि से गुलाब

1- 'नूपुर बँधे चरण' , गुलाब पृ0 51
2- वही , पृ0 109
3- 'हिन्दी-गीतिः परम्परा और प्रतिफलन' , डॉ नर्वदेश्वर राय, (लघु-प्रबंध) प्रथम संस्करण 1977 प्रकाशन अभिनव भारती 43 सम्मेलन मार्ग इलाहाबाद, पृ0 112

जी का प्रस्तुत काव्य अत्यन्त ही सफल है।

सीपी-रचित रेत[1]

'सीपी-रचित रेत' कवि गुलाब खड़ेलवाल का एक ऐसा काव्य-संग्रह है जिसमें सॉनेट का प्रयोग किया गया है। इस काव्य में 57 सॉनेट संग्रहीत हैं। प्रस्तुत काव्य-संग्रह में कवि के मन में उठनेवाले विभिन्न मनोभावों का सूक्ष्म विवेचन मिलता है। इसमें कवि ने अपने प्रवृत्ति-वैविध्य को प्रस्तुत किया है। यथा -- आस्तिकता, प्रगतिशीलता, प्रेम का स्वरूप, मिलन, विरह, सौन्दर्य, प्राकृतिक-सौंदर्य इत्यादि।

आलोच्य काव्य के प्रथम सॉनेट में कवि की पंक्तियाँ प्रगतिवादी स्वर को मुखरित करती हैं। कवि का काव्य-विहग स्वच्छन्द है, जो एक प्रतीक है प्रगतिशीलता का ---

मेरा विहग स्वर्ग से भू की परिक्रमा देता क्षण में
और क्षीण किलकारी भरता-जग का, जग के आंगन में।[2]

कवि को अपने जीवन में काफी उपेक्षा और निराशा मिली है। फिर भी वह अपने को अकेला महसूस नहीं करता क्योकि, वह आस्तिक है, और इसलिए हमेशा उसके स्वामी उसके साथ रहे हैं ---

सदा पास तुम तो थे, स्वामी ! मैं कब यहाँ अकेला था !
यश, वैभव, सुख का कोलाहल, सब पलभर का मेला था।[3]

कवि ने इस काव्य में प्रेम के विभिन्न पक्षों का चित्रण किया है। उसने मिलन के चित्र को 'सीपी-रचित रेत' शीर्षक कविता में प्रस्तुत किया है ---

शैशव की रेखा का अतिक्रमण करते ही पग-पग पर
अगणित सीमायें बढ़तीं, तब आँख बचाकर लोगों की
मिलते हम-तुम प्रति पखवारे, और एक दिन मिल-जुलकर
तय करते, औषधि विवाह ही एक लक्ष अभियोगों की।[4]

कवि ने प्रेमिका से प्रथम मिलन का एक और चित्र प्रस्तुत किया है ---

---

1- रचनाकाल (सन् 1941-43) प्रकाशन काल (1980)
2- 'सीपी-रचित रेत', गुलाब, पृ0 1
3- वही, गुलाब, पृ0 3 4- वही, पृ0 7

सजनी। उस रजनी में ही तो प्रथम बार आयी थी तुम
लज्जा में लिपटी-सी धीरे-धीरे, प्रात-पवन जैसे
मृदुल समर्पण को, अवगुंठित कर में लेकर विकच कुसुम
अनाघ्रात यौवन का, मेरे पास कुंठिता-सी भय से।[1]

कवि ने विरह की स्थितियों का भी बहुत मार्मिक चित्रण किया है। संयोग-कालीन स्मृतियाँ कवि को वियोगावस्था में अत्यधिक मर्माहत कर देती हैं। यथा :-

जैसे भ्रमरावली पैठकर पंखुरियों में फूलों की
चल चरणों से छिन्न-भिन्न कर देतीं परिमल का घेरा,
वैसे ही निज दंशन द्वारा मधुर प्रेम की भूलों की
मृदु गुंजनमय स्मृतियाँ आकर, हृदय बेध देतीं मेरा।[2]

कवि अपनी प्रेयसी के वियोग में इतना व्यथित है कि उसे अपना जीवन ही व्यर्थ प्रतीत होता है ---

विकल प्रेम। रो रहे प्राण, यह व्यथा असह्य हुई मन की
आह ! तुम्हीं बतला दो, आवश्यकता क्या थी जीवन की ?[3]

अतः कवि गुलाब भी जयशंकर प्रसाद और दिनकर की तरह [2] ऐसी जगह की खोज में है, जहाँ पीड़ा और वेदना नहीं हो। वे 'विकलता' को सम्बोधित करते हुए कहते हैं ---

जहाँ न हो पीड़ा, दंशन, यह त्रिभुवन-व्यापी आग जहाँ,
अरी विकलते ! मुझे फेंक दे वहीं कहीं तू, किन्तु कहाँ ?[4]

कवि का विरह-व्यथित मन विद्यापति की गोपियों की तरह पक्षी बनकर अपनी प्रेमिका से मिलने की अभिलाषा रखता है, परन्तु वह विवश है :--

सोया-सोया देख रहा मैं खिड़की के बाहर अपलक
जहाँ बिछी है रात चाँदनी, हिम-सी श्वेत हुलासमयी।

1- 'सीपी-रचित रेत', पृ0 47।
2- वही, पृ0 31
3- 'सीपी-रचित रेत' , गुलाब, पृ0 34
4- प्रसाद की 'मेरे नाविक' और दिनकर की 'परदेशी' कविता दृष्टव्य है

पंख लगे होते तो उड़कर आज पहुँच जाता तुम तक
हाय ! तड़पती क्यों ये दो आँखें ही बन पाँखे न गयीं ![1]

संस्कृत के महाकवि कालिदास की तरह गुलाब ने भी विरहणी का चित्र प्रस्तुत किया है। उसकी प्रेमिका विरह-विदग्धा है ---

देख रहा मैं दूर चाँदनी के देशों के पार कहीं,
शून्य कक्ष में, मूँद गुलाबी पलकें, बाला एक थकित
दिव-श्रम से, सोयी, कपोल में बिंबित जिसके पड़ी वहीं
उतरी हुई सितार, अधखुली अधर-कली है मंदस्मित।[2]

कवि ने इस काव्य में प्रेम की महत्ता भी प्रतिपादित की है। यथा --

कोई हँसे प्रेम को मानव की दुर्बलता कह-कहकर,
मैं तो मानव-जीवन की सार्थकता इसे मानता हूँ।
बुद्बुद से उठ गिरनेवाले अन्य भाव जितने भू पर
थोथापन कितना है उनमें, अच्छी तरह जानता हूँ।[3]

कवि प्रेम के स्वरूप को भी कहीं-कहीं चित्रित करता है। यथा --

भूल समाज-भवन को जन-बन जिसके विविध उपकरण हैं,
ऐकातिक जीवन पर करता राज्य अकेला प्रेम सदा।
मोह, प्रीति, उन्माद सभी ये उसके रूप मनहरण हैं
जो झकझोर दिया करते हैं मानव-मन को यदा-कदा।[4]

कवि ने इस संग्रह के बहुत से सॉनेटों में अपनी प्रेमिका के सौन्दर्य का सूक्ष्म विवेचन किया है ---

तुम इतनी सुंदर हो जितना लाल-लाल पाटल का फूल
हरित घाटियों के अंचल में, या शरदेंदु पूर्णिमा का
नील गगन में उगने के क्षण, ज्योति-मधुर सरिता के कूल
जिसका स्वर्ण-चित्र हँसता हो किरणों से जल पर आँका।[5]

1- 'सीपी-रचित रेत', गुलाब , पृ0 37
2- 'सीपी-रचित रेत' , गुलाब, पृ0 45
3- वही , पृ0 57 4- वही , पृ0 57
5- वही , पृ0 25

अथवा ---

नारंगी की नन्हीं-नन्हीं कलियों-सा कह दूँ इनको
ये उतने ही मधुर प्रेमरस से पूरित हैं, सुंदर हैं
पतले-पतले होंठ तुम्हारे, हुआ हृदय बेसुध जिनको
देख, आह ! उन पीली मुरझानेवाली कलियों से बढ़कर हैं।[1]

इस काव्य के अन्य सॉनेटों में कवि ने प्रकृति-सौदर्य का भी चित्रण किया है। इन गीतों में कवि ने छायावादी पंत की तरह नारी के रूप में प्रकृति का मानवीकरण किया है। शिशिरबाला का एक चित्र द्रष्ठव्य है ---

अर्धनग्न-तनु, मुख पर झीना किसलय-अवगुंठन खींचे
बैठी उन्मन प्रेम-व्यथाएँ भर कंपित स्वर-लहरी में,
चिर एकाकिनि ! अयि मरुवासिनि ! इस पीपल तरु के नीचे
कौन वसंती स्वर अलापती तुम निर्जन दोपहरी में।[2]

निष्कर्षत:, भाव-वैविध्य और प्रयोग-आकर्षण ही इस काव्य की विशेष महत्ता है।

आयु बनी प्रस्तावना[3] :-

आयु बनी प्रस्तावना महाकवि गुलाब के 43 गीतों का काव्य-संकलन है। कवि ने अपने अन्य गीतों की तरह इसमें भी प्रेम की विभिन्न मनस्थितियों का चित्रण किया है। उसने प्रेमजनित मिलन, विरह, सौंदर्य, निराशा और उपेक्षा को वाणी दी है। आलोच्य काव्य-संग्रह का पहला गीत भक्तिपरक है, जिसमें वाणी की वंदना की गई है --

जीवन सफल करो
करूँ आरती, मातु भारती, चरण, चरण उतरो
जीवन सफल करो।[4]

1- 'सीपी-रचित रेत', गुलाब, पृ0 18
2- रचनाकाल (1948-70) प्रकाशनकाल (सन् 1981)
3- 'आयु बनी प्रस्तावना' , गुलाब, पृ0 1
4- वही , पृ0 52

एक अन्य गीत में भी कवि ने अपनी भक्ति-भावना को प्रदर्शित किया है ; यह करुणा के सागर, गुणों के निधि, नटनागर के चरणों में समर्पित है---

तुम उदार करुणा के सागर
सब गुण-आगर हे नटनागर !
भर दो मन की रीती गागर
चरण-शरण मैं नाथ। तुम्हारे
प्रतिपल, प्रतिक्षण साथ तुम्हारे।[1]

अन्त के दो गीतों के अतिरिक्त अन्य गीत प्रेम-प्रधान हैं। कवि ने मिलन की स्थिति को चित्रित करते हुए लिखा है ---

बिखर न जायें ये स्मृतियाँ उर बीच समेटो
आज शेष की रात, प्राण प्राणों से भेंटो
नहीं विदा की वेला है यह अमर मिलन की
दो हृदयों की कसक, देह की दूरी मेटो।[2]

अथवा ---
मनुहारों का क्षण कोई मनुहार न छूटे
उपहारों का क्षण कोई उपहार न छूटे
कभी आज की रजनी का श्रृंगार न छूटे
छूट जाय संसार किन्तु यह प्यार न छूटे।[3]

प्रेम-पथ कंटकाकीर्ण है, फिर भी कवि इस पर चलता रहा है --

सीधी, खड़ी, कड़ी पगडंडी, रपटन, जलमय झोंके
दृग में नींद, प्यास अधरों में, एड़ी दाह रही है
कौन पथिक ऐसे में भी पर, चलता ही जाता है।
मेरे मन में चित्र तुम्हारा पलता ही जाता है।[4]

कवि ने अपने मन की निराशा को भी अनेक गीतों में अभिव्यक्त किया है। प्यार के बिना उसका जीवन व्यर्थ है ---

---

1- 'आयु बनी प्रस्तवाना' , पृ0 2
2-वही, गुलाब, पृ0 3
3- वही , पृ0 10
4- वही , पृ0 47

(1) कभी किसीका प्यार न पाया, तिल तिल जलकर क्षार हो गया
नहीं किसीके मन को भाया, जीवन ही बेकार हो गया।'[1]

(2) टूटी हुई लहर हूँ मैं, मुझको अलकों का साज दो
छूटी हुई किरन हूँ मैं, मुझको पलकों में आँज लो।'[2]

(3)'हाय ! ये जल के थपेड़े रुक तनिक पाते।
प्राण के लघुदीप पग-पग पर बुझे जाते।
मैं जिधर मुह मोड़ता हूँ, मोड़ता है, मुँह किनारा
प्रिय। सरकता जा रहा है हाथ से आँचल तुम्हारा।'[3]

कवि के प्रेम में एकनिष्ठता है। इस संसार में उसकी प्रेमिका ही उसकी अपनी है। वह प्रेमिका के हृदय में भी अपने प्रति एकनिष्ठता एवं अनन्यता को देखने का आग्रही है ---

निमंत्रण आ रहे हैं चाँदनी को ज्वारके, सच है
नहीं मैं योग्य ऐसे प्राण-वेधक प्यार के, सच है
हृदय के स्पंदनो को किन्तु कैसे आज समझाऊँ !
मुझे तो एक ही तुम हो निखिल संसार के, सच है
किरण में उड़ रही जो वह सुनहली डोर मत देखो
किसीकी ओर मत देखो, किसीकी ओर मत देखो
कि मेरा जी दहलता है।'

कवि का प्रेम शरीरी नहीं, देहेतर है। अधरों के चुंबन और आलिंगन में भी उसकी आत्मा की प्यास नहीं बूझती --

अधरों का चुंबन पीकर भी अधर तृषित रहते हैं
बँध आकंठ भुजाओं में भी प्राण व्यथित रहते हैं
देह स्वयं बाधा बन जाती स्नेहभरे हृदयों की
खुलते नहीं भाव जो छवि में अंतर्हित रहते हैं

---

1. 'आयु बनी प्रस्तावना', पृ0, 13
2. वही, पृ0 14
3- 'आयु बनी प्रस्तावना' , गुलाब, पृ0 19
4- वही, पृ0 23

जीत-जीतकर भी मैं जैसे बाजी हार रहा हूँ
तुममें एक और जो 'तुम' है उसे पुकार रहा हूँ।[1]

कवि ने इन गीतों में अपने दुःख और व्यथा को यों अभिव्यक्त किया है कि उसमें उपेक्षा की भावना अभिव्यंजित होती है ---

बत्ती बना, ऐंठ निज कर से, स्नेह तनिक-सा डालकर
छोड़ दिया जो दीपक तुमने जल के बहते थाल पर
अब उसकी लौ की चिंता क्या, समा गयी जो शून्य में !
मैं आँसू की बूँद तुम्हारी, सूख गयी जो गाल पर।[2]

प्रस्तुत संग्रह के अनेक गीतों में कवि की विरह-भावना ही प्रमुख है ---

(1) तड़पता मैं अहर्निश, रूप की चितवन नहीं मिलती
कला मिलती, कला के प्राण की धड़कन नहीं मिलती।[3]

(2) न तन को चैन मिलता है, न मन को चैन मिलता है
न कोई आस फलती है, न कोई जोर चलता है
तुम्हारी याद छलती है, तुम्हारा प्यार जलता है
मरण की डोर में झूलूँ कि दृग की कोर में झूलूँ !
तुम्हें मैं किस तरह भूलूँ, तुम्हें मैं किस तरह भूलूँ ![4]

कवि ने अपनी प्रेमिका के सौंदर्य का वर्णन' करते हुए लिखा है ---

हृदय में बस गये मेरे, किसीके स्नेह के दो क्षण
गुलाबी सीप-सा आनन
खिले कचनार जैसा तन
सकुचते प्राण, पलकों में
अदेखी प्रीति के चुंबन[5]

1- 'आयु बनी प्रस्तवाना' , गुलाब , पृ0 34
2- वही, पृ0 41
3- वही, पृ0 66
4- वही, पृ0 70
5- 'आयु बनी प्रस्तावना', गुलाब, पृ0 81

कवि के विरह और दुःख के पीछे उसके पाप की छाया भी है ---

जिस सरिता के तीर गया मैं सूख गयी वह पल में
जिस शाखा को छुआ, टूट कर गिरी वहीं से जल में
जिसे दिया ओंठों पर मैंने फूट गया वह प्याला
झुलस गयी माला जो मैंने ले ली निज करतल में
जहाँ-जहाँ में गया नाश ने अपना नृत्य दिखाया
मेरे सिर पर पड़ रही किस गहन पाप की छाया ![1]

कवि विरह की जलन को शांत करने के लिए प्रेम का आकांक्षी है। उसके मरुस्थल जैसे जलते, उन्मत जीवन पर प्रेम-घटा की बूँदों की आवश्यकता है --

मुझे तुम्हारा स्नेह चाहिए
जलते मरु-सा जीवन जलता
आस न फलती जोर न चलता
पल-पल पागल प्राण मचलता
झम-झम करती प्रीति-घटा बन बरस पड़े वह मेंह चाहिए
मुझे तुम्हारा स्नेह चाहिए।[2]

पावसकालीन मेघों की छटाएँ कवि के विरह को उद्दीप्त करती हैं --

रुक-रुक झमक-झमककर बौछार हो रही है
बिजली चमक-चमककर उस पार हो रही है
जो हार थी गले का वह भार हो रही है
यह तीर-सी झड़ी ही तलवार हो रही है
मैं देखता गगन को बाँहें विकल पसारे
बरसात की बहारें, बरसात की फुहारें।[3]

कवि का आधा जीवन बीत गया है। वह जीवन के उत्तरार्ध में कदम रख चुका है, उसे इसका दुःख है ---

अब रूप विदा, वह राग, विदा
यौवन के खेले फाग, विदा

---

1. आयु बनी प्रस्तावना, गुलाब, पृ0 81.
2. वही पृ0 442.
3. 'आयु बनी प्रस्तावना, 55.

प्राणों की शीतल आग, विदा
अब विदा भविष्यत् की आशा,
प्रिय अब हो मुझे अतीत गया
आधा जीवन तो बीत गया। [1]

कवि की जीवन-वीणा की ध्वनि मंद होती जा रही है, वह इसका अनुभव कर रहा है ---

ओ मेरे जीवन की वीणा।
मैं देख रहा प्रतिक्षण तेरी ध्वनि होती जाती हैं क्षीणा।[2]

कवि एक दिन अपनी प्रेमिका से भी दूर हो जायगा। उसके कँटीले नयनों और उलझी अलकों से भी उसका नाता टूट जायगा ---

पलकों के आँसू से गीले
यद्यपि चरण पड़ेगे ढीले
उलझी अलकें, नयन कँटीले
व्यर्थ सभी होंगे पर जब मैं नाता तोड़ चला जाऊँगा।
तुमको छोड़ चला जाऊँगा।[3]

निश्चय ही भाव-समृद्धि की दृष्टि से गुलाब जी के गीत-काव्यों की यह श्रेष्ठतम कड़ी है।

शब्दों से परे[4]**:-**

प्रस्तुत मुक्तक-काव्य में गुलाब जी की 61 कविताएँ संकलित हैं। द्रष्टव्य है कि महाकवि गुलाब की काव्य-कृतियाँ विविधायामी रही हैं। इस परम्परा में **शब्दों के परे** कवि की बदली हुई मनोवृत्ति की परिचायक हैं। कवि की काव्य-यात्रा अनेक सोपानों से गुजरती हुई जीवन के समग्र दर्शन के 'विचारित सुस्थ' की ओर उत्क्रमण करती रही है। इसी क्रम में **शब्दों से परे** की रचना हुई है। वस्तुतः साहित्य भावयोग की साधना है और शब्द उसके साधन। साधना की उच्चतर भूमिका पर साधन की सीमाएँ समाप्त हो जाती हैं।

1- वही , पृ046
2- वही , पृ0 79
3- 'आयु बनी प्रस्तावना', गुलाब, पृ072
4- रचनाकाल (सन् 1960-1980) प्रकाशनकाल (1981)।

साधना ज्यों-ज्यों उठती है, साधन गिरता जाता है। कवि ने जिस मनोभूमि पर जीवन-सत्य की रागात्मक उपलब्धि की है, उसकी विवृत्ति शब्दों से पूर्णतः नहीं हो सकती, क्योकि वहाँ शब्द नहीं, निःशब्द के ही माध्यम से पहुँचना होता है।

शब्दों से परे उसी उदात्त मनोभूमि की एक झलक है। गुलाब के गीतों और मुक्तकों में हमने गुलाब का रूप देखा है, ग़ज़लों में गुलाब का स्वर सुना है, और '**शब्दों से परे**' में गुलाब की गंध निहित है।[1] हम जानते हैं कि कवि गुलाब युग-बोध के साथ ही अपनी रचनाओं को प्रस्तुत करते रहे हैं; प्रसाद, निराला और पंत की तरह ही। छायावादी प्रवृत्ति के कवि गुलाब ने इस काव्य में अन्य प्रमुख चार छायावादी कवियों की तरह एक दर्शन विशेष की ओर अपनी प्रवृत्ति का बोध कराया है। **अनामिका** और **गीतिका** में निराला के प्रार्थना-गीत जिस आध्यात्मिक स्तर को छूते हैं **शब्दों से परे** के अधिकांश गीत उसी स्तर की ओर उन्मुख हैं। महाकवि रवीन्द्र नाथ टैगोर की **गीतांजली** की याद इन गीतों के सन्दर्भ में ताज़ा हो आती है। इस काव्य की मूल भाव-भूमि उदात्त वैचारिकता पर आधारित है। **शब्दों से परे** का तात्पर्य इन्द्रियातीत से ही है। संत कवियों ने इसे अनेक रूपों में प्रतिपादित किया है। 'सियाराममय सब जग जानी। करउँ प्रणाम जोरि जुग पानी।' में इसी तत्त्व की सर्वव्यापकता बतायी गयी है। इन्द्रिय से भोग्य या अनुभवजन्य तत्त्व, माया, प्रकृति हैं, इन्द्रियातीत तत्त्व ही शब्दों से परे है। भक्त कवि सूरदास ने एक पद में इस ओर संकेत किया है ---

अविगत-गति कछु कहत न आवै।
ज्यों गूँगो मीठे फल को रस अन्तरगत ही भावै।
परम स्वाद सबही सु निरन्तर अमित तोष उपजावै।
मन-बानी को अगम, अगोचर, सो जाने जो पावै।
रूप-रेख-गुन-जाति, जुगति बिनु, निरालम्ब मन चक्रित धावै।
सब विधि सुगम विचारहिं ताँते, सुर सगुन लीलापद गावै।

निष्कर्ष यह कि भक्ति रस के इस परिपाक से हृदय को जो सौष्ठव प्राप्त होगा वह गूँगे के गुड़ की तरह के मिठास-सा होगा, जिसका वह अनुभूति-सुख तो पा लेगा किन्तु जिसकी अभिव्यंक्ति नहीं कर सकेगा।

प्रायः व्यक्ति सांसारिक सुख-दुख, उत्थान-पतन, अनुकूलता-प्रतिकूलता,

---

1. 'शब्दों से परे' प्रा0 विश्वनाथ सिंह आवरण पृष्ठ पर

सफलता-विफलता के घात-प्रतिघात से झकझोरे जाने पर जीवन के प्रति उदासीन हो जाता है। कवि विशेष अनुभूति-प्रवण होता हैं और वह सहज ही अपनी करुण अनुभूति को संघर्षमय जीवन से अलग एक विशेष शक्ति की ओर जोड़ देता है। ओज और पौरुष के कवि श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' ने जीवन के अन्तिम क्षणों में **हारे को हरिनाम** जैसे काव्य में इसीको मूर्त किया है। कवि गुलाब ने भी अपने वैराग्य-भावों को शब्दों-से परे काव्य में मूर्त किया है। इसकी भूमिका में डॉ0 राजेश्वर सहाय त्रिपाठी ने सच ही लिखा है -- 'छप्पन वर्षीय 'गुलाब' ने अपनी अनुभूतियों को विराग की ओर मोड़ दिया। गृहस्थ होता हुआ भी कवि गृहस्थ नहीं रह गया। **शब्दों से परे** में इसका परिपाक हम सरलता से पा सकते हैं। यह दर्शन-ग्रंथ नहीं है, पर दार्शनिक सिद्धांतो की स्वानुभूति कवि को नाना प्रकार से हो चुकी है।'[1]

इस काव्य की दूसरी कविता 'इसलिए मैं व्यक्त से अव्यक्त होना चाहता हूँ' , कवि गुलाब के आध्यात्मिक दर्शन को पूर्णतः व्यक्त करती है --

इसलिए मैं व्यक्त से अव्यक्त होना चाहता हूँ
क्योंकि मेरे व्यक्त की सीमा नयन है
क्योंकि मेरे व्यक्त की सीमा गगन है
क्योंकि मेरे व्यक्त की सीमा मरण है
इसलिए मैं अमृत से सम्पृक्त होना चाहता हूँ
क्योंकि मेरे व्यक्त की सीमा प्रकृति है
क्योकि मेरे व्यक्त की सीमा नियति है
क्योंकि मेरे व्यक्त की सीमा अगति है
इसलिए मैं काल से अविभक्त होना चाहता हूँ[2]

ऐसे ही भावोद्‌गारों का सहज दर्शन **शब्दों से परे** की अनेक कविताओं में होता है। जीवन की क्षणभंगुरता, अनित्यता और व्यर्थता अधिकांश कविताओं में व्यक्त हुई है --

(क) यह भी बीत जायगा, सब कुछ बीत जाएगा
कल तक जो था नया
आज मिट गया, उड़ गया .....।[3]
जिधर ग्रीष्म चल दिया उधर ही शीत जायगा

1- 'शब्दों से परे' , भूमिका, पृ0 2- वही, पृ0 2
3- 'शब्दों से परे' , गुलाब , पृ0 12

(ख) फूल रे। झड़ने के दिन आये
खिले बहुत दिन अब धरती से अड़ने के दिन आये।[1]

अस्तित्ववादी कवियों की तरह निराशा और मृत्यु-बोध का भरपूर चित्रण कवि गुलाब ने इस काव्य में किया है --

कितने शीघ्र आ गये हैं हम नदी के किनारे
कितने शीघ्र, कितने शीघ्र ![2]

अथवा --

हम सब मृत्यु की सजा पाये हुए कैदी हैं
हमें वद्य-स्थान की ओर ले जाया जा रहा है
धीरे, धीरे, धीरे।[3]

जग की अनित्यता और कठोरता के बोध से कभी कवि को पश्चाताप होता है और सांसरिक बधंन के प्रति छटपटाहट भी होती है --

मैंने यह साँप क्यों पकड़ा है
कि जिसने उलटकर मुझको ही सिर से पावों तक जकड़ा है?[4]

अथवा --

मैं जग को अंतर्हित कर लूँ
निज को निखिल भुवन में भर दूँ
प्रश्न स्वयं, मैं ही उत्तर हूँ
अपने अकथ अलौकिक क्षण के
कैसे पार उड़ूँ जीवन के ?[5]

पाँचवें दशक के आस-पास हिन्दी की नयी कविता अस्तित्ववादी दर्शन से विशेष प्रभावित हुई। रिक्तता, कुंठा, संत्रास, निराशा, मृत्युबोध, क्षण का महत्त्व, तथा अकेलापन आदि प्रवृत्तियाँ न्यूनाधिक रूप से नयी कविता में निहित हो गयीं। **शब्दों से परे** की अधिकांश कविताओं में ऐसी अनेक प्रवृत्तियाँ परिलक्षित होती हैं। यह सही है कि इन प्रवृत्तियों से मुक्त होने के लिए परम सत्ता के प्रति आकर्षण बहुत ही स्वाभाविक है। **शब्दों से परे** के कवि ने

1- वही, पृ0 10 2- वही , पृ0 33
3- वही , पृ0 37 4- वही , पृ0 21
5- 'शब्दों से परे', गुलाब, पृ0 18।

अपनी इसी भाव-यात्रा को मुख्यतः प्रस्तुत किया है। जीवन में अकेलेपन का बोध कवि को झकझोर देता है --

चारों ओर शलभों का मेला है
दीप यों सभी के साथ खेला है
फिर भी अपने में चिर-अकेला है।[1]

अथवा ---

फिरे, सब फिरे
लहरों के बीच हम अकेले ही तिरे[2]

अथवा --

सागर के तीर पर अकेले
मैंने आवर्त बहुत झेले।[3]

ऐसी मानसिकता से संघर्ष करते हुए कवि के मन में उस अज्ञात के प्रति विशेष आकर्षण है ---

ज्ञात नहीं कुछ, कौन शक्ति जो लिये जा रही मुझको खींचे
धरती पर, अंबर के नीचे।[4]

कवि विशेष आस्थावान है और उसे एक ही निवेदन करना है --

फूलों की पँखुरियों पर रखना, प्रभु।
काँटों पर या मुझे सुलाना तुम
एक ही निवेदन है बार-बार
पल भर भी मन से मत भुलाना तुम।[5]

जीवन-संघर्ष से जूझते हुए कवि ने माया से जकड़े रहने पर भी हँसते रहने का स्वर मुखरित किया है। यथा ---

---

1- वही पृ0 1
2- वही, पृ0 5
3- 'शब्दों से परे', गुलाब, पृ0 6
4- वही, पृ0 71 5. वही, पृ0 66

होता नहीं उर में उल्लास कभी गाता मैं !
पीड़ा नहीं होती तो मिठास कहाँ पाता मैं !
भूलें न करता यदि कविता बनती कैसे !
होता नहीं प्रेम तो अपूर्ण रह जाता मैं ![1]

निष्कर्ष यह कि महाकवि गुलाब ने मुक्तक-काव्य के इस लघु ग्रंथ में चित्रों, रुपकों, फूल-नदी के जीवन-प्रतीकों से गुम्फित मानव-जीवन के उत्थान-पतन, सृष्टि की रचना-प्रलय आदि को सजाकर उनसे निःसृत रसचषक जो प्रस्तुत किया है, वह हिन्दी-कविता की परम्परा में मील के पत्थर की तरह है।

व्यक्ति बनकर आ[2]:-

व्यक्ति बनकर आ कविवर गुलाब का सद्यः प्रकाशित एक मुक्तक-संग्रह है। इस काव्य की एक कविता में गुलाब जी ने स्वयं स्वीकार किया है --

क्यों हमेशा छंदों की लय में ही लिखूँ !
क्या यह अच्छा नहीं होगा
कि सतत किसी अकल्पित परिधि में घूमूँ
सदा किसी नये केन्द्रबिन्दु पर दिखूँ ! [3]

अतः, स्पष्ट है कि **व्यक्ति बनकर आ** में कवि ने अपनी काव्य-परम्परा को एक नई दिशा दी है। इस काव्य के पूर्व **शब्दों से परे** काव्य-संग्रह में ही गुलाब जी ने एक दूसरे क्षितिज का परिचय दिया था, और यह स्पष्ट हो गया था कि कवि की अभिरुचि अन्य छायावादी कवियों की तरह आध्यात्मिक रहस्यपूर्ण शक्ति के प्रति भी सम्पृक्त है। वस्तुतः जीवन की सामान्य ऐन्द्रिय संवेदनाओं के प्रवाह में कभी-कभी अनायास तत्त्व-दर्शन का बोध भी हो जाता है। इसी तत्त्व-दर्शन का बोध **शब्दों से परे** काव्य में है। और यह ठीक भी है कि अनायास तत्त्व-दर्शन के जो क्षण आ जाते हैं, उनकी भाषा भी शब्दों से परे होती है, अनिर्वचनीय और अव्याख्येय होती है। लेकिन अशब्द अरूप की अनुभूति है, अभिव्यक्ति नहीं। फलस्वरूप गुलाब जी का स्वाभाविक आग्रह है --

---

1- वही, पृ0 84
2- रचनाकाल (1981-82) प्रकाशनकाल (1983)
3- 'व्यक्ति बनकर आ', गुलाब, पृ0 33

व्यक्ति बनके आ
कृष्ण बन राधा बन
पूरा या आधा बन
जीवन की कोई अभिव्यक्ति बनके आ।
तुझ सा बनूँ शून्य मैं भी --
यह तो है कल की बात,
आज तू मेरी तरह व्यक्ति बनके आ।[1]

प्रस्तुत काव्य में कवि गुलाब ने ऐसे ही शब्दातीत के भावन की विरल उदात्तता को शब्दायित किया है। अव्यक्त का व्यक्तीकरण और कविता में उसके साथ भाव-विनिमिय, यही इस काव्य का मूल स्वर है। परम्परा के आग्रही को भले ही इस संकलन की कविताओं में काव्य के शिल्प और भाव दोनों में शास्त्रीयता का खण्डन नजर आये, किन्तु सही अर्थ में कवि ने इस काव्य-संग्रह की कविताओं में काव्य के पारम्परिक और ज्ञात पथों को छोड़कर कथ्य की आन्तरिक लय पर बल दिया है। भाव और अभिव्यक्ति दोनों का मुग्धकारी संतुलन इस संग्रह में प्रच्छन्न है। ज्ञातव्य है कि मध्यकालीन कवियों की भक्ति-भावना की तरह यहाँ अनुभूति की या आत्म-स्वीकृति और आत्मसाक्षात्कार की स्पष्ट पहचान नहीं है, तथापि कवि के मन में उस अव्यक्त के लिए आस्था और विश्वास तो है ही। अतएव वह अपनी अभिन्नता स्वीकार करते हुए उस अव्यक्त का अनुग्रहीत है, जिसकी कृपा का अनुभव हर क्षण होता रहता है ---

मेरी हर रात तेरी प्रार्थना है,
मेरी हर सुबह तेरे प्रेम का प्रमाण है।
मैं सदा तुझे अपने निकट पाता हूँ।[2]

कवि व्यर्थ की महत्ता में विश्वास नहीं करता। वह भक्त की तरह प्रभु की चरण-रज की ही कामना करता है और इसीलिए मन्दिर का कलश न बन कर देहरी का पत्थर बना रहना चाहता है --

मैं देहरी का पत्थर ही भला
जो तुम्हारे भक्तों की चरण-रज तो पाता हूँ।[3]

1- 'व्यक्ति बनके आ', पृ0 3
2- 'व्यक्ति बनकर आ', पृ0 10
3- वही, पृ0 11

वह तो निमित्त मात्र है, उस बाँसुरी की तरह (जीव) जिसे वादक (ईश्वर) अपने होंठों पर सजाकर बजाता है। वह शिल्पित होने के लिए पूर्ण समर्पित है और कुम्भकार (ईश्वर) के पदाघात को सिर-माथे पर लेने को तत्पर है। वह प्रभु के प्रति कृतज्ञता और कर्त्तव्य-बोध की स्वीकृति से अभिभूत है इसलिए उसने जो कुछ पाया है, उसे व्याज सहित उसे ही लौटाया है। किसी कविता में उस अनन्त अज्ञात की तलाश है, जो अलभ्यता के भटकाव से उलझनपूर्ण है --

हाथ से पतवार छूटी जा रही है,
परन्तु इसके पहले कि कोई यह नाव डुबो जाय,
मुझे बहुत कुछ कहना है। [1]

इस संग्रह की अधिकांश कविताएँ बहुत छोटी हैं और सभी बिना शीर्षक की हैं। उक्त विशेषताओं के अतिरिक्त कहीं-कहीं प्रांजल भाषा में उदात्त भावों का साक्षात्कार हो जाता है। यथा ---

मैं सहस्रबाहु हूँ,
दो-चार भुजायें छँट ही जायँ तो क्या !
मैं सहस्रशीर्ष हूँ,
दो-चार मस्तक कट ही जायँ तो क्या !
मेरी थाह पा नहीं सकोगे।[2]

कवि का भावबोध जीवन-संघर्ष के सघनतम क्षणों में एक परिचित सत्य को खोज निकालता है और सिर्फ दो पंक्तियों की एक कविता बन जाती है :--

दुख ही सत्य है
शेष जो कुछ है कठपुतलियों का नृत्य है।[3]

बँगला के प्रसिद्ध कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर और अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि ब्लेक तथा ब्राउनिंग की तरह इस काव्यसंग्रह की अन्तिम कुछ कविताओं में ईश्वर की दयालुता, रहस्यमयता, प्रतीकात्मकता, और बिम्बपरकता आदि विशेषताएँ जुड़ गयी हैं। कवि अपनी असहायता में, उसकी सहायता चाहता है। अपने सम्बन्ध को वह बहुत स्पष्ट नहीं होने देना चाहता है, पर अद्वैतवादी की तरह आस्थावान बनकर ईश्वर द्वारा कहलाता है ---

---

1- व्यक्ति बनकर आ , पृ0 30 2- वही, पृ0 36
3- वही, पृ0 33

तेरे ही लिए तो, मैने यह धरती बनायी है,
इसके कण-कण में मेरे ही तो स्वरूप की परछाइँ है,
इसकी हर धड़कन में मेरी ही तो धड़कन समायी है[1]

निष्कर्षतः, यह कहा जा सकता है कि इस संग्रह की कविताओं में बौद्धिक अवधारणाएँ अधिक हैं और कविताएँ 'विचार-कविता' की श्रेणी में परिगणित की जा सकती हैं। इनमें कवि गुलाब के बदले हुए भाव-बोध की नयी दिशा का परिचय अवश्य मिल जाता है।

बूँदें : जो मोती बन गयीं[2] :-

प्रस्तुत काव्य आलोच्य कवि का अब तक प्रकाशित अन्तिम काव्य-संग्रह है। ज्ञातव्य है कि **शब्दों से परे** और **व्यक्ति बनकर आ** काव्य-संग्रहों में कविवर गुलाब की काव्य-सम्पदा को वैचारिकता तथा आध्यात्मिक दार्शनिकता से जोड़कर स्पष्ट दिशान्तर का बोध कराया गया है। इसी कड़ी में **बूंदें : जो मोती बन गयीं** द्रष्टव्य है। यह सत्य है कि उपर्युक्त अंतिम दोनों संग्रहों से इस संग्रह की कविताओं में विचार और अनुभूति दोनों का संतुलन अधिक है। प्रेम की विभिन्न मनोदशाओं में कवि के अन्तर्मन में जो भाव-बिन्दु उगे हैं, वे मोती बन गये हैं -- प्राणों की मधुर प्रेम की पीर, जो शब्दों की सीपी में प्रवेश करके सहज ही शुभ और भास्वर हो उठी है : वही तो 'कबित मुकुतामनिचारु' है। प्रेम के परिणत स्वरूप की उज्ज्वलता इन मोतियों में अपने अनेक-अनेक आयामों को उद्भासित करती है। निश्चय ही इन कविताओं में संवेदना का नव-नवोन्मेष, बिम्ब-विधान की मौलिकता का आश्रय लेकर नूतन काव्य-शिल्प में व्यक्त हुआ है।

जीवन-संघर्ष से उत्पन्न वेदना-जन्य आँसू की कुछ बूँदें बरौनियों पर तन जाती हैं और कुछ धूल तथा मिट्टी में सन जाती हैं ---

किन्तु कुछ ऐसी भी हैं
जो स्वाति-कणों -सी
तुम्हारे आँचल में पहुँचकर मोती बन गयी हैं।[3]

1- 'व्यक्ति बनकर आ' , पृ0 66
2- रचनाकाल (1981-82) प्रकाशनकाल (1983)
3- 'बूँदें : जो मोती बन गयीं' , पृ0 1

कवि को याद है कि उसकी जीवन-साधना और काव्य-साधना को विफल करने के लिए पत्थर की आँखोंवाले सौदागर और सिरकटी फौजें संगीनें ताने खड़ी रही हैं। चाँदनी में नाचते हुए प्रेतों की तरह उन्होंने कई तरह की यातनाएँ भी उसे दीं --

पर मैं बेबस सा सूरज की गठरी लादे
पग-पग पर कंधा बदलता रहा हूँ।
मैं फिर भी चलता रहा हूँ।[1]

प्रेम के कई-एक अनुभवों को व्यक्त करता हुआ कवि भावना से कर्त्तव्य की ओर उन्मुख हुआ है --

फूलों से प्यार कर सकूँ, मेरे पास इतना समय कहाँ है !
मेरे सिर पर पहाड़ों का बोझ है,
अगणित झाड़-झंखाड़ों का बोझ है,
सुगंध को स्वीकार कर सकूँ, मेरे पास इतना समय कहाँ है ![2]

किसी-किसी कविता में प्रेम की एकनिष्ठता का वर्णन है और महादेवी के रहस्यवाद की भाँति विरह में भी सुखानुभूति है ---

मुझे तो प्रेम की इस जलन में ही
अपने अस्तित्व की झलक मिली है,
जहाँ तक डूबता गया हूँ मैं इसके अन्दर
चेतना की लौ वहीं तक मिली है।[3]

किन्तु, प्रेम और सौन्दर्य की दुनिया में कवि के भाव स्थिर नहीं हो पाते, कर्त्तव्य-बोध का आकर्षण बढ़ जाता है और परिणाम-स्वरूप दोनों स्थितियों में कवि का जीवन दुहरा जीवन बन जाता है ---

अधरों पर मुरली और कर में लिये गीता हूँ
मैं दुहरा जीवन जीता हूँ।[4]

1- 'बूदें जो मोती बन गयीं', पृ0 3
2- वही, पृ0 7
3- 'बूँदें : जो मोती बन गयीं' , पृ0 8
4- वही, पृ0 9

जीवन-यात्रा में दुनिया के रिश्ते बनते और टूटते रहते हैं। रूप और यौवन की नश्वरता से कवि का बोध भाग्यवादी बन जाता है किन्तु उसके जीवन का लक्ष्य कविता की आराधना ही है, क्योंकि कविता की आराधना ही प्रेम की आराधना है। **व्यक्ति बनकर आ** काव्य-सग्रह का सबसे छोटी कविता दो पंक्तियों की है, और इस काव्य-संग्रह की सबसे छोटी कविता तीन पंक्तियों की है --

जीवन की सार्थकता पाने में नहीं
खोने में है,
किसीका होने में है।[1]

फिर प्रकृति (ऋतम्वरा धरती) के बीच नश्वरता का बोध कवि को यह एहसास दिलाता है 'केवल मैं नहीं रहूँगा'

यहाँ मेरा सब कुछ रहेगा,
केवल मैं नहीं रहूँगा।[2]

किसी कविता में प्रेम-विह्वला नारी का चित्रण है और किसी कविता में **गीतांजलि** की कविता की तरह प्रेम-सम्बन्ध की पहेली है ---

ओ पिया ! दुख की घनी अँधेरी रात में ही तू क्यों आता है ![3]

किसी कविता में समर्पण के पूर्व की निर्मलता के लिए उलाहना है --

ओ पिया !
मुझे फिर वैसा ही कर दे
जैसा प्रथम मिलन में तूने पाया था
जब तू मुस्कुराता हुआ
मेरी सुहागसेज पर आया था।[4]

किसी कविता में प्रेम को प्राणों का बंधन बताया गया है तो किसीमें मांसल प्रेम से परे आत्मा की महत्ता व्यंजित है। इस तरह तन और मन के

1- वही, पृ0 14
2- 'बूँदें : जो मोती बन गयीं' , पृ0 16
3- वही, पृ0 18
4- वही, पृ0 19

मिलन में अनेक रस-बिम्ब मोती की तरह चमक रहे हैं। कवि प्रेम को ईश्वर का पर्याय मानता हुआ उसकी अनुभूति को सर्वव्यापी मानता है ---

शत-शत रूप-रंग-रेखाओं में
मैंने केवल तुम्हींको स्वीकारा था,
वन, पर्वत, नदी, कछार, सभी सुन्दर थे
परंतु मुझे तो तुमने पुकारा था !
हरियाली की बाँहों में मैं कैसे रुकता भला !'[1]

इसी तरह **शब्दों से परे** और **व्यक्ति बन कर आ** के कवि गुलाब ने प्रस्तुत काव्य-संग्रह में पुनः विचार-प्रधान कविता को भाव-प्रधान कविता बनाकर छायावादी बोध को बनाये रखा है।

गुलाब के नाटकों का संक्षिप्त परिचय

राजराजेश्वर अशोक[2] :-

राजराजेश्वर अशोक गुलाब खंडेलवाल कृत एक ऐतिहासिक नाटक है। इस नाटक में अशोक के प्रारम्भिक जीवन से लेकर कलिंग-युद्ध के कारण तथा उसके हृदय-परिवर्तन तक की कथा का चित्रण है। इसकी कथावस्तु निम्न है --

प्रथम अंक

प्रथम दृश्य :- मगध सम्राट बिंदुसार का पुत्र कुमार अशोक राज उपवन में चिंता में निमग्न है। उसका मित्र राधागुप्त उसकी उदासीनता का कारण जानना चाहता है। अशोक और राधागुप्त के वार्त्तालाप से यह ज्ञात होता है कि राजवैद्य ने मगध-सम्राट् और मंत्रिपरिषद् के समक्ष अशोक को कुष्ठ-रोगी घोषित कर दिया है। इसीलिए कुमार अशोक बहुत खिन्न एवं चिन्तित है। राधागुप्त इसमें उसकी सौतेली माँ राजमहिषी शकरानी के षड़यंत्र एवं कुचक्र

1- 'बूंदेः जो मोती बन गईं', पृ0 47
2- रचनाकाल (1958) प्रकाशनकाल (1978)

की तरफ संकेत करता है। वह बताता है कि उसकी सौतेली माँ शकरानी ने अपने पुत्र सुसीम को राजगद्दी पर बैठाने के लिए धोखे से उसे पारद-भस्म खिलवा दिया है। इसी बीच प्रतिहार मगध-सम्राट् का आदेश-पत्र कुमार अशोक को देता है। उस आदेश के अनुसार मगध की मंत्रिपरिषद ने कुष्टरोग के कारण कुमार अशोक को राजगद्दी से वंचित कर दिया है और आदेश दिया है कि वे पाटलिपुत्र छोड़ दें। शकरानी के आदेशनुसार मगध का महाबलाधिकृत चण्डगिरि अशोक एवं राधागुप्त को कैद करने के लिए आता है। इसके पहले ही कुमार अशोक पाटलिपुत्र छोड़ देता है। चंडगिरि राधागुप्त को कैद करना चाहता है, लेकिन महामात्य के हस्तक्षेप के कारण वह उन्हें छोड़ देने के लिए बाध्य हो जाता है। महामंत्री राधागुप्त को सलाह देता है कि वह कुमार अशोक के साथ पाटलिपुत्र से कहीं दूर चला जाय, क्योंकि दोनो के प्राण संकट में हैं। राधागुप्त और महामात्य का प्रस्थान हो जाता है। तत्पश्चात् मगध-सम्राट विंदुसार एवं शकरानी बातचीत करते हुए दिखाई पड़ते है। इसी बीच चंडगिरि आकर यह सुचना देता है कि सम्राट के आदेशनुसार वह अशोक और राधागुप्त को वंदी बनाने गया था, परन्तु कुमार अशोक ने पहले ही पाटलिपुत्र छोड़ दिया है और राधागुप्त को महामात्य ने कैद करने से मना कर दिया है। यह सुनकर विंदुसार (सम्राट्) आश्र्ययचकित हो जाते है क्योंकि उन्होंने इस तरह का कोई आदेश नहीं दिया है। प्रतिहार उज्जयिनी के ज्योतिषी के आने की सूचना देता है। उज्जयिनी का जोतिषी राजा को बतलाता है कि कुमार अशोक ने उज्जयिनी के प्रवास-काल में उज्जयिनी-सम्राट की पुत्री महादेवी से वैदिक पद्धति से विवाह कर लिया है। उज्जयिनी-सम्राट् इसकी घोषणा करने और महादेवी को भेजने की अनुमति चाहते हैं। मगध-सम्राट् उज्जयिनी के ज्योतिषी को बताते हैं कि कुमार अशोक निर्वासित कर दिये गये हैं। ज्योतिषी कुमार अशोक को आर्यावर्त्त के दिग्विजयी सम्राट् बनने की भविष्यवाणी करता है। कुमार सुसीम ज्योतिषी के भविष्य-कथन से क्रोधित हो जाता है। वह ज्योतिषी को अपमानित करता है, परन्तु राजा स्वयं इसके लिए क्षमा माँग लेते हैं। शकरानी सुसीम के राज्याभिषेक की तिथि निश्चित करने के लिए मंत्रिपरिषद की बैठक बुलाने हेतु राजा से आग्रह करती है। इसी बीच महामात्य आकर सूचना देता है कि तक्षशिला में विद्रोह उठ खड़ा हुआ है, सहायता भेजना आवश्यक है। शकरानी महामात्य को आदेश देती है कि निर्वासित राजकुमार अशोक से किसी तरह सम्पर्क कायम कर उन्हें तक्षशिला भेज दिया जाय।

द्वितीय दृश्य -- इस दृश्य में राजविदूषक बुद्धिसेन और राधागुप्त राजपथ पर बातचीत करते हुए दिखायी पड़ते हैं। बुद्धिसेन राधागुप्त को यह

विश्वास दिलाता है कि वह इस बात का अवश्य पता लगा लेगा कि राजवैद्य ने कुमार अशोक को कैसे पारद-भस्म खिलाया है। इसके बाद राधागुप्त वहाँ से प्रस्थान कर देता है। राजवैद्य से बुद्धिसेन की मुलाकात होती है। वह वैद्यराज को प्रेत का भय दिखलाकर यह मालूम कर लेता है कि उसने ही शकरानी के दबाव में आकर कुमार अशोक को धोखे से पारद-भस्म खिलाया है। वह इस आशय से सम्बन्धित एक स्वीकृति-पत्र पर भी राजवैद्य से हस्ताक्षर करा लेता है।

तृतीय दृश्य -- कुमार अशोक रानी और सम्राट् के विश्वासघात के बावजूद देशभक्ति की भावना से तक्षशिला के विद्रोह को कुचलने के लिए चला जाता है। उसने तक्षशिला के विद्रोह को दबाने के लिए मगध-सम्राट् से सहायता माँगी है। सहायता मिलने में विलम्ब होने से कुमार अशोक शंकित हो उठता है। उसे यह विश्वास हो जाता है कि यहाँ भी राजनीतिक षड़यंत्र ही है। वह सुसीम और शकरानी के षड़यंत्र के चलते क्रोधित हो उठता है। कुष्ठ का रोग उसके शरीर से समाप्त हो गया है, लेकिन पराजय का कलंक कुष्ठ से भी खतरनाक है। इस समय एक अजनबी व्यक्ति सम्राट् विंदुसार का गुप्त आदेश-पत्र राधागुप्त को लाकर देता है। इस आदेश-पत्र में कुमार अशोक की हत्या करने का संकेत है। राधागुप्त ऐसा करने से इनकार कर देता है। कुमार अशोक तक्षशिला-विद्रोह का दमन करने के बाद स्वयं मगध से विद्रोह करने की घोषणा करता है।

इधर सुसीम को कुमार अशोक के विद्रोह का पता चल जाता है। वह, उससे युद्ध करने की भावना से नये सैनिकों की नियुक्ति प्रारम्भ कर देता है। सुसीम के अत्याचार से संपूर्ण जनता त्रस्त है। इधर कुमार अशोक को उज्जयिनी का दूत महादेवी का पत्र देता है। पत्र का आशय है कि सुसीम ने महादेवी के प्रति ज्योतिषी से अपमान-जनक वचन कहे हैं। उसने यह भी स्पष्ट रूप से कहा है कि महादेवी को उसके भाई द्रोपदी की तरह स्वीकार करने के लिए तैयार हैं, लेकिन उसे अशोक से सम्बन्ध तोड़ना होगा। अपनी प्रिया का अपमान सुनकर अशोक क्रोध से जलने लगता है। वह अब अशोक नहीं चण्डाशोक बनना चाहता है। वह राधागुप्त के समक्ष तलवार लेकर कसम खाता है कि वह सुसीम के सभी भाइयों को समाप्त कर देगा।

चतुर्थ दृश्य -- उज्जयिनी के राजउपवन में महादेवी और उसकी सखी ललिता के वार्त्तालाप से यह ज्ञात होता है कि मगध की मंत्रिपरिषद् ने अशोक को मगध-सम्राट् घोषित कर दिया है। ज्योतिषी के संदेश से यह भी ज्ञात होता

है कि रानी के षड़यंत्र के बावजूद कुमार अशोक ससैन्य पाटलिपुत्र पहुँच गया है। गद्दी के उत्तराधिकार का निर्णय युद्ध ही कर सकता है। स्वामी की संकटकालीन स्थिति को देखकर महादेवी उज्जयिनी से पाटलिपुत्र के लिए अपनी सखी ललिता के साथ प्रस्थान कर देती है।

द्वितीय अंक

प्रथम दृश्य -- इस अंक के प्रथम दृश्य में युद्धक्षेत्र का दृश्य है। अशोक और कुमार सुसीम का युद्ध प्रारम्भ हो गया है। अशोक की वीरता को देखकर सुसीम घबड़ा गया है। सुसीम और महाबलाधिकृत की बातों से यह ज्ञात होता है कि उनके पक्ष की सारी सेना छिन्न-भिन्न हो गयी है। दूत के द्वारा यह भी सूचना मिलती है कि शकरानी ने विषपान कर लिया है और मगध-सम्राट् विंदुसार अर्धविक्षिप्त होकर बौद्ध-बिहार में चले गये हैं। सुसीम के तिष्य और वीतशोक को छोड़कर सभी भाई मार दिये जाते हैं। अशोक सुसीम को ढूँढते हुए उसके शिविर में पहुँच जाता है। दोनों में द्वन्द्वयुद्ध होता है और सुसीम मारा जाता है। अशोक मगध-सम्राट् के पद पर अधिकार कर लेता है। राधागुप्त मगध के युद्ध-मंत्री के रूप मे नियुक्त होता है।

द्वितीय दृश्य -- सुसीम का सबसे छोटा भाई तिष्य, जो आठ वर्ष का है, कारागार में बंद है। अशोक प्रतिशोध की भावना से आक्रान्त होकर उसकी भी हत्या करना चाहता है। वह नंगी तलवार लेकर उसकी हत्या के लिए प्रस्तुत होता है, लेकिन तिष्य की कोमलता और भातृ-प्रेम से अशोक का पत्थर का हृदय पिघल जाता है। अशोक बहुत लज्जित होता है, वह उससे क्षमा मागता है तथा उसे गले से लगा लेता है।

तृतीय दृश्य -- सम्राट् अशोक साम्राज्य-वृद्धि की आकांक्षा के ग्रस्त है। वह दक्षिण-विजय के लिए महादेवी की सहमति चाहता है। महादेवी युद्ध का विरोध करती है। वह हिंसा की विरोधी है। उसकी दृष्टि में स्वतंत्रता सबके लिए अपरिहार्य है। उसका और सम्राट् अशोक का विचार एक दूसरे के प्रतिकूल है। अतः वह शांति हेतु वेदीसागर के बौद्ध शिविर में चली जाती है। सम्राट् अशोक युद्ध-संचालन को निकल पड़ता है।

चतुर्थ दृश्य -- राधागुप्त और **खल्लातक** की बातों से यह पता चलता है कि अशोक विजय-अभियान में संलग्न है। लेकिन राधागुप्त इस विजय - अभियान का विरोधी है। अन्य देशों की स्वतंत्रता पर आघात करना, उसकी

दृष्टि में उचित नहीं है। अकारण होने वाले नर-संहार में उसे कोई रुचि नहीं है। इधर बौद्ध भिक्षु भी युद्ध एवं रक्तपात का विरोध करते हैं। अशोक उनकी बातों पर ध्यान नहीं देता है। वह इसे कायरता समझता है। बौद्ध भिक्षुओं के विरोध को कुचलने के लिए अशोक चण्डगिरि को नियुक्त कर देता है। वह यह भी घोषणा करता है कि बौद्ध भिक्षुओं की हत्या करनेवाले को इनाम दिया जायेगा।

तृतीय अंक

प्रथम दृश्य -- सम्राट् अशोक का भाई वीतशोक नालन्दा बौद्ध विहार में वहाँ के महास्थाविर उपगुप्त से बातें कर रहा है। वह भी अशोक के नर-संहार से चिन्तित है। अशोक के अत्याचार से सारे बौद्ध भिक्षु त्रस्त हैं।

द्वितीय दृश्य -- चण्डगिरि निरन्तर प्रतिशोध की ज्वाला में जल रहा है। वह सम्राट् अशोक से बदला लेने की घात में है। वह अशोक को कलंकित करने के लिए अनेक बौद्ध-भिक्षुओं की हत्या करता है। लोकप्रिय नागरिकों की हत्या करने में भी चण्डगिरि नहीं चूकता। इसी प्रतिशोध में वह बौद्धभिक्षु वीतशोक (अशोक के भाई) को हत्या करने के लिए पकड़ लेता है। वीतशोक उसकी निष्ठुरता को देखकर अपनी हथकड़ी तोड़ देता है और उसकी हत्या कर देता है। बाद में चण्डगिरि के सैनिक वीतशोक की भी हत्या कर देते हैं --

तृतीय दृश्य --सम्राट् अशोक कलिंग-विजय हेतु युद्धक्षेत्र में डटा है। कलिंग की सभी सेना मार दी जाती है, किन्तु कलिंगवासी हार मानने को तैयार नहीं हैं। प्रतिदिन अधकचरे नवयुवकों की टोली युद्धक्षेत्र में युद्ध करने के लिए उपस्थित हो जाती है और हँसते-हँसते अपने को बलिदान कर देती है। मगध-सम्राट् अशोक ने कलिंगवासियों को हराने के लिए क्षमा, दया, उदारता इत्यादि सबकी तिलांजलि दे दी है। इस निष्ठुर स्वभाव के चलते उसके पुत्र और बेटी भी उससे विमुख हैं। अशोक भी मन-ही-मन कलिंगवासियों का जोश देखकर भयभीत हो जाता है। स्वप्न में वह मृत छायाकृतियों को देखकर ग्लानि से भर जाता है। वह दूसरे दिन युद्ध पर विचार करने के लिए मंत्रि-परिषद की बैठक बुलाता है।

चतुर्थ दृश्य -- इस दृश्य में विदूषक बुद्धिसेन एक सैनिक से परिहासपूर्ण बातें करता है। यहाँ कथा का कोई विकास-क्रम दिखाई नहीं पड़ता। विदूषक की बातों से यह सूचना मिलती है कि बौद्ध भिक्षु अशोक के नर-संहार

का खुलकर विरोध कर रहे हैं।

पंचम दृश्य -- कलिंग के रणक्षेत्र में अशोक की राज्य-सभा युद्ध की समस्या पर विचार कर रही है। सम्राट् अशोक परिषद का स्वतंत्र विचार जानना चाहता है। राधागुप्त युद्ध एवं हत्या की निन्दा करता है। वह साम्राज्यवादी भावना का विरोधी है। उसके लिए सबकी स्वतंत्रता प्रिय है। इसी बीच सहसा दो सैनिक सम्राट् अशोक के भाई वीतशोक का कटा हुआ सिर लेकर प्रस्तुत होते हैं जिसे चण्डगिरि उपहार-स्वरूप अशोक को भेजने का आदेश दे चुका था। अशोक अपने भाई का सिर देखकर मर्माहत हो जाता है। सम्राट् अशोक का रक्त-पिपासु हृदय परिवर्तित हो जाता है। वह कलिंगवासियों के प्रति दया-भावना से भर जाता है। वह युद्ध बन्द करने का आदेश देता है। वह प्रेम, अहिंसा और सत्य के लिए बौद्ध धर्म की शरण में चला जाता है। उसका हृदय परिवर्तित हो जाता है और वह प्रियदर्शी राजराजेश्वर अशोक बन जाता है।

(2) भूल [1] (गद्य-नाटक)

भूल कविवर गुलाब का एक हास्य-प्रधान सामाजिक नाटक है। यह राजराजेश्वर अशोक के बाद कविवर गुलाब की द्वितीय गद्य-रचना है यद्यपि कालक्रम से उसके पूर्व की है। इसकी कथावस्तु पूर्णतः काल्पनिक है जिसका सार-सक्षेप निम्नलिखित है।

प्रथम अंक

प्रथम दृश्य -- स्टेशन का दृश्य है। शिरीष गौना कराने के लिए पहली बार ससुराल आने वाला एक युवक है। उसके साथ उसका नौकर काली भी है। वह प्लेटफार्म की एक बेंच पर बैठा है। बगल में ही सुरेश नाम का एक युवक भी बैठा है। सुरेश इंस्योरेन्स का एजेंट है। दोनों युवकों के सुटकेश पर 'एस0 सिंह, गया' लिखा है। शिरीष प्लेटफार्म पर अपनी ससुरालवालों का इन्तज़ार कर रहा है। काली यह सूचना देता है कि अगवानी के लिए ससुराल से कोई स्टेशन नहीं आया है। काली और शिरीष की बातों से सुरेश को यह जानकारी होती है कि शिरीष ससुराल जा रहा है। सुरेश अभी अविवाहित है। वह बीमा के सिलसिले में यहाँ आया है। वह शिरीष को भी बीमा कराने की सलाह देता है।

1- रचनाकाल (1950) प्रकाशनकाल (1970)।

अन्ततः शिरीष बीमा के प्रोपोजल फार्म पर हस्ताक्षर कर देता है, और उसे दो सौ बत्तीस रुपये, सत्तर पैसे का चेक भी दे देता है। इसी बीच काली आकर खबर करता है कि अभी तक ससुरालवालों का कोई पता नहीं है। सुरेश भी किसी लिवानेवाले की ही प्रतीक्षा कर रहा है। शिरीष अपने ससुरालवालों का घर भी नहीं पहचानता है, क्योंकि उसकी शादी बचपन में ही हुई थी। उसका नौकर भी पहली बार ही उसकी ससुराल में आया है। चिराग हुसैन की गली में शिरीष के श्वसुर का मकान है। सुरेश को भी उसी गली में जाना है। शिरीष और उसका नौकर दोनों ससुराल की ओर चल देते हैं। उनके चले जाने के बाद शिरीष के श्वसुर सुरेन्द्र सिंह का दीवान स्टेशन पहुँचता है। वह सुरेश के सुटकेश पर एस0 सिंह, गया, देखकर उसे ही शिरीष समझ लेता है। वह भ्रमवश सुरेश को ही ठाकुर सुरेन्द्र सिंह का दामाद समझ लेता है और उन्हें लेकर चल देता है।

द्वितीय दृश्य -- ठाकुर सुरेन्द्र सिंह एक अवकाश-प्राप्त मजिस्ट्रेट हैं। वे अपने मकान पर अपने दामाद के स्वागत का इन्तजाम करवा रहे हैं। उनका नौकर भोला और पुत्र रमेश भी इसी तैयारी में व्यस्त हैं। ठाकुर सुरेन्द्र सिंह की बातों से पता चलता है कि शादी के समय उनकी पुत्री (शिरीष की पत्नी) शारदा पाँच वर्ष की थी और उस समय रमेश भी बहुत छोटा था। इसी समय उनका दीवान सुरेश के साथ वहाँ पहुँचता है। सुरेश को सभी लोग शिरीष समझकर स्वागत करते हैं। सुरेश, सुरेन्द्र सिंह से बातचीत करते समय मित्र जैसा व्यवहार करता है। ठाकुर साहब के प्रति उसकी बातों से कोई आदर-भाव नहीं झलकता है। वह अनेक हास्य-पूर्ण प्रसंगों को प्रस्तुत करता है। उसकी परिहासपूर्ण बातों को सुनकर ठाकुर सुरेन्द्र सिंह हक्का-बक्का रह जाते हैं। सुरेश बात-बात में बीमा का ही प्रसंग रख देता है। सुरेश भोजन के लिए काफी उत्सुक है। वह कहता है कि वह कुछ भी खा सकता है, उसे स्कोच और व्हिस्की का भी शौक है।

तीसरा दृश्य -- सुरेन्द्र सिंह दामाद का व्यवहार देखकर दुःखी हैं। वे इसका जिक्र करते हुए कहते हैं कि शिरीष के पिता महेश सिंह ने लिखा था कि उनका लड़का बहुत सीधा और संकोची स्वभाव का है। लेकिन, ठाकुर साहब सुरेश को इसके विपरीत स्वभाव का पाकर बहुत आश्चर्यचकित हैं। इसी बीच शारदा अपनी दोस्त छाया के घर जाने के लिए पिता से आज्ञा लेने आती है। उनका बेटा रमेश भी छाया के घर जाना चाहता है। वह छाया से प्यार करता है। उसको छाया से विवाह करने की भी इच्छा है। इसी बीच सुरेश गाना गाते

हुए प्रवेश करता है। शारदा उसको देखकर भाग जाती है। सुरेश, रमेश से छाया के बारे में जानना चाहता है। दीवान साहब बताते हैं कि वह मनोहर सिंह की लड़की है। रमेश उससे प्यार करता है लेकिन, छाया और रमेश की उम्र में बहुत फर्क है। रमेश मैट्रिक क्लास में पड़ता है और छाया थर्ड इयर की छात्रा है। रमेश, सुरेश को भोजन के लिए लेकर चला जाता है। ठाकुर सुरेन्द्र सिंह, दीवान से सुरेश की बेहूदगी और आवारागर्दी की चर्चा करते हैं। वे उसके व्यवहार को देखकर अपनी बेटी के भविष्य के प्रति चिन्तित हैं। सुरेश अच्छा भोजन खाकर बहुत प्रसन्न है। वह भोजन बनानेवाली शारदा की बहुत प्रशंसा करता है। उसे रमेश से यह जानकारी होती है कि शारदा संगीत, सिलाई, बुनाई में बहुत निपुण है। वह यह भी जानना चाहता है कि शारदा नृत्य करना जानती है या नहीं ; सुरेश के व्यवहार से ठाकुर साहब क्रोधित होकर सोने चले जाते हैं। इधर सुरेश दीवान के साथ बौलडांस करने लगता है। इसी बीच छाया और शारदा का प्रवेश होता है। दीवान शारदा को मेहमान के नृत्य के बारे में बतलाता है। छाया यह सुनकर काफी प्रसन्न होती है। वह शारदा के भाग्य की सराहना करती है। इसी बीच सुरेश चला आता है। शारदा भागना चाहती है, छाया उसे पकड़ लेती है। सुरेश भी जाना चाहता है, लेकिन छाया उसे रोक लेती है। सुरेश छाया के प्रति आकृष्ट हो जाता है। वह उसके रूप की बहुत प्रशंसा करता है। छाया उसके विनोदी स्वभाव की प्रशंसा करती है। सुरेश कहता है कि वह प्रशंसा नहीं पसंद करता। एक बार कॉलेज की लड़कियाँ उसकी प्रशंसा कर रही थीं तो वह बेहोश होकर गिर पड़ा था। प्रशंसा सुनकर उसे मिर्गी का दौरा आता है। इसी बीच सुरेश बेहोश होकर गिर जाता है। छाया आँचल से उस पर हवा देती है और उसके मुँह पर पानी का छींटा करती है। अन्त में वह अपनी चप्पल खोलकर सुँघाती है, तब कहीं उसकी बेहोशी दूर होती है। सुरेन्द्र सिंह की आवाज सुनकर शारदा वहाँ से अन्दर चली जाती है। सुरेश होश में आकर ग़ज़ल गाता है। सुरेश छाया से कहता है कि तुझको देखकर ही ऐसा हुआ है। छाया के रूप की वह प्रशंसा करता है। वह कहता है कि छाया के रूप के समक्ष शारदा तुच्छ है। सुरेश उसकी कलाई पकड़ लेता है, और अपना प्यार प्रदर्शित करने लगता है। वह कहता है कि प्यार का अनुभव अपनी जिन्दगी में पहली बार उसने छाया को देखकर ही किया है। छाया भी भावावेश में उसके कंधों पर अपना सिर रख देती है। सहसा शारदा इसी बीच चली आती है। वह दोनों के व्यवहार को देखकर आश्चर्य-चकित हो जाती है। छाया शरमाकर अलग हो जाती हैं। सुरेश स्पष्ट रूप से स्वीकार कर

लेता है कि वह छाया देवी से प्यार करता है और छाया भी उससे प्यार करती है। शारदा क्रोधित हो जाती है और उसको पति-धर्म की याद दिलाती है। लेकिन, सुरेश अपने व्यक्तिगत मामलों में शारदा का हस्तक्षेप पसंद नहीं करता है। वह स्पष्ट बता देता है कि ऐसा करने का उसे कोई अधिकार नही हैं। वह यह नहीं जानता है कि उसे लोग शिरीष समझ रहे हैं। शारदा, उससे अपनी शादी की चर्चा करती है जिसे सुरेश अस्वीकार कर देता है। शारदा इसमें अपना अपमान समझती है। वह छाया को इसके लिए डाँटती भी है। छाया चली जाती है और शारदा सुरेश के पैरों पर गिरकर उसे उसके पति-धर्म की याद दिलाती है। लेकिन सुरेश उसे अपनी पत्नी मानने को तैयार नहीं है। शारदा, सुरेश की सारी बातें अपने पिता से बतलाती है। वह कहती है कि सुरेश ने कहा है कि उसने (शारदा से) शादी नहीं की है। वह छाया के प्रति आकृष्ट है और उसीसे प्यार करता है। ठाकुर साहब बताते हैं कि इस सम्बन्ध में उन्होंने शिरीष के पिता महेश सिंह को तार दे दिया है। सुरेश, सुरेन्द्र सिंह से ज्यों ही अपनी भूल की चर्चा करना चाहता है, रहस्योद्घाटन करना चाहता है, सुरेन्द्र सिंह उसे डाँट देते हैं। वह नौकर भोला के साथ सोने के लिए कमरे में चला जाता है। सुरेश बातचीत के क्रम में यह जान जाता है कि शारदा के घरवाले भ्रमवश उसे ही शिरीष समझ रहे हैं, क्योकि शिरीष गौना कराने के लिए आज ही आनेवाला था। इसी बीच ठाकुर मनोहर सिंह का नौकर चाय का निमंत्रण लेकर आता हैं। सुरेन्द्र सिंह, शारदा और सुरेश दोनो को मनोहर सिंह के यहाँ जाने के लिए आदेश देते हैं। उन दोनों को रात्रि में वहाँ तक पहुँचाने के लिए सुरेन्द्र सिंह भी जाते हैं।

चौथा दृश्य -- ठाकुर मनोहर सिंह अपने मकान पर बैठे हुक्का पी रहे हैं। पास की कुर्सी पर बैठा उनका पुत्र हरिमोहन पढ़ रहा है। मनोहर सिंह अपने पुत्र से इंस्योरेंस एजेन्टों की काफी निन्दा करते हैं। उनका पुत्र हरि मोहन इस निन्दा का कारण जानना चाहता है। वे अपने मित्र द्वारा भेजे गये पत्र को दिखाते हुए कहते हैं कि मेरे मित्र का लड़का जीवन-बीमा का एजेन्ट है, जिससे अपने पूरे परिवार की बीमा कराने का प्रस्ताव है। वही लड़का सुरेश साढ़े छः बजेवाली गाड़ी से आनेवाला है। किन्तु, इस समय रात्रि के 9 बज रहे हैं। ठाकुर साहब को लगता है कि अब आफत टल गयी, क्योंकि वह अभी तक नहीं पहुँच सका है। सहसा बाहर से किसी के पुकारने की आवाज आती है। मनोहरसिंह समझते हैं कि इन्स्योरेन्स का वही एजेन्ट आ गया। पर, होता कुछ और है ; पुनः एक भूल हो जाती है। शिरीष ठाकुर मनोहर सिंह के मकान पर अपने

नौकर के साथ पहुँचता है। ठाकुर साहब (मनोहरसिंह) उसे कड़ी दृष्टि से देखते हैं। ठाकुर मनोहर सिंह उन लोगों को लेट पहुँचने के चलते डाँटते हैं, क्योंकि किसी भी भले आदमी के यहाँ 9 बजे रात्रि को पहुँचना उचित नहीं है। शिरीष के, संकोचवश यह कहने पर कि वह भोजन करके आया हैं, ठाकुर साहब कुछ शांत हो जाते हैं। शिरीष बतलाता है कि उसे मकान ढूँढने में काफी कठिनाई हुई है। शिरीष यह समझता है कि वह अपने ससुरालवालों के यहाँ है, लेकिन मनोहर सिंह का परिवार उसे इन्स्योरेन्स का एजेन्ट समझता है। इसीलिए हरिमोहन शिरीष के साथ दुर्व्यवहार भी करता है। शिरीष इन लोगों का व्यवहार देखकर चक्कर में पड़ जाता है। इसी बीच छाया आती है। मनोहर सिंह, छाया को, बगलवाले कमरे में शिरीष को ठहराने के लिए कहते हैं। छाया, शिरीष को लेकर जाना चाहती है। इसी बीच चाय पर आमंत्रित सुरेन्द्र सिंह , शारदा और सुरेश पहुँच जाते हैं। सुरेन्द्र सिंह दोनों को पहुँचाकर अपने बँगले पर लौट जाते हैं। सुरेश, शिरीष को देखकर पहचान जाता हैं। वह उसको बतलाता है कि शारदा उसकी पत्नी है। छाया को भी यह जानकारी होती है कि शिरीष और सुरेश दोनों एक दूसरे को जानते हैं। छाया, शारदा से एक गीत गाने के लिए अनुरोध करती है। शारदा होलीवाला गीत गाती है --

मेरी आँखों में पड़ गयी गुलाल, पिया।
रेशम की सुंदर साड़ी मसक गयी, प्रीत बनी जंजाल, पिया !
रूप निगोड़ा कहाँ ले के जाऊँ। लद गयी फूलों से डाल, पिया !
रस के भरे कचनार-सी बाँहें, गोरे गुलाब-से गाल, पिया !
मान भी कैसे करूँ अब तुमसे ! आये बिता कर साल, पिया !
इतने दिनों पर याद तो आयी, हो गयी मैं तो निहाल, पिया !
एक ही रंग में भीगे हैं दोनों, एक है दोनों का हाल, पिया !
साँवरे-गोरे का भेद कहाँ अब, तन-मन लाल ही लाल, पिया !
आँखों में अंजन, माथे पे बिंदिया, हाथ अबीर थाल, पिया !
बचके गुलाब अब जा न सकोगे, लाख चलो हमसे चाल, पिया !
मेरी आँखों में पड़ गयी गुलाल, पिया। [1]

शारदा पुनः एक चैती भी गाती है
बीत गये ग्यारह मास, पिया ! अब फागुन न बीते
जेठ भी बीता, अषाढ़ भी बीता, पूस के गये हैं दिन खास

---

1. भूल, गुलाब, पृ9 44

पिया ! अब फागुन न बीते
फूले कचनार, पलास भी फूले
रंग गुलाब के, आँखों में झूले
महुआ की महक उदास, पिया ! अब फागुन न बीते
चली पुरवैया अबीर उड़ाती
बाग़ में कोयल है धूम मचाती
सरसों ने रच दिया रास, पिया ! अब फागुन न बीते
अबकी मिलोगे तो जाने न दूँगी
प्यार के रंग में तन-मन रगूँगी
कह दूँगी कानों के पास, पिया ! अब फागुन न बीते
बीत गये ग्यारह मास, पिया ! अब फागुन न बीते[1]

गीत सुनने के बाद सभी लोग चाय पीते हैं। शिरीष और छाया के अतिरिक्त सभी लोग चले जाते हैं। छाया, शिरीष को सोने का कमरा दिखाने के लिए ले जाती है और उसकी नोट बुक पढ़ने लगती है। शिरीष, छाया को अपनी पत्नी समझ लेता है। वह उससे प्यारभरी बातें करता है। छाया, शिरीष को मूर्ख बनाने के लिए उसकी काफी प्रंशसा करती है। वह कहती है कि वह उसको सपने में देखा करती है और उसकी दीवानी है। शिरीष प्यार के भावावेश में कविता सुनाता है और थोड़ा उसके प्रति आक्रामक भी हो जाता है। छाया बहुत क्रोधित हो जाती है, उसे बेहूदा और बदतमीज भी कह देती है। वह अपने पिता और भैया को बुलाने की धमकी भी देती है। छाया शिरीष को सुबह तक घर छोड़ देने का आदेश देती है। छाया अपने भाई हरिमोहन से शिरीष की शिकायत करती है। हरिमोहन बहुत क्रोधित हो जाता है, और वह उसको मारने के लिए प्रस्तुत है, लेकिन छाया उसे मना कर देती है।

पाँचवा दृश्य -- रात्रि का समय है। बहुत मंद प्रकाश है। सुरेश सोया है। सुरेश छाया को स्वप्न में देखता है। वह छाया की बातों को स्वप्न में दुहराता है। इसी बीच शारदा अँधेरे में उसके पास आती है। सहसा सुरेश जग जाता है ; पूछता है कौन ? छाया ? वह शारदा को अँधेरे में छाया समझ लेता है। वह प्यार के भावावेश में शारदा को ही छाया समझकर काफी बातें करता है। वह छाया को अपने सपनों की रानी कहकर सम्बोधित करता है। शारदा उसकी बातों को सुनकर रोने लगती है। सुरेश शारदा को पकड़ना चाहता है।

---

1. भूल, गुलाब, पृ0 45

लेकिन, शारदा क्रोधित होकर उसे एक तमाचा मारती है। इस मार के बाद सुरेश को ज्ञात होता है कि वह छाया नहीं, शारदा है। शारदा धमकी देती हुए कहती है कि जिस छाया के चलते उसकी कठिनाइयाँ बढ़ रही हैं, उसका वह खून करेगी। शारदा इसके बाद वहाँ से चली जाती है।

छठा दृश्य -- रात्रि का समय है। बहुत ही मंद प्रकाश फैला है। मनोहर सिंह के मकान के कमरे में शिरीष और काली दोनों दो पलंगों पर सोये हैं। शारदा हाथ में पिस्तौल लिये आती है। शिरीष जिस कमरे में सोया है, वह कमरा छाया का है। शारदा को यह भ्रम हो जाता है कि छाया ही प्रेमी के साथ सोयी है। शिरीष शारदा को छाया समझ लेता है। वह डर जाता है, वह समझता है कि छाया उसे मारने आयी है। वह डरकर शारदा से प्रार्थना करने लगता है। वह यह भी कहता है कि उस मारे मत, वह कल अवश्य चला जायगा। उसकी बातों को सुनकर अन्य लोग भी जग जातें हैं, इसलिए शारदा वहाँ से चली जाती है।

सातवाँ दृश्य -- रात्रि का समय है, छाया लेटी है। बहुत मंद प्रकाश है। शारदा वहाँ भी पिस्तौल लेकर पहुँचती है। इसी बीच उसकी आवाज सुनकर छाया जग जाती है। शारदा पिस्तौल लेकर आगे बढ़ती है ; लैम्प गिरकर बुझ जाता है। इतने में पिस्तौल की आवाज होती है, छाया जमीन पर गिर पड़ती है। शारदा समझती है कि छाया की मृत्यु हो गयी, लेकिन छाया पर गोली नहीं लगी थी, वह डरकर गिर पड़ी थी। शारदा चली जाती है।

आठवाँ दृश्य -- ठाकुर सुरेन्द्र सिंह अपने मकान में रेडियों पर गीत सुन रहे हैं। पास में उनका दीवान बैठा है। इसी बीच सुरेश आता है और ठाकुर साहब के चरण छूता है। वह रात्रि के असभ्य व्यवहार के लिए क्षमा चाहता है, क्योंकि उसने रात में भाँग पी ली थी। सुरेन्द्र सिंह उसे सूचित करते हैं कि आज उसके पिता यहाँ आ रहे हैं। सुरेश चला जाता है। शारदा आकर अपने पिता से कहती है कि सुरेश दूसरी बार आकर विदाई कराकर ले जायगा। शारदा यह भी सूचित करती है कि वे विदाई तभी करायेंगे, जब उसके पिता बीमा करवा लेंगे। ठाकुर सुरेन्द्र सिंह और दीवान दोनों इसी शर्त पर बीमा करवा लेते हैं। शारदा दीवान के साथ सुरेश के पास चली जाती है। इसी बीच ठाकुर मनोहर सिंह और उनका पुत्र हरिमोहन आते हैं। मनोहर सिंह, सुरेन्द्र सिंह को यह सूचना देते हैं कि एक इंस्योरेन्स एजेन्ट उनकी बेटी छाया को फुसलाकर ले जाना चाहता था। इसीलिए उस एजेन्ट और उसके नौकर को पाखाने में बंद कर दिया गया है। रमेश यह बात सुनकर क्रोधित हो जाता है

कि वह इंस्योटेंस एजेंट छाया को ले जाना चाहता है। वह कहता है कि वह कैसे लेकर जा सकता है, छाया उसकी मँगेतर है। सुरेन्द्र सिंह अपने पुत्र को डाँट देते हैं। रमेश चला जाता है। इसी समय सहसा छाया और सुरेश दोनों वहाँ पहुँचते हैं। छाया अपने पिता से कहती है कि उसने सुरेश से विवाह कर लिया है। यह भी पर्दाफ़ाश करती है कि शिरीष बीमा का एजेन्ट नहीं है, बल्कि सुरेश ही एजेन्ट है। इन दोनों की बातों को सुनकर सुरेन्द्र और मनोहर दोनों क्रोधित हो जाते हैं। छाया और सुरेश दोनों चले जाते हैं। इसी बीच सहसा शिरीष के पिता महेश सिंह आ जाते हैं। उन्हें यह जानकारी होती है कि उनके पुत्र ने शारदा को छोड़कर छाया से शादी कर ली है। महेश सिंह यह सुनकर आश्चर्यचकित हो जाते हैं। इसी बीच शिरीष और काली भी वहीं पहुँच जाते हैं। शिरीष पिता से यहाँ आने का कारण पूछता है। महेश सिंह उस पर क्रोधित हो जाते हैं। शिरीष को महेश सिंह का पुत्र जानकर सभी हक्के-बक्के रह जाते हैं। मनोहर सिंह भी यह समझ जाते हैं कि यह इंस्योरेन्स का एजेन्ट नहीं है। सुरेन्द्र सिंह को भी यह जानकरी होती है कि शिरीष ही उनका दामाद है। वे अपनी भूल पर पश्चाताप करते हैं। वे शारदा को बुलाकर यह बतातें हैं कि शिरीष ही उसका पति है। शिरीष शारदा को देखकर चौंक जाता है। उसने कल रात कोठी में सुरेश के साथ शारदा को पत्नी के रूप में देखा है। शिरीष क्रोधित होकर काली के साथ स्टेशन चला जाता है। महेश सिंह भी अपने पुत्र की बात सुनकर शारदा पर क्रोधित होते हैं। वे शिरीष की दूसरी शादी करने की इच्छा व्यक्त करते हैं। क्योंकि पिता-पुत्र दोनों की दृष्टि में शारदा कलंकिनी है। शारदा पति को ले आने के लिए जाती है। ठाकुर सुरेन्द्र सिंह दीवान पर काफी क्रोधित हैं क्योंकि दीवान की भूल से ही सब कुछ उलटा-सीधा हुआ है। सुरेश भी शिरीष की गलतफहमी दूर करने के लिए उसके पास जाता है। दीवान भी शिरीष को ले आने के लिए स्टेशन की ओर चल देता है। शिरीष एक बगीचे में खड़ा है। इसी बीच सुरेश उसको खोजते हुए वहाँ पहुँचता है। शिरीष उसपर बहुत क्रोधित होता है, क्योंकि उसीने उसकी पत्नी शारदा को भ्रष्ट और कलंकित किया है। वह छुरे से आत्महत्या करना चाहता है। सुरेश उसके हाथ से छुरा छीन लेता है। वह शिरीष को शारदा की पवित्रता का विश्वास दिलाता है। उसके अनुसार शारदा गंगाजल की तरह पवित्र और वेद-मंत्रों की तरह निर्दोष है। वह सारी गलतफहमी ही बतलाता है जिसके चलते शारदा ने भूल से उसे अपना पति समझ लिया था। इसी बीच शारदा वहाँ पहुँचती है। वह शिरीष को पैरों पर गिर कर भूल के लिए क्षमा माँगती है। वह अपनी पवित्रता

के लिए भी शपथ खाती है। शिरीष शारदा की परीक्षा के लिए झूठ बोलता है कि उसने जहर खा लिया है, वह अगर सच्ची प्रेमिका है तो आत्महत्या कर उसे पा सकती है। शारदा अपनी आत्महत्या के लिए ज्यो ही छुरा उठाती है, शिरीष बढ़कर उसे रोक देता है। शिरीष को उसकी पवित्रता और प्रेम पर विश्वास हो जाता हैं।

नौवा दृश्य -- स्टेशन की उसी बेंच पर सुरेश और छाया बैठे हैं, जिसपर प्रथम अंक में सुरेश और शिरीष बैठे थे। इसी समय सुरेन्द्र सिंह, मनोहर सिंह, दीवान, हरिमोहन, रमेश, शिरीष और शारदा वहाँ पहुँचते हैं। सुरेश शिरीष पर अपना एहसान जताता है, क्योकि उसने शिरीष की गलतफहमी को दूर किया है। इसी एहसान के चलते वह शिरीष को एक और बीमा कराने के लिए विवश कर देता है। मनोहर सिंह भी छाया और सुरेश की शादी को स्वीकार कर लेते हैं। रमेश छाया को सुरेश की पत्नी के रूप में देखकर वहीं जहर पीकर गिर जाता है। लेकिन सौभाग्य की बात यह थी कि वह जहर नहीं, पानी है जिसे उसको चकमा देने के लिए दीवान ने जहर कहकर दे दिया था, अतः उसकी मृत्यु नहीं होती है। सुरेश सिंह रमेश से वादा करते है कि वह चार वर्षो के बाद उसकी शादी छाया की छोटी बहन कामिनी से करा देगा। गाड़ी की सीटी होती है, सभी लोगो का प्रस्थान होता है। नाटक का अंत यहीं हो जाता है।

तृतीय अध्याय

प्रबन्ध-रचनाओं के भाव-पक्ष का विश्लेषण

गुलाब जी के प्रबंध-काव्यों के भाव-पक्ष का विश्लेषण

किसी भी प्रबधकाव्य के लिए दो वस्तुएँ मूलतः अपेक्षित होती हैं -- (क) वस्तु और (ख) प्रकार 'वस्तु' का सम्बन्ध प्रबंधकाव्य के वर्ण्य विषय से होता है और प्रकार का सम्बन्ध वर्णन-कौशल से। इस प्रकार काव्य के दो पक्ष हो जाते हैं, एक अनुभूति-पक्ष और दूसरा अभिव्यक्ति-पक्ष। इसीको भाव-पक्ष और कला-पक्ष भी कहते हैं।' [1]

सामान्यतः, भाव-पक्ष और कला-पक्ष दोनों काव्य के लिए अनिवार्य हैं, और दोनों का विभाजन बहुत सरल नहीं है, क्योकि 'भाव-पक्ष का सम्बन्ध काव्य की वस्तु से है और कला-पक्ष का सम्बन्ध आकार या शैली से है। वस्तु और आकार एक दूसरे से पृथक नहीं हो सकते। कोई वस्तु आकारहीन नहीं हो सकती है और न आकार वस्तु से अलग किया जा सकता है।'[2] पर, व्यवहार-बुद्धि से दोनों का विभाजन सम्भव भी है।

रस को काव्य की आत्मा माननेवाले भाव-पक्ष की प्रमुखता स्वीकारते हैं। वस्तुतः, 'भाव-पक्ष और कला पक्ष दोनों ही रस से सम्बन्धित हैं, क्योंकि कला-पक्ष के अन्तर्गत जो अलंकार, लक्षणा, व्यंजना और रीतियाँ हैं, वे सभी रस की पोषक हैं, तथापि भाव-पक्ष का रस से सीधा सम्बन्ध है। वह उसका प्रधान अंग है, कला-पक्ष के विषय इसके सहाय़क और पोषक हैं।'[3] दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि 'भाव-पक्ष और कला-पक्ष में निश्चय ही आत्मा और शरीर का सम्बन्ध है। पहला साध्य है, तो दूसरा साधन।'[4]

1- काव्य के रूप , गुलाब राय, पृ0 15, चतुर्थ संस्करण, 1958 ई0, प्रकाशक—प्रतिभा प्रकाशन, 206, हैदर कुजी, दिल्ली

2- सिद्धांत और अध्ययन ; गुलाब राय, पृ0 115 द्वितीय संस्करण, 1955 ई0, प्रकाशक - प्रतिभा प्रकाशन, 106, हैदरकुजी, दिल्ली

3- सिद्धांत और अध्ययन , पृ0 115

4- मैथिलीशरण गुप्त : कवि ! और भारतीय संस्कृति के आख्याता' : डॉ0 उमाकान्त, पृ0 79, प्रकाशक -- नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल भी भावों को ही प्रमुखता देते हैं -- 'काव्य का लक्ष्य भावों के उपयुक्त स्थापित विषयों को सामने रखकर सृष्टि के नाना रूपों के साथ मानव हृदय का सामंजस्य स्थापित करना है। 'भाव' ही कर्म के मूल प्रवर्तक और शील के संस्थापक हैं।'[1] डॉ भगीरथ मिश्र की दृष्टि में भी भाव-तत्त्व अपना प्रमुख स्थान रखता है, 'काव्य में भावतत्त्व सबसे अधिक प्रभाव उत्पन्न करनेवाला होता है। भाव कवि की कल्पना का प्रेरक है, छन्द के स्वरूप का विधायक एवं शब्दप्रवाह के उत्स को खोलनेवाला है। भाव की तीव्रता अभिव्यक्ति की उद्दीपक है। भाव, मनोवेगों के संस्कार-रूप में प्रतिष्ठित, स्मृत और पुनः अनुभूत स्वरूप है। भाव संक्रामक होते हैं। उनकी अभिव्यक्ति दूसरों के हृदय में भी उसी प्रकार की अनुभूति जाग्रत करती है। भाव, काव्य का बड़ा व्यापक तत्त्व है। यह पाठक और श्रोता का भी संस्कार करता है।'[2]

इस तरह भाव-पक्ष का महत्त्व निर्विवादतः सिद्ध हो जाता है। भाव का सीधा सम्बन्ध रस से होता है। काव्य के स्थायी भावों से ही विभिन्न रस उत्पन्न होते हैं।

काव्यशास्त्र के सर्वप्रथम आचार्य भरत मुनि ने अपने 'नाट्यशास्त्र' में 'विभावानुभाव व्यभिचारी संयोगात् रस-निष्पत्तिः' , लिखकर विभाव, अनुभाव तथा संचारी भावों की रस से अभिन्नता सिद्ध कर दी है। विभाव (आलम्बन और उद्दीपन), अनुभाव (कायिक, मानसिक, और सात्विक)1 तथा संचारी भावों 'निर्वेद, ग्लानि, शंका, श्रम, धृति, जड़ता, हर्ष, दैन्य, उग्रता, चिन्ता, त्रास असूया, अमर्ष, गर्व, स्मृति, मरण, मद, स्वप्न, निद्रा, विव्वोक, व्रीड़ा, अपस्मार, मोह, मति, अलसता, आवेग, तर्क, व्याधि, उन्माद, विषाद, औत्सुक्य, और चपलता) से पुष्ट होकर रस किसी भी प्रबंधकाव्य के भाव-पक्ष को प्राणवान बनाता है। रसों की विविधता का कारण आलम्बन-वैविध्य है। इसके अतिरिक्त, मार्मिक प्रसंगों की संयोजना से प्रबंधकार की भावुकता और प्रबंध-क्षमता का पता चलता है। प्रबंध के कथानक को प्रभावोत्पादक तथा सुतीक्ष्ण बनाने के लिए मार्मिक प्रसंग अपेक्षित होते हैं। उनके द्वारा विषयवस्तु की अभीष्टता भी सहज और ग्राह्य हो जाती है। कुल मिलाकर किसी भी प्रबंधकाव्य

1- 'रस-सीमांसा' : रामचन्द्र शुक्ल, पृ0 161, द्वितीय संस्करण, संवत् 2011, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

2- 'काव्य-शास्त्र' : भगीरथ मिश्र पृ0 23, तृतीय संस्करण, 1966 ई0, विश्वविद्यालय प्रकाशन, भैरवनाथ, वाराणसी

भाव-पक्ष कहने से निम्नलिखित स्थितियों का बोध होता है ---

1- प्रबंधकाव्य की रस-सामग्री, अथवा प्रबंधकाव्य में रस-निरूपण

2- आलम्बन-वैविध्य एवं उद्दीपन की भाव-भूमि।

3- मार्मिक प्रसंगो की पहचान या प्रबंध के मार्मिक प्रसंग।

4- प्रबंधकाव्यों की पात्र-योजना।

5- विषयवस्तु की अभीष्टता (सोद्देश्यता)।

महाकवि गुलाब खंडेलवाल के प्रबंधकाव्यों के भाव-पक्ष का विश्लेषण भी इन्हीं पाँच स्थितियों को ध्यान में रखकर किया जा सकता है।

1- कवि गुलाब के प्रबंधकाव्यों में रस-निरूपण

आचार्य विश्वनाथ ने रस को काव्य की आत्मा माना हैं। सामान्यतः काव्यास्वादन से प्राप्त आनन्द को ही रस कहा जाता है।

'काव्य के पढ़ने या नाटक के देखने से सुखात्मक या दुःखात्मक किसी प्रकार के भाव की अनुभूति जब हृदय में होती है, तब मन की केवल एक ही स्थिति होती है। वह इन दोनों प्रकारों में रमता है। मन के रमने के कारण यह अनुभूति प्रत्यक्षानुभूति से परिष्कृत कही जा सकती है। मन के इसी रमण के कारण ही इस अनुभूति को 'रस' कहा जाता हैं।' [1] किन्तु पारिभाषिक शब्दावली में 'स्थायीभाव की पूर्ण परिपक्वावस्था से उत्पन्न आनन्दमय रूप ही रस कहलाता है।' [2]

ये स्थायी भाव नौ हैं तथा इन्हीं स्थायी भावों के परिपाक से रसों की संख्या भी नौ मानी गई है ---

---

1- सात्त्विक भाव आठ प्रकार के हैं -- स्तम्भ, स्वेद, रोमांच, स्वरभंग, वेपथु, (कम्प) वैवर्ण्य, अश्रु और प्रलय।

2- 'समीक्षा-शास्त्र (भारतीय तथा पाश्चात्य)। डॉ0 दशरथ ओझा, पृ0 46।

3- 'विभावानुभावेन व्यक्तः संचारिणा तथा।
रस तामेति रत्यादिः स्थायीभावः सचेतसाम।।'

--सा0 दर्पण, (311)

स्थायी भाव	रस
रति	श्रृंगार (संयोग-श्रृंगार और विप्रलम्भ-श्रृंगार)
हास	हास्य
शोक	करुण
क्रोध	रौद्र
उत्साह	वीर (युद्धवीर, धर्मवीर, दानवीर)
भय	भयानक
जुगुप्सा (ग्लानि)	वीभत्स
विस्मय (आश्चर्य)	अद्‌भुत
निर्वेद (शम)	शान्त

कुछ और उल्लेखनीय गौण रस

वात्सल्य, मुक्ति, भक्ति, सख्य, आनन्द, दास्य तथा प्रकृति-रस आदि भी उल्लेखनीय हैं।[1]

कवि गुलाब खण्डेलवाल के प्रबंध-काव्यों में उक्त अधिकांश रसों का वर्णन मिलता है। पर उनमें रस-निरूपण की दो स्थितियाँ मिलती हैं ---

(क) परम्परानुमोदित, तथा

(ख) परम्परा-मुक्त।

(क) परम्परानुमोदित रस-निरूपण

इस प्रकार के रस-निरूपण में शास्त्रीयता होती है। विभाव, अनुभाव तथा संचारी भावों से पुष्ट होकर ही स्थायी भाव रस की निष्पत्ति करता है। गुलाब जी के अधिकांश प्रबंध इसी कोटि के हैं जिनमें भाव-व्यंजना के साथ-साथ रस-व्यंजना पर भी ध्यान दिया गया है। निम्नलिखित उदाहरण परम्परानुमोदित रस-निरूपण के अन्तर्गत आते हैं ---

श्रृंगार-रस

इस रस का प्रयोग कवि ने सुन्दर एवं स्वाभाविक ढंग से किया है। **कच-देवयानी** खण्डकाव्य का अंगी रस श्रृंगार ही है। --**उषा** महाकाव्य एवं

1- 'आधुनिक हिंदी महाकवियों का शिल्प-विधानः' डॉ0 श्यामनन्दन किशोर , पृ0 28, 7वाँ अध्याय)

अहल्या खण्डकाव्य के अन्तर्गत श्रृंगार रस सहायक रस के रूप में प्रयुक्त हुआ है। कवि गुलाब ने संयोग और वियोग दोनों पक्षों का चित्रण किया है।

उषा महाकाव्य की नायिका का विवाह-पूर्व प्रेम प्रभात से है। दोनों निरन्तर संयोग-सुख को भोगते हैं। कवि गुलाब ने इस संयोग की ओर बहुत ही कलात्मक और लाक्षणिक संकेत किया है ---

नग्न भुजाये,तनु झंझागम-स्रस्त शालि के द्रुम-सा
साँस-साँस में फूल रहा था उर अधखिले कुसुम-सा
छाया के मिस चरणों में सौन्दर्य झुका गुमसुम-सा
पूर्ण चन्द्र ज्यों बैठ गया था भाल-मध्य कुंकुम-सा।[1]

अथवा --

'झुकती ज्यों आपाद मुकुलिता लता वसंतोद्गम में
स्वर्गगा उतरी हो मानो गंगा के संगम में
चकित, ठिठक, गिरि-गुहा-निनादित घन-गर्जन-विभ्रम में
सरिता ज्यों विधुमुखी सिंधु से मिलने के उपक्रम में।[2]

दूसरी और किरण और राजीव के मिलन का श्रृंगारिक संकेत कवि गुलाब ने अत्यन्त ही कौशल के साथ प्रस्तुत किया है --

कपोलों पर दौड़ी अरुणिमा
झुकी पलकें आँखो पा चार
कर रही थी निःश्वास-तरंग
नसों में नव-शोणित-संचार। [3]

अथवा --

कुमुद-से झुका अपांग सलील
किरण बोली कानों के पास
आज जाने जी को क्या हुआ ?
अटकती-सी आती है साँस।[4]

1- 'उषा' , पृ0 2 2- वही, पृ0 2
3- 'उषा' , पृ0 63 4- वही, पृ0 64

पर **उषा** में विप्रलम्भ श्रृंगार ही अधिक पुष्ट हुआ है। उषा का विवाह उसके पूर्व प्रेमी प्रभात से नहीं हो पाता है, और वह राजीव की पत्नी बनकर चली जाती है। प्रभात का हृदय उषा के वियोग में जलने लगता है ---

चंद्रानने, पहन किरणों-सा अश्रु-हार ग्रीवा में,
वन में किधर गई तुम जलता हृदय हाथ मे थामे ?
मैं चकोर फिर रहा चतुर्दिक घिरा क्षितिज-सीमा में
यह तड़पन, नैराश्य व्यथा यह, कैसे सह लूँगा मैं ?[1]

उषा के प्रति प्रभात के हृदय का रति-भाव उषा के प्रवास के कारण तीव्रता और सघनता से प्रकट हो रहा है। यहाँ तड़पन, नैराश्य, व्यथा आदि भाव वियोग को पुष्ट करते हैं। निम्न उदाहरण प्रभात के प्रवास-जन्य वियोग को और पुष्ट कर रहा है :--

कहाँ भाग जाऊँ ? ज्वाला यह मन की जहाँ बुझेगी ?
किसकी उच्च हँसी, चल चितवन चकित मुझे कर देगी ?
अन्य किसी के स्वागत में वे पल-पँखुरियाँ बिछेंगी
बहुत हुआ तो मेरी स्मृति ठंडी साँसें भर लेगी [2]

कच-देवयानी एक पौराणिक प्रेम-काव्य है। इसके प्रथम सर्ग में ही कच-देवयानी के परस्पर मिलन की और कवि ने संकेत किया है ---

इतनी पुलकन, उच्छवास रुको
मैं चित्र अभी पूरा कर लूँ
तट की दो पतली बाँहों में
कैसे भर पावस-निर्झर लूँ। [3]

अथवा ---
नदंन के दक्षिण ओर वहीं
मेरा नन्हा-सा राजभवन
क्षीरोदधि-सा पाकर तुमको,
इंदिरे! करेगा मधुर स्तवन
उर पर सज मौक्तिक-हार वहाँ
दृग में चल काजल के डोरे

1- वही, पृ0 10 2- 'उषा' , पृ0 10
3- वही, पृ0 29

सुर-वधुएँ जवा-प्रवालों से
रँग देंगी ये पगतल गोरे।[1]

कच-देवयानी खण्डकाव्य में भी विप्रलम्भ श्रृंगार ही अधिक पुष्ट हुआ है। कच को जब यह जानकारी होती है कि देवयानी उसके गुरु की कन्या है तो वह उसके प्रेम को ठुकरा देता है। देवयानी का हृदय उसके वियोग में चीत्कार कर उठता है। **कच-देवयानी** खण्ड-काव्य का यह वियोग वर्णन बहुत उत्कृष्ट है ---

ओसों से प्यास बुझा तुम तो
जा रहे प्रात के तारे-से
इस धारा-सदृश पुकार तुम्हें
रोती में लिपट किनारे से। [2]

अथवा --
'यौवन-वांसती-अंचल में
शर-विद्ध मृगी-सी आँखें दो
तड़फड़ा उठीं उड़ जाने को
जैसे तिलली की पाँखें दो।[3]

अथवा --
'मानस की मुक्तालड़ियों सँग
गिरकर सङ्गहित काया थी
हिमस्रस्त लता-सी लोट रही
भू पर अपनी ही छाया-सी। [4]

अहल्या खण्डकाव्य में संयोग-श्रृंगार का उत्कृष्ट चित्रण मिलता है। अहल्या के अप्रतिम सौन्दर्य को भोगने के लिए मुनि गौतम के अधर आतुर हो जाते हैं ---

झुक गये अधर मुनि के प्यासा मरु सागर को
पीना चाहे ज्यों एक बार ही आतुर हो
छवि बँधती नहीं, बाँधते भुज दृढ़, दृढ़तर हो

1- कच-देवयानी, पृ0 28
2- 'कच-देवयानी' , पृ0 45
3- वही, पृ0 46
4- वही, पृ0 66

ढँकने आये जैसे पूनो के शशधर को
बादल काले-काले थे।' [1]

उक्त पंक्तियों में अहल्या आलम्बन एवं गौतम आश्रय है। अहल्या का अप्रतिम सौन्दर्य श्रृंगार-भाव को उद्दीप्त करता है।

अहल्या खण्ड-काव्य से संयोग का एक और चित्र द्रष्टव्य है --

आई श्रावन-घनमाली-सी युवती अधीर
खो जाने को प्रिय-स्नेहाकुल भुजबंध चीर
चातकी तृषित ज्यों देख उमड़ता स्वाति-नीर
चंचल तरंग-माला ज्यों पाकर तृषित तीर
अर्पित करती काया को।[2]

यहाँ सुरपति इन्द्र आलम्बन एवं अहल्या आश्रय है। एक दूसरा संयोग का उत्कृष्ट चित्रण द्रष्टव्य है ---

जानी न रात कब ढली बात ही बातों में
मधु-स्नात कली-सी मली स्नेह की घातों में
उच्छ्वसित प्रिया प्रियतम के कंपित हाथों में
'तुम रहो भटकते, मधुप ! न यों जलजातों में
उड़ने का अवसर बीते।'[3]

अहल्या खण्ड-काव्य में वियोग श्रृंगार का भी चित्रण मिलता है। सुरपति इन्द्र अहल्या की झलक पाकर उसको प्राप्त करने के लिए व्याकुल हो जाते हैं। सुरपति इन्द्र के पूर्वराग विप्रलम्भ को देखा जा सकता है --

इस और व्यर्थ लगता था जीवन प्रिया-हीन
उर्वशी, मेनका, रम्भा, तिलोत्तमा विलीन
परिपक्व रसाल, विशाल जहाँ, क्या पनस पीन !
सुरपति को मिलती पल भर भी स्थिरता कहीं न
परिषद या अंतःपुर में।[4]

1- 'अहल्या', पृ0 13
2- वही, पृ0 25
3- वही, पृ0 26
4- 'अहल्या' , पृ0 19

आलोक-वृत्त खण्ड-काव्य में श्रृंगार का चित्रण बहुत कम हुआ है। महात्मा गांधी और कस्तूरबा के परस्पर मिलन का कवि ने लाक्षणिक संकेत किया है ---

वह यौवन का उषाकाल था, नया राग, नव वीणा
चली उमड़ती लहर प्रेम की चिर-यतिहीन, नवीना
मोहाच्छन्न मधुप हो जैसे कमल-कोष में फिरता
जैसे अतल सुधा-धारा में मुग्ध मीन हो तिरता।[1]

उच्च अध्ययन के लिए महात्मा गांधी की इँगलैण्ड-यात्रा सद्यः-यौवना कस्तूरबा को विरह-भावना से व्यथित कर देती है ---

पर बाला जो अभी देहरी पर यौवन की, आयी
वर्षों का वियोग पति का सुनकर सहमी, थर्रायी
तड़प रही थी जो मछली-सी प्रिय के उर से लगके
जाने कैसे मृगी विकल वह रही बिना निज मृग के।[2]

परम्परानुमोदित विरह-दशाओं का भी आलेखन हमारे कवि ने किया है। वास्तव में 'मरण' को काम-दशाओं के अन्तर्गत मानना ही ठीक नहीं है, क्योंकि वह रस विरोधी है। इसीलिए आचार्य विश्वनाथ मरण-तुल्य दशा तथा आकांक्षित मरण आदि के वर्णन की ही अनुमति देते हैं -- वास्तविक मृत्यु की नहीं।[3] आलोच्य कवि ने **उषा** नामक महाकाव्य के अन्तर्गत मृत्यु की भी स्थिति का चित्रण किया है। उषा अपने पति राजीव के सुखी परिवार को देखकर त्याग की भावना से भर जाती है और समुद्र में कूद कर प्राण दे देती है। उसका प्रेमी प्रभात भी उषा के पीछे-पीछे स्वयं समुद्र में कूद कर प्राण दे देता है। गुलाब जी के प्रबंध-काव्यों से निम्न दो-तीन विरह-दशाओं के चित्रण द्रष्टव्य हैं ---

स्मृति --

'आया स्मृति में वह सांध्य जाह्नवी-तट सूना
वह भाव समर्पण का, वह विदा, चरण, छूना
वह यौवन का अनुरोध, भविष्यत्-की झाँकी
परवश मृग-से दृग सजल, झुकी ग्रीवा बाँकी।[4]

1- 'आलोक वृत्त' , पृ0 8
2- 'आलोक-वृत्त' , पृ0 11
3- दे0 साहित्य-दर्पण', 31193।194
4- 'उषा' , पृ0 42

जड़ता --

पल में सूखी जैसे जीवन-धारा पुनीत
रह गई गौतमी शिला-सदृश सुखदुखातीत
निज-भाग्य-अंक ले फूटे।[1]

वीर-रस

वीर-रस का अत्यन्त उत्साह से प्रादुर्भाव होता है।[2]

आलम्बन-उद्दीपन के भेद से उत्साह के चार रूप हो सकते हैं। उन्हींके अनुसार वीर-रस के भी चार भेद होते हैं -- युद्धवीर, दानवीर, दयावीर, और धर्मवीर। हमारे कवि के प्रबंधकाव्यों का अंगीरस वीर नहीं है। किन्तु सहायक रस के रूप में **उषा** नामक महाकाव्य में कवि ने युद्धवीर का वर्णन किया है। एक चित्र द्रष्टव्य है ---

दिख पड़ा कुछ दूर पर ही सामने
अरि-कनक-ध्वज एक टीले पर गड़ा
तीर-सा राजीव आ द्रुत नाव से
कूद एकाकी उसे लेने बढ़ा
विकल विस्मित-सी हतप्रभ सैन्य थी
पार्श्वचर पीछे छुटे मुँह देखते
मच गई थी शत्रुओं में खलबली
दिख पड़े वे विवश घुटने टेकते।[3]

इस प्रसंग में राजीव और उसके शत्रुओं का उसके साथ युद्ध का वर्णन दृष्टव्य है। रस की दृष्टि से राजीव आश्रय और दुश्मन आलम्बन हैं। राजीव का कूद कर आगे बढ़ना अनुभाव है। दुश्मनों के पूर्व के कृत्यों की स्मृति संचारी है। इन सब तत्त्वों से परिपुष्ट 'उत्साह' (स्थायी) रसरूप में व्यंजित है।

1- 'अहल्या', पृ0 29
2- 'काव्यकल्पद्रुम' (प्रथम भाग) सेठ कन्हैया लाल पोद्दार, पंचम् संस्करण, पृ0 215
3- 'उषा', पृ0 82

अहल्या से भी एक उदाहरण वीर रस का देखा जा सकता है, परन्तु यह युद्धवीर का नहीं , धर्मवीर का है --

रघुकुल-कुलदेव दिनेश अभी क्या हुए अस्त !
कौशल की रण-वाहिनी खड़ी तत्पर समस्त
मुनिवर ! मैं स्वयं धर्मरक्षण को खड्गहस्त
धिक् जीवन ! देखूँ साधु जनों को ध्वस्त, त्रस्त
जलते अन्याय-अनल में।[1]

उक्त प्रसंग में धर्म-रक्षण का चित्रण नहीं किया गया है बल्कि कथन है।

आलोक-वृत्त खण्डकाव्य में भी कवि ने वीर-रस की ओर लाक्षणिक संकेत किया है ---

स्वर गाँव-गाँव घर-घर फैले
चल पड़े युवक दृढ़ निश्चय ले
नेताओं ने जयनाद किया
बापू ने सीना तान दिया। [2]
अथवा --
'चली गोली, हुए बम के धमाके
न फिर भी हौंसले कम थे प्रजा के
सिपाही थक गये थे वार करते
प्रशासक थक गये थे जेल भरते। [3]

करुण-रस

गुलाब जी के **उषा** नामक प्रबंध-काव्य में करुण-रस का ही प्राधान्य है। यहाँ करुण-रस अंगी रस के रूप में चित्रित हुआ है। कवि गुलाब के इस प्रबंध-काव्य से एक उदाहरण प्रस्तुत है ---

हा ! प्राणों के प्रिय, मुकुल ! हा जीवनाधार मेरे !
कैसे होके विलग तुझसे जी सकूँगी भला मैं !

1- 'अहल्या', पृ0 35
2- 'आलोक-वृत्त' , पृ0 70 3- वही, पृ0 65

आ जा मेरे विहग ! तुझको अंक में बाँध लूँ मैं
मेरे मानी सुत ! न छिप यों, हाय रे ! क्या करूँ मैं ![1]

यहाँ पुत्र मुकुल की मृत्यु से उषा शोकग्रस्त है। बंधुनाश-जन्य करुण-रस का एक दूसरा उत्कृष्ट निदर्शन देखा जा सकता है --

आती हूँ मैं सँग-सँग लगी, क्लेश देना न जी को
मेरे प्यारे विलग तुझसे मैं नहीं जी सकूँगी
मूर्च्छा आयी, शिर अवनि को छू गया, रक्त फैला
मरणाकांक्षी विकल उर को दो घड़ी नींद आई। [2]

यहाँ मुकुल की मृत्यु आलम्बन है, उषा आश्रय है, पुत्र की स्मृतियाँ उद्दीपन हैं, मूर्च्छा, पृथ्वी पर गिरना, रक्त निकल पड़ना अनुभाव हैं, दैन्य, विषाद आदि संचारी भाव हैं। उपर्युक्त सामग्री से परिपुष्ट शोक की करुण रस के रूप में चरम परिणति हुई है।

करुण-रस का एक उदाहरण **आलोक-वृत्त** से भी द्रष्टव्य है --

भर आये बापू के लोचन
हो गये अचल भी चंचल-मन
सोया दुःख जाग गया जैसे
थी खड़ी कह रही 'बा' जैसे --।[3]

यहाँ पत्नी-नाश-जन्य करुणा है। यहाँ बापू आश्रय हैं, कस्तूरबा की मृत्यु आलम्बन है, 'बा' की स्मृतियाँ उद्दीपन हैं, विषाद संचारीभाव है। आँखों में आसुँओं का आना अनुभाव है। उपर्युक्त सामग्री से परिपुष्ट शोक करुण-रस में प्रस्तुत है।

गुलाब जी के अन्य दो प्रबंध-काव्यों (**अहल्या, कच-देवयानी**) में इस प्रकार के मृत्यु-जनित करुण-रस का चित्रण नहीं हुआ है।

शान्त-रस

धिक् संसार असार शून्य तत्त्वों से सर्जित
मेघों का पुर, सपने के सिंहों-सा गर्जित

1- 'उषा' , पृ0 86 2- वही, पृ0 87
3- 'आलोक-वृत्त', पृ0 74

मृत्यु ! धन्य सबकी तू ही ध्रुव आश्रय-दात्री
सुखमय, शांति-भरी, इस जीवन-शिशु की धात्री।[1]

ये पंक्तियाँ **उषा** नामक काव्य से उद्घृत है। उषा आश्रय, असार संसार आलम्बन है, उसके पुत्र का मरण, तथा प्राणी का अनिवार्य मरण आदि उद्दीपन हैं। मृत्यु एवं संसार को इस प्रकार सम्बोधित करना अनुभाव है। संचारी है वितर्क' मति, धैर्य आदि।

'आलोक-वृत्त' के निम्न पद्य में भी शांति का सौन्दर्य है --

यों तो तब तक साम्यवाद की लहर नहीं आयी थी
पर बापू ने साम्य-भावना सबको सिखलायी थी
सम था श्रम का मूल्य, कहीं वैषम्य न था जीवन का
आश्रम-जीवन ही प्रयोग था समता के दर्शन का
सब स्वंतत्रचेता, सबको अवसर विकास का सम था
व्यक्ति इकाई जीवन की, कोई भी अधिक न कम था।[2]

यहाँ सभी रस-अवयवों से पोषित शम भाव रस-रूप में व्यंजित है। शम स्थायी भाव के रूप में है। शान्तरस के अन्तर्गत निर्वेद और शम दोनों में से कोई भी स्थायी भाव हो सकता हैं। आचार्यो ने भी ऐसा स्वीकार किया है।[3]

रौद्र-रस

प्रस्तुत कवि ने रौद्र रस का प्रचुर चित्रण **उषा** नामक महाकाव्य में किया है। एक उदाहरण प्रस्तुत है ---

चाहता प्रिया के तन-मन पर एक एकाधिकार
प्रेमी, तो सहह्य जिसे पल भर भी पर का विचार
वह पौरुष-हीन, क्लीव, यह मरण कलंक भाल
मैं पूर्व देखने के लूँगा आँखो निकाल।[3]

राजीव आश्रय है और प्रभात आलम्बन। प्रभात का उषा के साथ अत्यधिक सामिप्य उद्दीपन है। राजीव की कठोर उक्ति अनुभाव है। उग्रता

1- 'उषा', पृ0 116 2- 'आलोक-वृत्त', पृ0 39

3- दे0 काव्य-कल्पद्रुम (प्रथम भाग) कन्हैया लाल पोद्दार, पंचम संस्करण, पृ0 234

संचारी है।

'अहल्या' से एक उदाहरण द्रष्टव्य है --

पल में विद्युत-सा कौंध गया निशि का प्रसंग
वह छद्य प्रात का ढंग, अचानक स्वप्न-भंग
नख-शिख तनु में व्यापी जैसे ज्वाला-तरंग
रक्ताभ नयन, आनन पर क्षण-क्षण चढ़ा रंग
अपमान, घृणा, पीड़ा का।[1]

अहल्या से एक दूसरा उदाहरण द्रष्टव्य है --

धिक् सुरपति ! जिस नारीत्व-हेतु सुर-सदन त्याग
तुम आये इस निर्जन में, वही सहस्र-भाग
अंगों में होगी व्याप्त तुम्हारे ज्यों दवाग
यह अयश-कालिमा ले शिर पर, चिर-मलिन काग !
तुम भटकोगे त्रिभुवन में।[2]

यहाँ सुरपति इन्द्र आलम्बन और गौतम ऋषि आश्रय हैं। इन्द्र का छलपूर्ण कामुक आचरण ही उद्दीपन है। गौतम का कठोर शाप अनुभाव है।

आलोक-वृत्त से भी रौद्र का एक उदाहरण द्रष्टव्य है --

क्रुद्ध घेरे थी चपल उस पोत को
लहरें न केवल,
भीड़ गोरों की भयानक
झाग-से मुख से उगलती
दुर्वचन, गर्वोक्तियों, आक्रोश
हिंसक धमकियों से
वायुमंडल को कँपाती
तृषित नागों-सी
सुधा-घट के चतुर्दिक,
घेरकर ज्यों रथ दिवाकर का गगन में,
मंडली भीमांग मेघों की,
किलकती, कूदती, यों गा रही थी -

1- 'उषा' , पृ0 43 2- 'अहल्या' , पृ0 28

ले चलो इस दुष्ट गांधी को पकड़कर,
और इमली के बड़े उस पेड़ पर फाँसी चढ़ा दो।'[1]

यहाँ अंग्रेजों की भीड़ आश्रय है और गांधी आलम्बन हैं। गांधी का क्रांतिपूर्ण कार्य उद्दीपन है। गोरों का आक्रोश, दुर्वचन और 'गांधी को फाँसी पर लटकाने की उक्ति' अनुभाव हैं। स्मृति, उग्रता संचारी भाव हैं। एक दूसरा उदाहरण प्रस्तुत है --

यह रहा गांधी, यही तो है
कुटिल वह सर्प भारत की धरा का
चाहता है जो निगल जाना हमारी सभ्यता को।
क्रुद्ध आ पहुँची निकटतर भीड़ गोरों की उमड़ती
सिंधु की दुर्दात लहरों-सी उन्हें झकझोरती-सी
ठेलती-सी, साथियों से दूर करती,
बार-बार प्रहार करती
ईंट, रोड़ों, पत्थरों से, मुट्ठियों से।[2]

यहाँ भी गांधी आलम्बन और गोरों की भीड़ आश्रय है। गांधी का क्रांतिपूर्ण कदम उद्दीपन है। ईंट, रोड़ों और पत्थरों का प्रहार अनुभाव हैं। स्मृति और उग्रता संचारी हैं। आलोक-वृत्त से ही एक दूसरा रौद्र का उत्कृष्ट उदाहरण देखा जा सकता है ---

वंदी बन बापू जब दूतों के साथ चले
जन शत-सहस्र विक्षुब्ध मींजते हाथ चले।[3]

कच-देवयानी में रौद्ररस का चित्रण तो नहीं, लेकिन कथन मिलता है --

विक्षुब्ध लहरियाँ मानस की
नयनों से फूट निकलती-सी
उस कातर छवि की ओर बढ़ीं
फणिनी-सी फेन उगलती-सी।[4]

1- 'आलोक-वृत्त', पृ0 4
2- वही, पृ0 24
3- वही, पृ0 43
4- 'कच-देवयानी' , पृ0 64

भयानक

सहमें दनुज जो शक्ति से मदमत्त हो
शासन चलाते थे कुलिश की नोक से।
यों डगमगाये राज-सिंहासन सुदृढ़
बजने लगीं साम्राज्य की चूलें सभी
मणि-दंड कंपित, शिथिल करतल से गिरा,
भूचाल वह आया कि नभचुंबी शिखर
आतंक, अत्याचार, शोषण, दंभ के
भयभीत होकर आप ही ढहने लगे।[1]

यहाँ अंग्रेज प्रशासकगण आश्रय एवं गांधी आलम्बन हैं। गांधी का वीरतापूर्ण कृत्य उद्दीपन है। डगमगाना, मणि-दंड का कंपित होना, शिथिलता इत्यादि अनुभाव हैं। चिन्ता एवं त्रास संचारी हैं। **आलोक-वृत्त** से एक दूसरा उदाहरण प्रस्तुत है ---

बहुत जो दूर ऊँचे पर खड़े थे
उन्हें भी जान के लाले पड़े थे
पसीना भाल पर आने लगा था
कवच में गात थर्राने लगा था।[2]

यहाँ महात्मा गांधी आलम्बन और अंग्रेज शासकगण आश्रय हैं। महात्मा गांधी का नमक कानून का उल्लंधन करना एवं उनकी वीरता एवं साहस उद्दीपन हैं। भाल पर पसीना आना एवं गात थरथराना अनुभाव हैं। चिन्ता एवं त्रास संचारी हैं।

भयानक रस के एक, दो उदाहरण **अहल्या** से द्रष्टव्य हैं --

मुड़कर देखी सहसा पत्नी-मुखछवि विवर्ण
नयनों की झर-झर व्यथा, मर्म-लज्जा अवर्ण्य
पतझर की एकाकिनी लता ज्यो शेष-पर्ण
जीवन-भिक्षा को , भय-कंपित आपाद-कर्ण
धूसर अंचल फैलाये।[3]

1- 'आलोक-वृत्त' , पृ0 5
2- 'आलोक-वृत्त , पृ0 65
3- 'अहल्या' , पृ0 28

यहाँ मुनि गौतम आलम्बन एवं अहल्या आश्रय है। मुनि का शाप एवं क्रोध उद्दीपन है। काँपना और अश्रु गिरना इत्यादि अनुभाव हैं। त्रास संचारी है। **अहल्या** से एक दूसरा उदाहरण देखा जा सकता है--

देखा सहसा सम्मुख जो चिर-कल्पनातीत
सुरपति कुटीर से कढ़े प्रात विधु से सतीत
थी खड़ी अहल्या विनत, लिये मुखकांति पीत
स्मितिमय भौहों में अतनु छिपा चिर-दुर्विनीत
दुहरी जय पर इतराता।[1]

आलोक-वृत्त से भयानक रस का एक और उत्कृष्ट उदाहरण द्रष्टव्य है ---

जिस ओर चले ये पग जाते
इतिहास बदलने लग जाते
रीते कुबेर के घट होते
नंदन-कानन मरघट होते
मणिदंड हाथ से छुट जाते
धरती पर राजमुकुट आते
कट जाता शासन का पत्ता
मुँह के बल गिर पड़ती सत्ता।

उपर्युक्त अवतरण में गांधी की क्रांति आलम्बन एवं सत्ताधारी अंग्रेज आश्रय हैं। मुँह के बल गिर पड़ना, राजमुकुट का गिरना, मणिदण्ड का छूट कर गिर पड़ना इत्यादि अनुभाव हैं। त्रास एवं चिन्ता संचारी हैं।

अद्‌भुत-रस

'आश्चर्य-जनक विचित्र वस्तुओं के देखने से अद्‌भुत-रस व्यक्त होता है।'[2] गुलाब जी के प्रबंधकाव्यों में अद्‌भुत का चित्रण बहुत कम हुआ हैं। फिर भी प्रयत्न करने पर दो एक अद्‌भुत भावों का संकेत मिल जाता है।

1- 'वही' , पृ0 26

2- 'काव्य-कल्प द्रुम' , (प्रथमभाग) - सेठ कन्हैया लाल पोद्दार, पंचम संस्करण, पृ0 231

यथा ---

बंधुओ , गांधी कहाँ है इस भवन में
वह लगाकर पंख नभ में उड़ गया है
घुल गया है वायु में
वह भूमि की गहराईयों में खो गया है। [1]

अहल्या से दो-एक अद्‌भुत-रस के उत्कृष्ट उदाहरण द्रष्टव्य हैं --

सहसा खुल गये बंद अंतर के ज्योति-द्वार
ये राम मनुज ! सच्चिदानन्द, पूर्णावतार
देखा विराट् विभु-रूप सामने महाकार
क्षिति-भार-हरण, भव-शरण-वरण, जन-हृदय-हार
सुर-मुनि-विधि-हरि-हर पूजित
हिल्लोलित जलनिधि चरणों पर खाता पछाड़
ब्रह्मांड कोटि प्रतिरोम, त्रस्त गिरते पहाड़
करतल से जलते त्रिभुवन को दे रहे आड़
देखा कौशिक ने चकित मुँदे लोचन उघाड़
पल भर वह रूप अकल्पित।' [2]

उपर्युक्त पंक्तियों में अद्‌भुत का दृश्य है। श्री रामचन्द्र आलम्बन हैं और कौशिक आश्रय हैं।

अहल्या से ही एक दूसरा उदाहरण द्रष्टव्य है --

जाज्वल्यमान शत भानु, अतल-पद, मेरु-शीष
बन मिटते क्षण-क्षण भूत-भविष्यत् के क्षितीश
देखा फिर सिंघु लाँघते दल, भल्लुक-कपीश
शलभों-से निसिचर रावण, खरदूषण, त्रिशीष
शर-द्युति में होते लय-से।
करते नभ से जयघोष देव-किन्नर समस्त
शत-कोटि भुजा भव-व्याप्त, सृजन-संहार-व्यस्त
दिग्-काल-भ्रष्ट देखे खगोल शत उदित, अस्त
अभिवादन-मिस माँगते क्षमा संपुटित-हस्त
दृग झुके भूमि पर भय से।'[3]

1- 'आलोक-वृत्त' , पृ0 26 2- 'अहल्या' , पृ0 33
3- 'अहल्या', पृ0 33

मुनि कौशिक राम के विराट् रूप को देखकर आश्चर्य-चकित हैं। राम आलम्बन एवं आश्रय कौशिक हैं। सैकड़ों सूर्य एवं भूत-भविष्य का संकेत ही उद्दीपन है। संपुटित-हस्त से क्षमा माँगना, एवं आखों का झुक जाना अनुभाव हैं। [1]

वीभत्स-रस

अशेष रुंड-मुंड से
पटी धरा, कटी धरा
समान जीत-हार में
अमान धुर्जटी धरा।[2]

उपर्युक्त पंक्तियों में वीभत्स का दृश्य है। युद्धभूमि में असंख्य रुंड-मुंड पड़े हूए हैं। कवि स्वयं आश्रय है। वीभत्स का संकेत **अहल्या** नामक प्रबंधकाव्य में भी कहीं-कहीं मिलता है। यथा ---

हो गया ढेर पल में सुबाहु मुख-बाहु-हीन
रथ, अश्व, पदातिक सैन्य दिवातम-सी विलीन
सागर के पार उड़ा शर खा मारीच दीन
जो बचे, फिर छवि-क्षीण, पुनः लौटे कभी न
भूले भी आश्रम की दिशि।' [3]

वात्सल्य-रस

जहाँ पुत्रादि के प्रति माता, पिता आदि के वात्सल्य परिपूर्ण स्नेह की विभावादि द्वारा पुष्टि हो वहाँ वात्सल्य-रस होता है।'[4] कवि गुलाब खंडेलवाल के **उषा** महाकाव्य में उषा का मुकुल के प्रति वात्सल्य-भाव का उत्कृष्ट चित्रण मिलता है।

1- गुलाब जी के प्रबंध-काव्यों में हास्य रस का चित्रण नहीं मिलता है
2- 'उषा' , पृ0 78
3- 'अहल्या' , पृ0 45
4- 'काव्य-दर्पण' , द्वितीय संस्करण, पृ0 218

बालक मुकुल के जन्म के पश्चात् उसकी बाल-क्रीड़ाओं के प्रसंग में वात्यल्य-रस देखा जा सकता है --

'माँ, माँ', उर को ध्वनि बेध चली
भारी साँसे, जलता ललाट
मेरे चंदा ! आये न अभी,
मैं हार गयी जोहती बाट
'माँ, माँ', मेरी आत्मा के धन
बेटा, यह आज हुआ क्या है !
लजवंती-सा कुम्हलाता जो
कोमल मुख, हाय छुआ क्या है ![1]

संयोग-वात्सल्य का एक उदाहरण द्रष्टव्य है --

मातृत्व महत्ता से मुख की
कृशता भी शोभा पाती थी
बालारुण-सा निज अंक लिये
ऊषा क्षण-क्षण मुस्काती थी। [2]

राजीव के उषा और मुकुल को छोडकर चले जाने के बाद उषा और मुकुल अकेले पड़ जाते हैं। एक दिन राजीव को अचानक अपना परिवार याद आता है। वह अपने पुत्र की स्मृति में विभोर हो उठता है ---

'आह, कितनी दूर, इस विस्तृत जलधि के पार
पूर्व-जन्म-विलुप्त-स्मृति-सा वह सरल परिवार !
इंदु के लघु खंड-सा वह वत्स दीन, अबोध
दे रहा होगा पिता का उसे कौन प्रबोध ?'[3]

उषा का पुत्र मुकुल बीमार हो जाता है। उषा उसकी बीमारी के चलते अत्यधिक विकल हो जाती है। वह अपने पुत्र की रक्षा के लिए देवताओं और देवियों की वन्दना करने लगती है। उषा की वात्सल्य-जनित करुणा निम्न पंक्तियों में फूट पड़ी है ---

आशा-क्षीणा, सजल-नयना, वंदिता, एक-वेणी
दीना, हीना, मलिन-वदना, मूर्तिता वेदना-सी

1- उषा, पृ0 29
2- वही, पृ0 26
3- 'उषा' , पृ0 69

शैया-सेवी प्रतनु सुत को, भानु को देखती थी
गोधूली-सी नत-मुख खड़ी एक वामा विषण्णा
होता जाता तम सघन ज्यों, छा रही थी दुराशा
प्राणों में थीं गहन भय की मूर्तियाँ रूप लेतीं
काले भीमाकृति भुजग वायु में तैरते थे
सूनी छाया दिशि-दिशि घनी फैलती थी निशा की।
फूटी वाणी विकल सहसा दीप को मंद पाके
माता, धात्री सकल जग की, जाह्नवी पुण्य-तोया
अंबे ! तू ही मुझ पतिहृता एक-पुत्रा, अभागी
माँ के जी की सुन दुख-कथा, लाज है हाथ तेरे
पीड़ायें दे समुद, जननी ! झेल लूँगी सभी मैं
दे दूँ छिन्ना कर स्वकर से, माँग ग्रीवा अभी तो
मेरे आशा-मुकुल शिशु को यातना से छुड़ा दे
माता ! मेरा वचन इतना देख जाने न पाये।"[1]

अहल्या खण्डकाव्य से वियोग वात्सल्य का एक उदाहरण प्रस्तुत है --

सब स्तब्ध सभा, नृप सूख गये ज्यों दिखा व्याल
सुत-विरह-शोक का, सम्मुख फण काढ़े कराल
खिँच गये दृगों में श्रवण-पिता-दृग लाल-लाल
बोले कातर-स्वर, ममताकुल मन को सँभाल
मुनिवर ! क्या उत्तर दूँ मैं ![2]

यहाँ मुनिवर कौशिक का राम-लक्षमण को ले जाने का हठ आलम्बन है और दशरथ आश्रय हैं। पुत्र-वियोग की सम्भावना उद्दीपन है। दशरथ का कातर-वचन अनुभाव है। **अहल्या** से ही वियोग-वात्सल्य का एक दूसरा उत्कृष्ट उदाहरण द्रष्टव्य है --

दशरथ सुनते ही हर्ष-प्रीति से उठे ललक
रथ में मानों मिल गई राम की श्याम झलक

1- 'उषा' , पृ0, 85
2-'अहल्या', पृ0 37

माताओं ने सोच्छवास पोंछकर सजल पलक
फिर-फिर पूछी पथ-कथा सारथी से, कबतक
लौटेंगे सुत कानन से?
लघुवयस, सलोने, फूलों-से कोमल, किशोर
कैसे झेलेंगे वन का जीवन कठिन घोर
निःशैन्य बाल वे कहाँ निशाचरदल अथोर !
सूझी न, हाय ! मुनि को मख-रक्षण-युक्ति और
पुतली ले गये नयन से। [1]

भक्ति

जहाँ ईश्वर-विषयक प्रेम विभावादि से परिपुष्ट होता है वहाँ भक्ति-रस जाना जाता है।"[2] महाकवि गुलाब खडेलवाल के **अहल्या** नामक खण्डकाव्य में भक्ति-भावना का चित्रण मिलता है। गौतम से परित्यक्त अहल्या पाषाणी की तरह जीवन व्यतीत कर रही है। वह भगवान राम को देखकर भक्ति-भाव से भर जाती है ---

(1) 'जय राम ! ज्योति के धाम ! विगत-भय-काम-क्रोध।
करुणा के सागर, दीनबंधु भव-मुक्ति-शोध
मैं पाप-निमग्ना, भग्ना, दुख-लग्ना, अबोध
दे शरण चरण की, नाथ। हरो मन का विरोध,
यह चिर-कलंक धुल जाये

(2) दुख भोग रही जो कर्म-चक्र-भ्रमिता, सकाम
प्रभु। बिना तुम्हारे आत्मा को मिलता विराम !
नारी अधमा, उसपर वामा मैं सतत वाम,
कैसे छू लूँ ये चरण-सरोरुह मुक्तिधाम !
भव-जलनिधि के बोहित-से।' [3]

1- 'अहल्या' , पृ0 43
2- 'काव्य-दर्पण , द्वितीय संस्करण, पृ0 214
3- 'अहल्या' , पृ0 50

अहल्या से ही भक्ति-भावना का एक दूसरा प्रसंग द्रष्टव्य है :--

शीतल हो गये नयन, प्रभु-छवि निर्मल विलोक
छवि-धाम राम, निष्काम, विगत-भय-राग-शोक
पावन स्मिति से आलोकित पल में हृदय-लोक
हत-बुद्धि अहल्या, साश्रु गिरी प्रभु-पंथ रोक
ढँकती कलंकमय मुख को।[1]

(ख) परम्परा-मुक्त रस-निरूपण

कविवर गुलाब खंडेलवाल के अन्य प्रबंध-काव्यों (**उषा, कच-देवयानी, अहल्या, आलोक-वृत्त**) में पारम्परिक रस-निरूपण के अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता हैं कि इनमें अन्य छायावादोत्तर प्रबंध **तुलसीदास** (निराला), **'कुरुक्षेत्र'** (दिनकर), **कैकेई** (प्रभात) **एकलव्य** (राम कुमार वर्मा) **कनुप्रिया** (धर्मवीर भारती) तथा **लोकायतन** (पंत) की तरह छायावादी प्रभाव के कारण या समस्यामूलकता के कारण परम्परा-मुक्त रस-व्यंजना की प्रवृत्ति भी मिलती है। इनमें रस से अधिक भाव पर ध्यान दिया गया है। दूसरे शब्दो में यह कहा जा सकता है कि इन प्रबंधों में मनोवृत्तियों एवं समस्याओं के चित्रण के माध्यम से स्वंय ही रस अनायास रूप में उदबुद्ध हो गये हैं। **उषा** मूलतः एक प्रेम-प्रबंध है। फलस्वरुप, प्रेम के त्रिकोण के कारण (एक नारी दो पुरुष) इसमें मिलन, वियोग, आशा और निराशा की मार्मिक अनुभूतियाँ ही प्रधान हो गयी हैं। **अहल्या** में भी प्रेम की मार्मिकता ही प्रधान है। **कच-देवयानी** को भी प्रेम-काव्य ही कहा जा सकता है। हाँ, **आलोक-वृत्त** में गांधी-चरित्र का आख्यान प्रसाद-गुण-सम्पन्न भाषा में प्रस्तुत कर दिया गया है। अतः इसमें दिनकर के **कुरुक्षेत्र** की तरह भाव से अधिक विचार की प्रधानता हो गयी है।

गुलाब जी के मुक्तक-काव्यों में परम्परा-मुक्त रस-निरूपण का आग्रह सर्वाधिक है। इसका विस्तृत विवरण मुक्तक-काव्यों के रस-निरूपण के प्रसंग में किया गया है।

(2) मानवेतर आलम्बन और उद्दीपन

भाव-पक्ष के अन्तर्गत रस की विविधता तथा भावों को उत्पन्न करने के कारण-स्वरूप आलम्बनों एवं उत्पन्न भावों को उद्दीप्त करनेवाले उद्दीपनों का

1- 'अहल्या' , पृ0 48

वर्णन हो चुका है। यहाँ संक्षेप में मानवेतर आलम्बन एवं उद्दीपन की विभिन्न भूमिकाओं का संकेत करना है। 'आलम्बन' की व्यापकता बहुत अधिक है। मनुष्य से लेकर कीट, पतंग, वृक्ष, नदी, पर्वत आदि सृष्टि का कोई भी पदार्थ आलम्बन बन सकता है।' [1] उसी तरह उद्दीपन के दो भेद हैं -- पात्रस्थ एवं बाह्य। [2] गुलाब जी के प्रबंधों में मानवेतर आलम्बन (प्रकृति) एवं बाह्य उद्दीपन (प्रकृति) न्यूनाधिक रूप में मिलते हैं।

(क) आलम्बन रूप में प्रकृति :

प्रकृति को स्वतंत्र सत्ता मानकर उसका वर्णन गुलाब जी के प्रबंधकाव्यों में विशेष नहीं मिलता है। हाँ, प्रकृति के प्रति उन्मुक्त प्रेम-भाव की व्यंजना और प्रकृति के शब्द-चित्रण की स्थितियों का उल्लेख मिलता हैं। **उषा** महाकाव्य में प्रकृति का आलम्बन-गत चित्रण यत्र-तत्र दिखलायी पड़ता है। **उषा** से संध्या का चित्र द्रष्टव्य हैं ---

लहरों पर शतदल-सा जिसका पगतल छाया-प्रभ था
नील मधुप-माला-सा उर पर मेघों वाला नभ था
कर-रवि-दीप जल रहा जिसमें एक उदास शलभ था
गूँथ किरण-कच चली अरुणिमा, उड़ता पट-सौरभ था।[3]

उषा से ही आसन्न रात्रि के प्रथम प्रहर का एक दूसरा आलम्बन-गत चित्रण प्रस्तुत है ---

झिलमिल गोधूलि-पट में
खिलखिल हँसती इठलाती
रजनी चन्द्रानन से थी
तम का घूँघट सरकाती
जलनिधि उन्मत्त शिखी-सा
लहरों के पंख उठाये

1- 'मैथिलीशरण गुप्त : कवि और भारतीय संस्कृति के आख्याता' , डॉ0 उमाकान्त, पृ0 98

2- 'पात्रस्थ, के अतंर्गत आती हैं पात्र की और स्पष्ट शब्दों में आलम्बन की चेष्टाएँ तथा दूसरे में आती हैं तदितर बाह्य परिस्थिति।' -- वही, पृ0 105

3- 'उषा' , पृ0 2

नूपुर पर नाच रहा था
झुक-झुककर दायें-बाँयें। [1]

'अहल्या' खण्ड-काव्य से प्रकृति के आलम्बन-गत चित्रण द्रष्टव्य हैं --

(1) गुंजित वसंत के छंद-वंध से मधुप-वृंद
उड़ चले चकित चंद्रातप कुंजो में अमंद
असमय मधु-याचित कंज सरों में रहे बंद
निर्द्वंद्व, खोलते दल पर दल, मृदु-मंद-स्पंद
विधु की छाया-सँग विहरे

(2) खग-खगी चोंच में चोंच दिये कामातुर-से
तरु-बेलि केलिरत, सहज सुवेष्ठित उर-उर से
गाता रसाल पर नर-कोकिल पंचम सुर से
चौंका देती जिसको क्षण-क्षण क्वण-नूपुर से
मंजर-मंजीरित भ्रमरी।' [2]

आलोच्य कवि के प्रबंध-काव्यों में आलम्बनगत वैविध्य को हृदयंगम करने के लिए उक्त अवतरणों का विवेचन यथेष्ट है। उक्त प्रसंगों के पठन के पश्चात् कवि की व्यापक प्रतिभा का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

(ख) उद्दीपन रूप में प्रकृति

रसों के विवेचन में (पात्रस्थ) उद्दीपन-गत वैविध्य देखा जा चुका है, क्योंकि प्रत्येक रस में विभिन्न उद्दीपन हुआ करते हैं। यहाँ पर मानवेतर (प्रकृति) उद्दीपन की विविधता पर विचार किया जा रहा है।

उषा महाकाव्य के अन्तर्गत प्रकृति का उद्दीपन-गत चित्रण (संयोग श्रृंगार के अन्तर्गत) देखा जा सकता है ---

और ही आज पवन की दिशा

1- 'उषा', पृ0 128
2. 'अहल्या', पृ0 20

और ही रजनी का श्रृंगार
हँस रहे ज्योत्स्ना पी नक्षत्र
ऊँघ-सा रहा निखिल संसार।[1]

उक्त प्रसंग में संयोगावस्था में ज्योत्स्ना-पूर्ण रजनी किरण के हृदय में संयोग की भावना को उद्दीपन करती है।

'अहल्या' खण्डकाव्य में भी प्रकृति का उद्दीपन-गत चित्रण मिलता है। वासंती संध्या में सुरपति इन्द्र भी अप्रतिम सुन्दरी अहल्या को देखकर बेचैन हो उठते हैं। यथा ---

वासंती संध्या, मंद मलय लेता झकोर
चंचल किसलय-अंचल को कलियों के मरोर
शर उड़ते प्रतनु, अतनु के धनु की चढ़े डोर
नभ से जाते सुरपति ने भू की देख ओर
अंतर की शांति गँवाई।[2]

अहल्या से संयोग-श्रृंगार-युक्त प्रकृति का उद्दीपन-गत एक दूसरा चित्र द्रष्टव्य है ---

आओ, निकुंज की चलें पुलकमय छाया में
बुन रहीं जहाँ किरणें कुसुमों की काया में
कोमल प्रकाश की जाली।[3]

यहाँ इन्द्र के हृदय में संयोग-भाव को निकुंजों की छाया और कुसुम उद्दीप्त कर रहे हैं।

कच-देवयानी काव्य के अन्तर्गत भी प्रकृति का उद्दीपन-गत चित्रण मिलता है। यथा ---

मेरी तम-रजनी के प्रभात !
देखो न मुझे यों चकित, मौन
छिपकर रसाल की डालों मैं

1- 'अहल्या' , पृ0 20
2- 'उषा' , पृ064
3- 'अहल्या' , पृ0 15

देखो, गाती है वहाँ कौन
यह वेत्रवती का खर प्रवाह
ये हवन-धूम से भरे गेह
प्रिय अतिथि ! आज इन तरुओं के
है सुमन-सुमन में नया स्नेह।[1]

यहाँ देवयानी के हृदय में कोयल की कूक, तरु और सुमन संयोग-भावना का उद्दीपन करते हैं।

'विरह-श्रृंगार' के अन्तर्गत भी प्रकृति का उद्दीपन-गत चित्रण गुलाब के प्रबंध-काव्यों में मिलता है। यथा ---

'तम, सुदूर पुर, नूपुर-सी वन-झिंगुर-झाँझें बजतीं
पगतल पर नागिन-सी लहरें फण फुफकार गरजतीं
विरहिन विरह-निशा कपिशा-सी चली दिशा-पट सजती
चूर्ण चपल चेतना-चन्द्रिका उड़ती पथ की रज थी।'[2]

तात्पर्य यह है कि गुलाब जी के प्रबंधकाव्यों में दोनों प्रकार के उद्दीपन उपलब्ध हैं। वे पात्रस्थ भी हैं और बाह्य भी।

(3) मार्मिक प्रसंगों की पहचान

जायसी ग्रंथावली में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है-- 'जिनके प्रभाव से सारी कथा में रसात्मकता आ जाती है, वे मनुष्य-जीवन के मर्मस्पर्शी स्थल हैं, जो कथा-प्रवाह के बीच-बीच में आते रहते हैं। यह समझिये कि काव्य में कथावस्तु की गति इन्हीं स्थलों तक पहुँचने के लिए होती है।' [3] पूर्ण भावुकता के द्वारा ही जीवन के मर्मस्पर्शी अंश का साक्षात्कार कवि कर सकता है। किसी भी प्रबंधकार कवि की भावुकता-क्षमता का पता लगाना आसान है--'प्रबंधकार कवि की भावुकता का सबसे अधिक पता यह देखने से चल सकता है कि वह किसी आख्यान के अधिक मर्मस्पर्शी स्थलों को पहचान सका है या नहीं।' [4]

1- 'कच-देवयानी', पृ0 22
2- 'कच-देवयानी' , पृ0 38
3- 'उषा' , पृ0 9
4- 'जायसी-ग्रंथावली' : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ0 66

गुलाब जी के प्रबंध-काव्यों में मार्मिक प्रसंगों की प्रचुरता है। यथा --

(1) कच-देवयानी खण्डकाव्य के मार्मिक प्रंसग :-

(क) कच-देवयानी-मिलन :

शुक्राचार्य का आश्रम पूर्वी पर्वतमालाओं में, जिस स्थान पर है, वहाँ चारों ओर ज्योर्तिमयी संजीवनी बूटियाँ बिखरी हुई हैं। संजीवनी विद्या पा लेने के कारण कच अत्यन्त प्रसन्नता और सुख की मनःस्थिति में है। कच आनन्दोल्लास में खोया-खोया-सा अपने आपको भी भूल गया है। उसका सारा ध्यान भविष्य की सुखद कल्पनाओं में लगा है। उसी समय बहुत दूर पर एकाएक उसे आती हुई देवयानी दिखायी पड़ती है।[1] दूर क्षितिज पर खड़ी देवयानी कच को चिर-अभिलषित सिद्धि की साकार प्रतिभा लगती है जो क्षितिज-रूपी पनघट पर उसे विदाई देने आयी है। देवयानी माधवीलता के समान है। उसके मुखमंडल पर श्यामल भ्रमर-पंक्ति के समान काली अलकें बिखरी हुई हैं। कच का हृदय देवयानी की मुस्कानों से विस्मित हो जाता है। युवा कच सहृदयता पूर्वक मधुर स्वरों में देवयानी से कहने लगता है --

तुम कौन आह गिरि-सरिता-सी
लघु-लघु उपलों से टकराती
आ रही विजन में खोयी-सी
ज्यों दीपक की उड़ती बाती?[2]

देवयानी बहुत दिनों से कच के प्रेम का सपना देखती रही है। प्रेम का मधुर स्वप्न सदैव उसे छलता रहा है। कच यह नहीं समझ पाता है कि देवयानी उससे प्रेम करती है। कच की नासमझी को देखकर देवयानी प्रेम-व्यथा से भर जाती है --

मैं क्या उत्तर दूँ, जीवन में
जिसने यह आग लगायी है

1- 'त्रिवेणी' (गोस्वामी तुलसीदास), रामचन्द्र शुक्ल, पृ0 76, 26वां संस्करण
2- 'कच-देवयानी', पृ0 14

जब वही अपरिचित-सा पूछे
यह लाली कैसी छायी है ?"[1]

देवयानी कच के सौन्दर्य पर विमुग्ध है। वह स्पष्ट रूप से इसका संकेत कर देती है ---

मैं अपने कोमल सपनों का
संसार सजाती थी तुमसे
नव पारिजात की माला-से
जो उतरे थे कल्पद्रुम से
तुम ऐसे विद्यालीन रहे
पुस्तक के आगे बढ़ न सके
पढ़ लिये शास्त्र-इतिहास सभी
नारी के मन को पढ़ न सके।[2]

कच को सदैव के लिए जाते देखकर देवयानी अपने को रोक नहीं पायी है --

सागर से मिलने भादों की
मदभरी नदी-सी बढ़ आयी
मैं नील जलद-प्राचीरों से
बिजली-सी बाहर कढ़ आयी।[3]

देवयानी की बात सुनकर कच अपने को अपराधी महसूस करता है। उसकी आँखें आँसुओं से भर जाती हैं :--

कच ने अपराधी शीश झुका
पथ-रेखा साँस-सदृश त्यागी
जल-भरे-नलिन-से नयनों में
मधुकर की सुप्त व्यथा जागी।[4]

1-'कच-देवयानी, पृ0 19
2- 'कच-देवयानी' , पृ0 21
3- वही, पृ0 22
4- वही, पृ0 24

कच अपनी भाव-विभोर सजल आँखों से देवयानी को भाग्यरेखा के समान देखता है ---

अस्पष्ट नयन-जल में तिरती
दिख बड़ी भाग्य की रेखा-सी।[1]

कच देवयानी को स्वीकार करने के लिए तैयार है। वह उसे आमंत्रण देता है --

नंदन के दक्षिण ओर वहीं
मेरा नन्हाँ-सा राजभवन
क्षीरोदधि-सा पाकर तुमको
इंदिरे। करेगा मधुर स्तवन।[2]

कच के आश्वासनों से पुलकित देवयानी चाँद को छिपता देखकर धीरे-धीरे लौट जाती है। इन दोनों का मिलन बहुत ही मार्मिक है।

(ख) कच-देवयानी-वार्तालाप

जब कच को यह जानकारी होती है कि देवयानी उसके गुरु की ही संतान है, तो वह हतप्रभ हो जाता है, क्योंकि उसने देवयानी के प्रेम को स्वीकार किया है और उसको प्रणय का आमंत्रण भी दिया है। परंतु अब देवयानी उसके लिए बहन के सदृश है। वह उसके प्रेम को अस्वीकृत करते हुए कहता है --

गुरु-कन्या, भगिनी तुम मेरी
श्रद्धा की प्रतिमा प्रभापूर्ण
अब उसकी याद दिलाओ मत
जो स्नेह-स्वप्न हो चुका चूर्ण।[3]

देवयानी प्रणय-पूर्ण स्वप्नों का संसार सँजोये कच से मिलने आयी है। लेकिन इस समय कच के मुख से प्रतिकूल बातें सुनकर वह चीख उठती है ---

परिणय-क्षण सुनकर नयी वधू
वैधव्य-कथा निज पति से ही

1- 'कच-देवयानी', पृ0 24 2- 'कच-देवयानी' , पृ0 28
3- वही, पृ0 43

ज्यों चीख उठे पा बाँहों में
केवल साँसें छाया-देही।[1]

देवयानी के सारे अरमान धूलि-धूसरित हो जातें हैं। उसका आहत हृदय क्रन्दन करने लगता है --

ओसों से प्यास बुझा तुम तो
जा रहे प्रात के तारे-से
इस धारा-सदृश पुकार तुम्हें
रोती मैं लिपट किनारे से
रोती हूँ, पर इस रोने से
मिलती क्या शान्ति मुझे भी हैं !
उर में जलते जो अंगारे
आँसू से कभी बुझे भी हैं ![2]

देवयानी कच की धर्मभावना (बहन-भाई का सम्बन्ध) को तोड़ने की चेष्टा करती है क्योंकि कच ही उसके प्रेमपूर्ण सपनों का आधार है। लेकिन, कच उस प्रेम को छलना और स्वप्न बताते हुए भूल जाने को कहता है --

जो बीत चुके वे दृश्य सभी
मन के सपने कहलाते हैं।[3]

देवयानी प्रेम की पुतली है। वह हृदय से कच के प्रति समर्पित है। उसने कच को अपना प्रेमी मान लिया है वह कच से प्रार्थना करते हुए कहती है --

मैं हाथ जोड़ती हूँ, मेरे
जीवन की धूल उड़ाओं मत
यह हृदय तुम्हारी थाती है।
ले, देख इसे लौटाओ मत।[4]

1- 'कच-देवयानी', पृ0 44
2- 'कच-देवयानी' , पृ0 45
3- वही, पृ0 48
4- 'कच-देवयानी', पृ0 52

देवयानी कच की निष्ठुरता को भी रेखांकित करती है --

तुम सुख का सिंधु बटोर रहे
कण भर औरों को मिल न सके !
सौरभ-संचय में लीन मधुप !
फूलों से पल भर खिल न सके ![1]

देवयानी ने प्रेम-भावना के कारण ही कच के प्राणों की कई बार रक्षा की है लेकिन कच की प्रतिकूलता से वह आहत हो जाती हैं --

उपकारों का प्रतिकार यही !
आभार यही आभारी का !
तुम खेल रहे अंगार-सदृश !
ले हृदय हाथ में नारी का ![2]

कच देवयानी को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है --

उस पर यह भगिनी का नाता
वासना-क्षुधा से ऊपर जो
आत्मा का परिणय, नर-नारी-
सम्बन्ध श्रेष्ठतम भू पर जो।[3]

देवयानी करुणा, दुःख, रोष इत्यादि से भर उठती है। वह कच को शापित करती

संजीवन-शक्ति विफल होगी
तुमसे निर्मम अधिकारी की।[4]

कच को शापित करने के बाद भी देवयानी का हृदय वियोग में विदग्ध है। अभी भी उसके हृदय में स्नेह की शिखा जल रही है। वह अपने प्रियतम कच को प्राप्त करने के लिए उसे दैत्यों का राज्य दिलाने को भी तत्पर है। वह मूर्च्छित और संज्ञाहीन हो जाती है ---

---

1- 'कच-देवयानी, पृ0 54
2- वही, पृ0 46
3- वही, पृ0 58
4- 'कच-देवयानी' , पृ0 61

तु-लता सिहरती थी रह-रह
र्दछत लिपटी तरु-माला से
ल-जल उठती हो ज्योति बुझी
ःसे अपनी ही ज्वाला से।[1]

इस प्रकार कच-देवयानी-वार्त्तालाप बहुत ही मर्मस्पर्शी है।

(2) उषा महाकाव्य के मार्मिक-प्रसंग :-

(क) उषा का अपने प्रेमी प्रभात से विदा लेना :

उषा को अपने सहपाठी प्रभात से अनुराग है। दोनों की रुचियाँ, राजनीतिक तथा सामाजिक कार्यक्षेत्र एक से रहने का कारण यह अनुराग प्रेम में परिणत हो जाता है। परन्तु परिस्थितियों की प्रतिकूलता के कारण उनका परस्पर विवाह नहीं हो पाता। उषा का विवाह काशी के एक सम्पन्न परिवार में राजीव नामक युवक से हो जाता है। वह अपने प्रेमी प्रभात से साश्रु विदा लेने आती है। उषा इस सम्भावित वियोग से विकम्पित हो उठती है --

पय-सी ग्रीवा मुड़ी अधर पर थी न अरुण स्मिति-रेखा
राहु-ग्रहण के भय से मानों काँप रही विधु-लेखा।[2]

उषा इस सम्बन्ध-विच्छेद से मर्माहत है। वह घोर विषाद और निराशा से युक्त होकर अपने प्रेमी से कहती है ---

लिये धड़कता हृदय कभी मैं फिर न यहाँ आऊँगी
प्राण ! तुम्हारी यह मुखछवि भी देख नहीं पाऊँगी
अब न कभी रख शीश तुम्हारे उर पर मैं गाऊँगी
दीप-शिखा-सी कल प्रभात के साथ चली जाऊँगी।[3]

उषा ने प्रभात को जीवन-संगी बनाने का वचन दिया था। वह इस

1- 'कच-देवयानी', पृ0 72
2- 'उषा' , पृ0 2
3- वही, पृ0 3

आकस्मिक परिवर्तन से आश्चर्य-चकित रह जाता है।

प्रिये ! सत्य ही यह जीवन की अंतिम भेंट हमारी ?[1]

प्रभात की मानसिकता में संयोग के सारे चित्र उपस्थित हो जाते हैं। वह उषा को संयोगकालीन सुखद स्मृतियों की याद दिलाता है --

भूली वे लम्बी दुपहरियाँ ? धवल चाँदनी रातें !
वह मनुहार ? हँसी वह खिल-खिल ? वंक भ्रुओं की घातें ![2]

प्रभात का हृदय मर्माहत हो जाता है। उसके सारे अरमान चूर-चूर हो जाते हैं। वह दैन्यपूर्ण वाणी में उषा से प्रार्थना करने लगता है ---

टूट जायेगा हृदय काँच-सा ठोकर यों न लगाओ
नभ का कुसुम छुला निर्धन को धरती पर न गिराओ।[3]

उषा इस वियोग से दग्ध है, लेकिन उसके समक्ष नारी की विवशताएँ हैं : --

साथी विश्व-विषमता विष-सी, पर किसका बस चलता !
जीवन भर स्मृति लिये तुम्हारी, हृदय रहेगा जलता।[4]

इस संभावित वियोग से रोते-रोते उषा की आँखे सूख गयीं है --

आँसू की कज्जल सरिताएँ रोते-रोते सूखीं
विधु-मुख पर फाल्गुन-घन-अलकें उड़तीं रूखी-रूखी।[5]

पीड़ा का पाथेय लिए मर्माहत उषा बड़े विवश भाव से ससुराल चली जाती है। प्रभात भी अपनी प्रियतमा के वियोग में विकल हो जाता है :--

चंद्रानने ! पहन किरणों-सा अश्रु-हार ग्रीवा में
वन में किधर गई तुम जलता हृदय हाथ से थामे ?
मैं चकोर फिर रहा चतुर्दिक घिरा क्षितिज-सीमा में
यह तड़पन, नैराश्य, व्यथा यह, कैसे सह लूँगा मैं ![6]

1- उषा, पृ0 4
2- वही, पृ0 4
3- 'उषा' , पृ0 4
4- वही, पृ0 5
5- वही, पृ0 7
6- वही, पृ0 10

वियोग में जलते दो प्रेमी हमेशा-हमेशा के लिए एक दूसरे से अलग हो जाते हैं। यह वियोगपूर्ण घड़ी काफी मार्मिक है।

(ख) उषा का पुत्र-शोक

पति-परित्यक्ता उषा का एकमात्र सहारा पुत्र मुकुल ही है। पति से बिछुड़कर नारियाँ अपने पुत्र पर ही केन्द्रित हो जाती हैं। उषा मुकुल के सहारे जी रही है। एक दिन मुकुल बीमार पड़ जाता है। उषा अपने रुग्ण पुत्र की रक्षा के लिए देवी-देवताओं से प्रार्थना करने लगती है, यहाँ तक कि पुत्र की रक्षा के लिए वह प्राणों की बलि देने के लिए भी तैयार है ---

पीड़ायें दे समुद जननी झेल लूँगी सभी मैं
दे दूँ छिन्ना कर स्वकर से, माँग ग्रीवा अभी तो
मेरे आशा-मुकुल शिशु को यातना से छुड़ा दे
माता मेरा वचन इतना, देख, जाने न पाये।[1]

पुत्र की बढ़ती हुई बीमारी को देखकर उषा की व्याकुलता बढ़ जाती है। उसकी सारी प्रार्थना व्यर्थ हो जाती है और उसके पुत्र की मृत्यु हो जाती है। उषा धरती पर पछाड़ खाकर गिर जाती है ---

दौड़ी उषा, शरवत् गिरी भूमि पर हाय खाके।[2]

नव-वय में ही जो नारी पति-परित्यक्ता हो और उसके एक मात्र पुत्र की भी मृत्यु हो जाय तो उस रमणी के शोक का क्या ठिकाना ! पति और पुत्र दोनों से वियुक्त नारी के लिए दुनिया में और रह ही क्या जाता है ! उषा भी मृत्यु की आकांक्षा रखती है --

बैठा जाता हृदय हिम-सा प्राण रोते अभागे
पाषाणों-से निठुर इनको मृत्यु भी क्यों न आती ![3]

उषा का दुःख अत्यन्त ही हृदय-द्रावक है -- पुत्र मरण से अधिक करुण प्रसंग और क्या हो सकता है ! ऐसी दशा में अर्धविक्षिप्त उषा मूर्च्छित होकर धरती पर गिर जाती है --

---

1- 'उषा', पृ0 85 2- वही, पृ0 86
3- वही, पृ0 86

आती हूँ मैं सँग-सँग लगी, क्लेश देना न जी को
मेरे प्यारे ! विलग तुमसे मैं नहीं जी सकूँगी
मूर्च्छा आई, शिर अवनि को छू गया, रक्त फैला
मरणाकांक्षी विकल उर को दो घड़ी नींद आई।[1]

ऐसे शोक के अवसर पर पुत्र-सम्पर्क से लब्ध आनन्द का स्मरण होता है। उषा अपने को धिक्कारती है ---

रोकूँगी हा ! प्रतिपल तुझे मैं नहीं और बेटा !
खाने को भी मचल तुझको, हाय, रोना पड़ेगा !
मेरे जैसी निठुर-हृदया माँ कहीं और होगी !
बेटा मेरे ! नित प्रति तुझे दुःख ही दे सकी जो ![2]

यह है उषा का अपार शोक-व्यंजक विलाप। मैं तो इस शोक को उषा महाकाव्य का सर्वाधिक मार्मिक प्रंसग मानता हूँ।

(ग) राजीव का पत्नी और पुत्र-वियोग :

पत्नी उषा और पुत्र मुकुल को छोड़कर, राजीव विदेश के एक द्वीप में निवास करने लगता है। वहाँ वह किरण नामक युवती के प्रेम में बँध जाता है। यद्यपि वह किरण के साथ सुखी है फिर भी उषा और मुकुल की स्मृतियाँ उसे कातर बना देती हैं ---

साँसों में बजता द्वैत राग
जीवन त्रिशंकु-सा रहा जाग
मैं जड़-चेतन का शून्य भाग
पीकर भी रहता चिर-प्यासा
ऐसी मेरे मन की भाषा ![3]

राजीव के मन का यह द्वैत उषा और मुकुल का प्रेम ही है। इन दोनों की स्मृतियों में राजीव कभी-कभी खो जाता है --

---

1- 'उषा' , पृ0 87 2- वही, पृ0 87
2- 'उषा', पृ0 111

आह ! कितनी दूर इस विस्तृत जलधि के पार
पूर्व-जन्म-विलुप्त-स्मृति-सा वह सरल परिवार !
इंदु के लघु खंड-सा वह वत्स, दीन, अबोध
दे रहा होगा पिता का उसे कौन प्रबोध ?
अश्रु नयनों में भरे क्या जोहती है बाट
वह सरल-हृदय अभी तक खोल हृदय-कपाट ?[1]

राजीव सेनाध्यक्ष के पद पर पहुँचकर शक्ति, सफलता और आत्मिक विकास का अनुभव करता है, परन्तु बीच-बीच में उसे उषा की स्मृति विकल कर देती है --

यह कौन विकल करती मन को
उर सिसक रहा आलिंगन को
सावन के बरसाती घन को
वह देती अश्रु उधार कौन !
इस पार कौन ? उस पार कौन ?[2]

उषा के बिना, सब कुछ पाकर भी राजीव अपने को निर्धन अनुभव करता है -- 'मन सब कुछ पाकर निर्धन है'। उषा और प्रभात की मृत्यु के बाद राजीव और विकल हो उठता है ---

राजीव विकल सहमा-सा
नभ की दिशि देख रहा था
यह कौन ? कौन होंगे वे ?
यात्री वह कौन ? कहाँ था ?[3]

राजीव अपने को धिक्कारने लगता है --

पल भी मन में न विचारा
जायेगी कहाँ अभागी
अंकस्थ अल्प-वय शिशु ले
पत्नी वह पति से त्यागी।[4]

1- 'उषा', पृ0 69 2- वही, पृ0 99
3- 'उषा' , पृ0 131 4-वही, पृ0 133

अपनी पत्नी उषा के वियोग में राजीव निष्प्राण जैसा हो जाता है --

युग से विस्मृत वह आनन
फिर सम्मुख दीख पड़ा था
राजीव विकल सहमा-सा
जैसे निष्प्राण खड़ा था।[1]

इस प्रकार पत्नी और पुत्र से वियुक्त राजीव की वियोग-व्यथा काफी मर्मस्पर्शी है।

(3) **अहल्या** के मार्मिक प्रसंग :

(क) पूर्ण-यौवना, रूपवती और उन्मादिनी अहल्या का अतृप्त प्रणय-सुख :

गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या में प्रेम का ज्वार उत्कर्ष पर है। उसकी अप्रतिम छवि को पाकर मुनि असीम प्यास को तृप्त करना चाहता हैं। संयम और नियमों में पोषित मुनि का मन अहल्या के प्रणय-प्रवाह को उस ऊँचाई तक नहीं पहुँचा पाता है जो उन्मादिनी और यौवन की अनिवार्य आकांक्षा से युक्त अहल्या चाहती है। वह सजधजकर मिलन की कामना से युक्त होकर मुनि के लौटने की प्रतीक्षा करती है, किन्तु मुनि की तृप्तिगत निष्फलताओं से अहल्या के समस्त काम-भाव निष्फल रह जाते हैं। कामातुर अहल्या की विफल और अतृप्त काम-भावनाओं का कवि ने अत्यन्त ही मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है ---

लज्जित सी लिए कुटीर-द्वार पर सुमन-हार
अंजित-दृग, रंजित-कच, सज्जित-षोड़श-श्रृँगार
संध्या को फिरते गृह को मुनि निज को निहार
प्रेयसी-नयन में, पछताते-से छिन्न-तार
हँसते थे छले गये भी।[2]

इसे मुनिवर भी महसूस करते हैं

1-'उषा' , पृ0 134
2-'अहल्या', पृ0 14

निष्फलताओं में खीझ भरी-सी अकुलाती
वह सदा अहल्या शल्या बन चुभ-सी जाती
कर खोल न पाते जैसे पर की हो थाती
वाह्यांतर में देहरी-दीप की-सी बाती
अविकार देह जलती थी।[1]

(ख) राम का अयोध्या-त्याग :

यह रामकथा का अद्वितीय प्रसंग है। इसका सौंदर्य अपूर्व है। यह **अहल्या** के महत्त्वपूर्ण स्थलों में से एक है। मुनि कौशिक यज्ञ-रक्षार्थ एवं आश्रम की रक्षा के लिए राम-लक्ष्मण की माँग करते हैं ---

बोले मुनि, राजन ! धैर्य धरो सब सुनकर भी
असुरों से रण की युक्ति रचेगी और कभी
तुम रहो अवध में, रहे तुम्हारा सैन्य सभी
बस मुझको दे दो राम-लखन दो कुँवर अभी
निज आश्रम की रक्षा को।[2]

मुनि की बात सुनकर सारी सभा स्तब्ध हो जाती है और दशरथ तो पुत्र-वियोग की आशंका से ही भयभीत हो उठते हैं --

सब स्तब्ध सभा, नृप सूख गये ज्यों दिखा व्याल
सुत-विरह-शोक का सम्मुख फण काढ़े कराल।[3]

राजा दशरथ के पुत्र वृद्धावस्था के हैं। उनके प्रति ममता अधिक तीव्र है। वे उन पुत्रों के बदले में सम्पूर्ण वैभव का त्याग करने के लिए भी तैयार हैं ---

ये प्राण प्राण के, जी के जी, दृग के तारे
मैं इन्हें छोड़ धन, धाम, धरा-वैभव सारे
जो माँगें, दूँ पल भर में।[4]

1- 'अहल्या', पृ0 14
2- 'अहल्या' , पृ0 36
3- वही, पृ0 37
4- वही, पृ0 37

दशरथ का राम के अभाव में जीवित रहना कठिन है। कहाँ 'वनचर-रिपु-संकुल' आश्रम और कहाँ ये कोमल राजकुमार ! दशरथ पुत्र-वियोग के भय से व्याकुल हो उठते हैं। उनके प्राणों के आधार राम ही हैं ---

सब रहा राम से, शून्य अन्यथा धरती है
मैं उसे देख जीता हूँ।[1]

राजा दशरथ सब कुछ छोड़ सकते हैं लेकिन राम को नहीं, क्योंकि राम उनकी नस-नस में व्याप्त हैं। उनकी आँखें आँसुओं से भर जाती हैं :--

पुर, परिजन, प्रिय, परिवार, बंधु, धन, धाम सही
मैं दे सकता हूँ सब कुछ लेकिन राम नहीं
मुनि गूँज रहा नस-नस में मेरे नाम वही
नृप कह न सके आगे, पलकें अविराम बहीं
परिषद डूबी, उतरायी।[2]

गुरु वशिष्ट और कौशिक के बार-बार कहने पर दशरथ विवश भाव से राम और लक्ष्मण को मुनि कौशिक के चरणों में सौंप देते हैं। उस वियोगपूर्ण स्थिति में राजा की वाणी रुद्ध हो जाती है --

नृप कह न सके कुछ, रुद्ध-कंठ, बस इंगित से
युग वत्स बुलाकर पास स्नेह-कातर चित से
मुनि के चरणों में सौंप दिये संकल्पित-से
ले विदा साश्रु माताओं से आये स्मित-से
द्रुत राम-लखन जाने को।[3]

राम को जाते देखकर सारी अयोध्या व्याकुल हो उठती है--

छा गई अवध में पीड़ा घर-घर बिछड़न की
सब उमड़ पड़े झाँकी को रघुकुल-जीवन की
ज्यों भरी नदी बरसाती।[4]

1- 'अहल्या' , पृ0 38
2- वही, पृ0 38
3- वही, पृ0 40
4- 'अहल्या' , पृ0 40

राम के वियोग की आशंका से सभी व्यथित हैं। अयोध्यावासियों का वियोग कौशिक को भी व्यथित कर देता है। मनुष्य क्या पशु (रथ का घोड़ा) पक्षी भी व्याकुल हो जातें हैं --

पुरवासी पथ देते न तनिक समझाये भी
रथ के घोड़े बढ़ते ही नहीं बढ़ाये भी
कौशिक के ढहने लगे ज्ञान के पाये भी
सारथि ने पोंछे नयन अश्रु भर आये भी,
बरबस रथ हँकर, चलाया।[1]

वस्तुतः यहाँ सम्पूर्ण अयोध्यावासियों की घोर व्यथा ही व्यंजित है। यह **अहल्या** खण्डकाव्य का सर्वाधिक भावुकता-पूर्ण प्रसंग है।

(ग) अहल्या-उद्धार प्रसंग :

यह राम कथा का महत्त्वपूर्ण प्रसंग है। वाल्मीकि और अध्यात्म रामायणकार ने अपने कर-स्पर्श से इसे जीवन्त बनाया -- और तबसे इसकी महत्ता अक्षुण्ण है। यह अहल्या के महत्त्वपूर्ण स्थलों में से एक है। गौतम के शाप से शापित और परित्यक्ता अहल्या पाषाणी-सदृश दुखपूर्ण जीवन व्यतीत कर रही है। मुनियों के आश्रम की रक्षा हेतु आये हुए राम और लक्ष्मण की सूचना अहल्या को मिलती है। राम और लक्ष्मण की बात सुनकर अहल्या के भीतर एक नवीन चेतना का संचार होता है। अहल्या भगवान राम से मिलने के लिए श्रृंगार करने लगती है। उस उपेक्षिता के भीतर तरुणाई का ज्वार आ जाता है --

सब अंग कदंब-कुसुम-से फूले सिहर-सिहर
प्राणों में गूँज उठा ज्यों मधुऋतु का मर्मर
मृग-नयनी मृगया को बैठी मृग-सी कातर
अंतर का सारा कोष चढ़ाये पलकों पर
रति की प्रतिकृति-सी हो ली।[2]

प्रतीक्षा-रत अहल्या राम-लक्ष्मण से मिलने के लिए कौशिक-मखभूमि की

1- वही, पृ0 41 2- 'अहल्या' , पृ0 47

ओर चल देती है। कोटि काम शोभाभिराम राम के युगल चरण उसे भक्ति-मुक्ति से दिखायी पड़ते हैं। भगवान राम को देखकर अहल्या की आँखे शीतल हो जाती हैं और वह प्रभु के चरणो पर गिर पड़ती है ---

हत-बुद्धि अहल्या, साश्रु गिरी प्रभु-पंथ रोक
ढँकती कलंकमय मुख को।[1]

अहल्या आहत हरिणी-सी राम के चरणों पर छटपटाने लगती है। मुनि राम से कहते हैं --

आहत हरिणी-सी उर में विष की लिये चोट
बस तनिक तुम्हारी चरण-रेणु-हित रही लोट। [2]

मंगल-गौरव-छवि-धाम राम के स्पर्श मात्र से ही चिर-उपेक्षिता एवं लांछिता अहल्या के पाप-ताप समाप्त हो जाते हैं। वह पवित्र हो जाती है --

युग-युग का पाप-ताप पल में जल हुआ क्षार
आ गई तीर पर तरणी जैसे निराधार।[3]

चिर-कलंकिनी अहल्या प्रभु राम की कृपा से विह्वल हो उठती है, उसकी आँखें बरसने लगती हैं और कंठ रुँध जाता है। संसार के छल-बल से हारी नारी को उसका पति मिल जाय, इससे बढ़कर और बड़ी बात क्या हो सकती है -- मर्यादा पुरुषोत्तम राम का कथन दृष्टव्य है :--

वह क्षणिक हृदय की दुर्बलता, वह पाप-भार
कल का सारा जीवन जैसे बीती बयार
वह देख, आ रहे गौतम, पहला लिये प्यार
अब से नूतन जीवन, नव संसृति में सँवार
जो बीत गया सपना है।'[4]

इस प्रकार प्रभु राम की कृपा से चिर-लांछित अहल्या गौरव की भावना से भर उठती है। यही तो राम का पतिपावन तथा अधम-उद्धारक का रूप है --

---

1- अहल्या, पृ0 48
2- वही, पृ0 49
3- 'अहल्या' , पृ0 49
4- वही., पृ0 51

और इस प्रसंग को उपस्थित करनेवाला कवि भी स्रष्टा कलाकारों में से एक है। अहल्या के इस स्थल का महत्त्व असाधारण है जिसके पाठ के पश्चात् चिर-अभिशापित अहल्या के प्रति पाठकों के मन की सारी दुर्भावनाएँ समाप्त हो जाती हैं।

(4) आलोक-वृत्त के मार्मिक प्रसंग :-

(क) महात्मा गांधी का हृदय-परिवर्तन :

किशोरावस्था में ही गांधी जी देश को स्वाधीन करने की बात सोचने लगते हैं। उन्हें यह देखकर विस्मय होता है कि मांसाहारी राक्षस (अंग्रेज) तो जीवन में तेज और विजय प्राप्त कर रहे हैं, किन्तु जो मनुष्यता के ऊँचे आदर्शों का अमृतपान करनेवाले (भारतीय) हैं, क्षीण होते जा रहे हैं। महात्मा गांधी ने सोचा कि क्या यह उचित नहीं होगा कि हम भी अंग्रेजों की तरह मांस-भक्षी होकर शरीर और मन से शक्तिशाली बनें, क्योंकि शक्ति के बिना स्वतंत्रता नहीं मिल सकती है ---

क्या न उचित, अमिष-भोजी हम हों सशक्त तन-मन से
स्वतंत्रता के बिना धर्म की आशा क्या जीवन से ![1]

माहत्मा गांधी अपने मन में तर्क करने लगते हैं कि धर्म पर चलने के लिए पहले स्वतंत्रता मिलनी चाहिए और स्वतंत्रता के लिए मानसिक और शारीरिक शक्ति की आवश्यकता है जो मांसाहार से ही आ सकती है। इस प्रकार देश को स्वतंत्र करने की उत्कट लालसा गांधी को विचलित कर देती है। वे उचित-अनुचित का विवेक भी खो देते हैं। वे माता पिता और बड़ों से छिपाकर, घर से पैसा चुराकर मांसाहार प्रारम्भ कर देते हैं --

स्वतंत्रता की तीव्र बुभुक्षा बहा ले गयी मन को
अनुचित-उचित विचार न सूझा मोहभरे मोहन को
करने लगे मांस-भक्षण गुरुजन की आँख बचाकर
भुला ग्लानि मन की, घर से पैसे भी कभी चुराकर।[2]

1- 'आलोक-वृत्त' , पृ0 6
2- वही, पृ0 7

यद्यपि गांधी जी ने देश को स्वाधीन करने के पवित्र उद्देश्य से मांसाहार प्रारम्भ किया है, लेकिन इसके लिए उन्हें झूठ और चोरी का सहारा लेना पड़ता है। यही बात उनके सरल मनपर भार बनने लगती है। एक दिन वे पश्चाताप से भरकर पिता जी को पत्र लिखते हैं और उनके चरणों में अपराधी की भांति बैठ जाते हैं --

और एक दिन निशि के सूनेपन में रुग्ण पिता के
चरणों पर रख पत्र एक, सुत बैठा शीश झुकाके।[1]

पश्चाताप की आँच में तपकर गांधी की आत्मा शुद्ध और निर्मल हो जाती है। पिता और पुत्र की यह मिलन की स्थिति अद्‌भुत है ---

यज्ञ-कुंड वह जिसमें सारे कल्मष दग्ध हुए थे
पाव न सुत ने, रुग्ण पिता के मन के तार छुए थे
पिता-पुत्र की जो उमड़ी सम्मिलित अश्रु की धारा
मन का छल-पाखंड-पाप उसने धो डाला सारा।[2]

पिता अपने पुत्र की असाधारण चारित्रिक निर्मलता से गद्‌गद हो उठते हैं। इस प्रकार गांधी का हृदय-परिवर्तन गांधी-कथा की महत्त्वपूर्ण एवं मार्मिक घटना है।

(ख) निलहे अंग्रेज दम्पति का हृदय-परिवर्तन :

निलहे अंग्रेज महात्मा गांधी की क्रांति और अहिंसात्मक प्रगति से व्याकुल और बैचेन हो जाते हैं। एक अंग्रेज युवक महात्मा गांधी की हत्या के लिए योजना बनाता है --

तब एक युवक ने उठकर कुछ हिम्मत बाँधी
बोला—बिहार में रह न सकेगा अब गांधी
यह दाग नील का वह न कभी धो पायेगा
मैं प्रण करता हूँ, शत्रु न बचकर जायेगा।[3]

1- 'आलोक-वृत्त' , पृ0 7
2- वही, पृ0 7
3- वही, पृ0 48

इस प्रकार हिंसा का सकंल्प लेकर वह अंग्रेज युवक महात्मा गांधी के सहयोगियों में मिल जाता है। वह अंग्रेज युवक गांधी की नीतियों का समर्थन करने लगता है। सरल-हृदय गांधी उस पर विश्वास से भर जाते हैं। वह गांधी की हत्या के लिए अपने घर पर उन्हें भोजन का निमंत्रण देता है। गांधी उसे स्वीकार कर लेते हैं। गांधी जी रात्रि के अंधकार में अकेले, निर्भय चले जा रहे हैं। इधर अपने कमरे में विष से भरा थाल सजाकर अंग्रेज पति-पत्नी रास्ते पर कान लगाये गांधी जी की प्रतीक्षा कर रहे हैं। जब गांधी जी ने उनके दरवाजे पर थपकी दी तब उन्हें ऐसा लगा कि भीतर की मानवता की पुकार दस्तक देने लगी है ----

थपकी कपाट पर सुनी की अंतस की पुकार
टकरायी थी कानों से आकर बार-बार।[1]

अंग्रेज युवक किसी अनजान आशंका से भर कर बैठ जाता है, लेकिन उसकी पत्नी हिम्मत करके दरवाजा खोलती है। इसके बाद गांधी की अद्‌भुत मूर्त्ति देखकर अंग्रेज युवती के मुख से चीख निकल पड़ती है ---

देखा जो अद्‌भुत दृश्य सामने, पड़ी चीख
थे स्वयं खड़े ईसा देने के लिए सीख
वह भाव नयन का स्नेहपूर्ण वह सहज हास
वह ज्योति अलौकिक, दिव्य चेतना का प्रकाश।[2]

उस दिव्य चेतना के प्रकाश से आप्लावित होकर वह युवती गांधी के चरणों पर गिर पड़ती है ---

देखा कि साश्रु वह अतिथि-पदों में पड़ी हुई
सिसकियाँ विकल भरती थी भू में गड़ी हुई[3]

अंग्रेज युवक का मन भी पश्चाताप और ग्लानि से भर जाता है। वह सोचता है कि एक और वह अपने छोटे-से स्वार्थ के लिए जहर जुटा रहा है, दूसरी और यह महापुरुष औरों के स्वार्थ के लिए अपना जीवन अर्पित कर रहा है।

1- 'आलोक-वृत्त' , पृ0 49
2- वही, पृ0 50
3. वही, पृ0 50

यह अन्धकार और प्रकाश का द्वन्द्व है, जिसमें प्रकाश की विजय होती है। गांधी जी के सात्विक प्रेम-पूर्ण एवं दिव्य व्यक्तित्व के प्रभाव से उस अंग्रेज दम्पति की शत्रु-भावना नष्ट हो जाती है ---

बह गया विरोधी भाव, काल्पनिक श्याम-स्वेत
जैसे लहरों में ढहता सिकता का निकेत।[1]

इस प्रकार यह घटना काफी मार्मिक एवं भावपूर्ण है।

(ग) महात्मा गांधी का पत्नी-शोक :

सन् 1942 ई0 में महात्मा गांधी 'अंग्रेजो ! भारत छोड़ो' का नारा बुलन्द करते हैं। आन्दोलन आरम्भ करने के पहले ही उन्हें गिरफ्तार करके जेल में डाल दिया जाता है। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती कस्तूरबा भी उनके साथ जेल जाती है। एक वर्ष के बाद बम्बई के कारागार में ही कस्तूरबा की मृत्यु हो जाती है। वहीं उसकी समाधि भी बनायी जाती है।

कारागार में, रात्रि के समय जब सारा देश सो रहा है, बापू जाग रहे हैं। कस्तूरबा की समाधि उनके मन को आन्दोलित कर देती है ---

थककर सोयी थी भारत-भू
कारा में जगते थे बापू
बा की समाधि दिख जाती थी
मन में हलचल-सी छाती थी।[2]

गांधी जी को 'बा' की सेवाएँ याद आने लगती हैं --

मेरी सेवा में ही लय थी
वह मुझसे अधिक राममय थी
दे मुझे महात्मा-पद भास्वर
वह बनी नींव की ज्यों पत्थर।[3]

1- 'आलोक-वृत्त', पृ0 50
2- वही, पृ0 73
3. 'आलोक-वृत्त', पृ0 73

इस प्रकार के भावों से भर कर महात्मा गांधी का हृदय क्षुब्ध हो उठता है। उन्हें ऐसा आभास होता है कि कस्तूरबा उनके सामने खड़ी है और उनकी देखभाल के विषय में चिन्ता व्यक्त कर रही है ---

भर आये बापू के लोचन
हो गये अचल भी चंचल-मन
सोया दुख जाग गया जैसे
थी खड़ी कह रही 'बा' जैसे --
कैसे बीतेगा कठिन काल !
अब कौन करेगा देखभाल !
थे आप भले ही मुक्त, नाथ !
सेवा को तो मैं रही साथ ![1]

विवाह के बाद का जीवन, नवोढ़ा पत्नी की शोखियाँ, चंचलता, उसका मनोहर आकर्षण, और विगत जीवन की छोटी-छोटी अनबन की घटनाएँ बापू को याद आने लगी हैं ---

आये बापू को याद तभी
वे एक-एककर दृश्य सभी
लघुवयस, शोखियोंभरी, चपल
जब प्रिया प्राण करती चंचल
वे भूलें जीवन की अपनी
जब थी उससे तकरार ठनी
कर साठ वर्ष का नेह चूर
वह निठुर निमिष में गई दूर।[2]

इस प्रकार दुखद स्मृतियों के कारण गांधी जी का मन व्याकुल हो उठता है। वस्तुतः, बापू का यह पत्नी-शोक **आलोक-वृत्त** खण्डकाव्य का एक मर्मस्पर्शी स्थल है।

(4) कवि गुलाब के प्रबंध काव्यों की पात्र-योजना

(क) प्रस्तुतीकरण की प्रस्तावना

कवि अपनी अनुभूति के साक्षात्कार को जिस रसात्मक अभिव्यक्ति के द्वारा पाठकों तक पहुँचाता है, उसे कविता कहते हैं। इस रस-दशा के स्थायी

---

1. 'आलोक-वृत्त', पृ0 74 2. 'आलोक-वृत्त', पृ0 74-75

प्रभाव के लिए माध्यम की आवश्यकता होती है। मुक्तक-काव्य अपनी खण्डित सम्पूर्णता का आनन्द देता है। जीवन की सम्पूर्ण प्रस्तावना किसी प्रबंध-काव्य (मुख्यतः महाकाव्य) के द्वारा ही प्रस्तुत की जाती है। 'कवि--वाणी के प्रसाद से इस संसार के सुख-दुख, आनन्द-क्लेश आदि का शुद्ध स्वाद हम मुक्त रूप में अनुभव करते हैं। इस प्रकार के अनुभव के अभ्यास से हृदय का बंधन खुलता है और मनुष्यता की उच्च भूमि की प्राप्ति होती है।'[1] क्योंकि, 'कविता का अंतिम लक्ष्य जगत् के मार्मिक पक्षों का प्रत्यक्षीकरण करके उनके साथ मनुष्य-हृदय का सामंजस्य-स्थापन है। इतने गंभीर उद्देश्य के स्थान पर केवल मनोरंजन का हलका उद्देश्य सामने रखकर जो कविता के पठन-पाठन का विचार करते हैं वे रास्ते ही में रह जानेवाले पथिक के समान हैं।'[2] वस्तुतः मनुष्य हृदय के सामंजस्य स्थापन को पारिभाषिक शब्दावली में 'साधारणीकरण' कहते हैं। इसके मुक्तानन्द को रचनाकार अपने पात्रों द्वारा पाठकों को दे पाता है। अपने प्रबंध के प्रधान पात्र (पुरुष-पात्र अथवा नारी-पात्र) को अपनी सहानुभूति देकर उसके द्वारा प्रबंधकार अपने प्रतिपाद्य का भरपूर असर पाठकों पर डालता है। इसीलिए महाकाव्य के नायक के लिए प्राचीन आचार्यो ने सद्वंश में उत्पन्न, उच्च जाति और गुणों से सम्पन्न व्यक्तित्व की अनिवार्यता बतलायी है। आचार्य विश्वनाथ ने तो इसे देवता अथवा सद्वंश क्षत्रिय तक ही परिसीमित रखा तथा उसे धीरोदात्त गुणों से युक्त माना है। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्रबंध-काव्य की पात्र-योजना बहुत सरल नहीं है। प्रबंधकार विविध जीवन-मूल्यों की अनुकूलता और प्रतिकूलता को अंकित करने के लिए अनेक पात्रों का सहारा लेता है -- पौराणिक, ऐतिहासिक, अथवा काल्पनिक आधिकारिक कथा से सम्बन्धित पात्र को नायक कहते हैं। अगर कथा में प्रधानता किसी नारी-पात्र की होती है तो उसे नायिका कहा जाता है। मुख्य कथा के अतिरिक्त प्रासंगिक अथवा अवान्तर कथाओं को विकसित करनेवाले गौण पात्र कहलाते हैं। नायक या नायिका के बाद विशेष महत्त्वपूर्ण पात्र को उपनायक या उपनायिका कहा जाता है। प्रधान पात्र के फलागम प्रयास को विफल करने की चेष्टा करनेवाले पात्र को खलनायक अथवा प्रतिनायक की संज्ञा दी जाती है। महाकाव्य के लिए प्रतिनायक पर नायक की विजय अनिवार्य बतलायी गई है। इस तरह प्रबंध-काव्यों में चरित्र-भूमि की व्यापकता मिलती है। जीवन की विभिन्न

1- 'रस-मीमांसा' आचार्य रामचन्द्र शुक्ल , पृ0 24 द्वितीय संस्करण
2- 'रस-मीमांसा' आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ0 26, द्वितीय संस्करण

स्थितियाँ, आकांक्षाएँ, कल्पनायुक्त आदर्श, मनोभूमि और अनुकूल संगतियों की नानाविध अभिव्यंजना के कारण पात्रों के प्रस्तुतीकरण या संयोजन में विविध रूप-विधाओं का प्रयोग मिलता है। कोई प्रबंधकार पौराणिक पात्रों (राम, कृष्ण आदि) को लेकर जीवन की गति, दिशा और उपलब्धि की प्रेरक पृष्ठभूमि तैयार करता है, कोई अवतारी पात्रों के देवत्व की मानवीय लीला दिखाकर उनके मानवत्व की विशिष्टता प्रदर्शित करता है जिससे इतिहास वर्त्तमान का प्रेरक बन जाता है और कोई काल्पनिक पात्रों का सृजन ऐसे कलात्मक सत्य के आधार पर करता है कि काल्पनिक पात्र के साथ तादान्म्य यर्थाथवादी रूप धारण कर लेता है। ऐसी स्थिति में सिर्फ पात्र का नाम ही काल्पनिक रह जाता है, उसका अस्तित्व प्रतिष्ठित हो जाता है। वस्तुतः, सच्चरित्र महान पात्रों की सर्जना में ही प्रबंधकार की सफलता अन्तर्निहित होती है। हाँ, पात्र-योजना में प्रबंधकार किसी सीमा में नहीं बँधता है। वह अवतारी पात्रों को कई रूपों में प्रस्तुत करता है। उसे अवतार का शील-निर्माण करना अधिक उपयुक्त लगता है। अवतार के शील-निर्माण की तीन कोटियाँ आचार्य जगदीश पाण्डेय ने बतलायी हैं ---

(क) मार्जारावतरण -- इसमें अवतरण को ज्यों का त्यों रख दिया जाता है। यह विकार-मुक्त अवतरण है। इसकी सत्ता अर्थ-सांकेतिक है।

(ख) घटावतरण -- इसमें अलौकिक की अलौकिकता लुप्त हो जाती है और इतनी घोर तामसिकता आ जाती है कि सात्विक ज्योति का नाम ही नहीं रह जाता।

(ग) मेघावतरण -- बादल उतरते ही जल बन जाते हैं, जगत की सीमाओं के अनुरूप अपनी आकृति बनाते हैं, फिर भी उनका तात्त्विक सातल्य बना रहता है।' [1]

परम्परागत ऐतिहासिक चरित्रों में प्रबंधकार विशेष रूप से परिवर्तन नहीं करता है। लेकिन, उनको ज्यों-का-त्यों भी नहीं रखता है। ऐसा करने में काव्य के सौन्दर्य और मार्मिकता दोनों को क्षति पहुँचती है। इसलिए प्रबंधकार ऐतिहासिक चरित्रों का पुर्नस्पर्श करता है। इससे इतिहास और साहित्य के तथ्य और सत्य की रक्षा हो जाती है। काल्पनिक पात्रों की संरचना में प्रबंधकार को लोक-विश्रुत पात्रों के व्यक्तित्व के गौरव की रक्षा जैसी कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता है। लेकिन, एक अनिवार्य संतुलन आवश्यक होता है। कल्पना का

1- 'शील-निरुपण : सिद्धांत और विनियोग' : आचार्य जगदीश पाण्डेय, पृ0 22-23

सत्य-सी संप्रेषणीयता दे देना किसी प्रकर्ष प्रतिभा का ही चमत्कार होता है।

कवि गुलाब के प्रबंध-काव्यों की पात्र-योजना की कसौटी भी यही है। इनके प्रबंधो में चरित्र-योजना की विविधता है। इसका कारण यह है कि इन्होंने पौराणिक, ऐतिहासिक और काल्पनिक पात्रों को लेकर प्रबंधो की रचना की है। कवि गुलाब ने पौराणिक पात्र-योजना में 'मेघावतरण' का शील-निर्माण ही प्रायः स्वीकार किया है। **कच-देवयानी** के कच और देवयानी तथा **अहल्या** की अहल्या और गौतम के शीलनिरूपण में युग-बोध की गहरी छाप मिलती है। इसी तरह **आलोक-वृत्त** के गांधी मात्र ऐतिहासिक कथा की पुनरावृत्ति मात्र नहीं करते, वे अपने रचयिता की युग-चेतना से भी मंडित हैं। काल्पनिक पात्रों में **उषा** महाकाव्य के उषा, प्रभात, राजीव आदि मुख्य हैं। कवि गुलाब के प्रबंधकाव्यों में गौण पुरुष-पात्रों और नारी-पात्रों की भी योजना है। वे सभी संचारी-पात्रों की तरह हैं। 'लघु पात्र-पात्रियों का विशेष महत्त्व प्रबंध काव्य में होता है। घटनाचक्र को आगे बढ़ाना, भिन्न मनोवृत्तियों और रूपों (टाइप) का प्रतिनिधित्व करना, नायक-नायिका के गुण-विकास की पृष्ठभूमि तैयार करना तथा कवि के दृष्टि-विस्तार में सहायक होना आदि कार्य लघु पात्र-पात्रियों के द्वारा ही सम्पादित होते हैं।'[1]

(ख) प्रधान पुरुष-पात्र

1-कच

कच, **कच-देवयानी** खण्डकाव्य का नायक है। इस पौराणिक चरित्र का कवि गुलाब परिवर्तन तो नहीं करते फिर भी पुनर्स्पश अवश्य करते हैं। कवि ने कच को एक कर्त्तव्यनिष्ठ एवं धर्मपरायण युवक के रूप में चित्रित किया है।

बृहस्पति-पुत्र कच शुक्राचार्य के यहाँ संजीवनी-विद्या सीखने आया है। वहाँ शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी उसपर मोहित हो जाती है। जब कच अध्ययन समाप्त करके गुरु-आश्रम से विदा लेना चाहता है, तब देवयानी उससे मिलती है।

कच सौदर्य के मर्यादित और गंभीर रूप का प्रेमी है। वह देवयानी की चंचलता को देखकर उसकी तुलना तितली से करता है ---

---

1- 'आधुनिक हिन्दी काव्यों का शिल्प-विधान'। डॉ0 श्यामनन्दन किशोर, पृ0 277

पर सुन्दरता की शोभा क्या
तितली के पंख लगा उड़ ले !
यौवन के भीने कुंजों पर,
फूलों के अन्तर से जुड़ ले ![1]

देवयानी अपने हृदय में सँजोये प्रेम-भाव को प्रकट करती है। वह अपनी प्रेम-वेदना एवं विकलता से कच को परिचित कराती है। कच भी देवयानी के प्रति आकृष्ट हो जाता है। उसे देवयानी उसकी 'भाग्य-रेखा-सी' दिखायी पड़ती है। लेकिन, ज्यों ही उसे यह मालूम होता है कि देवयानी उसके गुरु की कन्या है, वह हतप्रभ रह जाता है। कच ने देवयानी के पिता से संजीवनी-विद्या प्राप्त की है, अतः, देवयानी और कच का सम्बन्ध भाई-बहन जैसा पवित्र है। इस सम्बन्ध की पवित्रता की पुष्टि करते हुए कच कहता है --

गुरु-कन्या भगिनी तुम मेरी
श्रद्धा की प्रतिमा प्रभापूर्ण
अब उसकी याद दिलाओ मत
जो स्नेह-स्वप्न हो चुका चूर्ण।[2]

कच निरन्तर भ्रातृ-भगिनी के पवित्र प्रेम के निर्वाह का यत्न करता है, जबकि कामाभिभूत देवयानी उसके पवित्र प्रेम को कलुषित करने का प्रयास करती है। कच कर्त्तव्य-निष्ठता में विश्वास करता है। वह प्रेम से भी कर्त्तव्य को श्रेष्ठतर मानता है --

यदि प्रेम सत्य भी होता तो
कर्त्तव्य प्रेम से ऊपर है
नंदन-वन का आशा-प्रदीप
कैसे जल सकता भू पर है ?[3]

कच प्रेम और सौन्दर्य का विरोधी नहीं है। उसकी राह की बाधा भाई-बहन का पवित्र धर्म ही है। वह अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुए कहता है ---

सौदंर्य-कला की यह सीमा
मैं धन्य, स्पर्श यदि कर पाता

---

1. कच-देवयानी, पृ0 18.
2. कच-देवयानी, पृ0 43
3- कच-देवयानी, पृ0 48

ज्वाला-नद-सा पथ रोक रहा
पर भगिनी का पावन नाता।[1]

देवयानी के प्रेम-पूर्ण करुण निवेदन का कच पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। वह कच को क्रोधावेश में शाप दे देती है ---

संजीवन-शक्ति विफल होगी
तुमसे निर्मम अधिकारी की।[2]

कच के सारे अरमान चूर-चूर हो जाते हैं, उसकी सारी साधना व्यर्थ हो जाती है। वह अपनी असफलताओं से निराश हो जाता है, पश्चाताप और विषाद से भर जाता है ---

मंदाकिनि-तट पर देवों की
हारों का उत्तरदायी मैं
छाया-सा छिपता डोलूँगा
नंदनवन की अमराई में
सर्वत्र उपेक्षित यह जीवन
होगा काँटो की सेज कठिन
तारे गिन-गिन सूनी रातें
निष्क्रिय दुख में बीतेंगे दिन।[3]

निराश कच, देवयानी की इस प्रतिहिंसा-भावना से कर्त्तव्य-पथ से भ्रष्ट नहीं होता है। वह कर्त्तव्य-पथ पर अडिग है। वह प्रेम में प्रतिहिंसा पर विश्वास नहीं करता। उसकी दृष्टि में प्रेम प्राणों का पावन सम्बन्ध है ---

प्रतिहिंसा बनता प्रेम कभी
अपने को सदा मिटाता जो
विश्वेश्वर का चिति-अंश अमर
प्राणों का पावन नाता जो।[4]

1- कच-देवयानी, पृ0 48
2. वही, पृ0 52
3- वही, पृ0 61
4. वही, पृ0 63

इस प्रकार कच इन असफलताओं के बावजूद देवयानी के प्रेम को ठुकरा देता है। सच है, कच के चरित्र में पुरुष के दिव्य गुणों का विकास है।

2. प्रभात

'प्रभात' उषा महाकाव्य का प्रधान पुरुष-पात्र है। आलोच्य काव्य में कवि ने प्रभात को एक भावुक प्रेमी के रूप में चित्रित किया है। वह प्रेम का पुजारी है। प्रभात अपनी सहपाठिनी उषा से प्रेम करता है। उषा ने उसे जीवन-संगी बनाने का वादा भी किया है, लेकिन उसका विवाह राजीव नामक युवक से हो जाता है।

प्रभात का मन वेदना से भर जाता है। वह विदा लेने आई हुई उषा के समक्ष विलखने लगता है ---

टूट जायगा हृदय काँच-सा ठोकर यों न लगाओ
नभ का कुसुम छुला निर्धन को धरती पर न गिराओ।[1]

उषा, प्रभात से विदा लेकर पति-गृह चली जाती है। प्रभात अपनी विरह-वेदना से व्यथित हो उठता है। वह दुःख के सागर में डूब जाता है। उसके 'पामर प्राण' तन भी नहीं छोड़ते हैं ---

जग में होती पूर्ति सभी की, एक हृदय कब जुड़ता !
अब भी पामर प्राण नहीं यह तन से हाय बिछुड़ता।[2]

उषा से जुदा होकर उसका जीवन सूना और लक्ष्यहीन हो गया है। अब अपने मीत को प्राप्त करने के लिए वह क्या करे, यही समझ नहीं पाता है ---

उड़ आँधी के साथ गगन के तारों में छिप जाऊँ ?
लहरों में बहता सागर में मन की जलन बुझाऊँ ?
घायल पक्षी-सदृश दिशाओं से टकरा फिर आऊँ ?
मेरे मन के मीत कहाँ अब कैसे तुमको पाऊँ ?[3]

1- कच-देवयानी, पृ0 65
2- 'उषा' , पृ0 5
3- वही, पृ0 11

उषा के वियोग में प्रभात की स्थिति विचित्र हो जाती है ---

नत-मुख, पीताभ, मलिन, विधु-सा
कृश, अपनी छाया में विलीन
कितनी दूरी से चल आया
ले जलता जीवन-स्नेह-हीन ![1]

प्रभात परकीया उषा से भी प्रेम सबंधं कायम रखना चाहता है। वह अपने मित्र राजीव के घर पर उषा से पुनः प्रेम-निवेदन कर बैठता है --

हँस दो तुम, पथ के शूलों में उग आयेंगे फूल
तनिक मुस्करा दो, जाऊँगा मैं अभाव सब भूल
कल का संघर्षों का जीवन, आज विजय-त्यौहार
उषे ! दिखा दो वह पहली आतुरता अंतिम बार[2]

लेकिन उषा उसकी भावुकता को ठुकरा देती है। प्रभात एक राजनीतिक युवक है। जनता उसका विशेष आदर और सम्मान करती है। प्रबंधकार ने प्रभात के प्रेमी-रूप को ही अधिक विकसित किया है, राजनीतिक जीवन को नहीं। गणतंत्र-दिवस के अवसर पर जनता प्रभात का सम्मान करती है।

प्रभात एक भावुक युवक है। उसकी भावुकता उषा के जीवन को खतरे में डाल देती है। प्रभात शंकाकुल राजीव से उषा के प्रति अपने पूर्व अनुराग की बात प्रकट कर देता है। राजीव यह सहन नहीं कर पाता और पत्नी उषा को छोड़कर चला जाता है।

प्रभात के प्रेम में एकनिष्ठता है। उषा के लिए वह प्रतीक्षा करता है। वह बार-बार उषा से प्रणय-निवेदन करता है, लेकिन उषा उसकी अतिशय भावुकता को ठुकरा देती है।

प्रभात की प्रेमिका राजीव के आनन्दमय परिवार की मंगल-कामना से युक्त होकर आत्म-बलिदान कर देती है। प्रभात का जीवन उषा के बिना व्यर्थ है। अतः प्रभात भी उषा को पुकारता हुआ समुद्र में कूद कर आत्म-बलिदान कर देता है। जीवन में एक दूसरे से बिछुड़े प्राणी मृत्यु-सीमा पर एक हो जाते हैं।

1- 'उषा' , पृ0 12
2- वही, पृ0 29
3- वही, पृ0 33

अथवा दोनों संसृति के
दो भिन्न तटों पर रहते
मिल गये मरण-सीमा पर
जीवन भर बहते-बहते।[1]

निष्कर्षतः, प्रभात एक भावुक एवं उत्सर्गपूर्ण प्रेमी-जीवन का चित्र प्रस्तुत करता है।

3. राजीव

राजीव **उषा** महाकाव्य का नायक है। इस काव्य में वह सर्वप्रथम एक पति के रूप में दिखायी पड़ता है। उसका विवाह उषा से होता है। सद्यः-परिणीता उषा के सहज आत्मसमर्पण के अभाव में वह दुःखी हो जाता है। वह उषा से कहता है :-

मेरी जीवन-निधि ! मौन तुम्हें
मैं और न लुटने दूँगा अब
यौवन के सुख जो विशृंखल
भुजपाशों में भर लूँगा सब।[2]

इस प्रकार, राजीव के हृदय का अनुराग उषा के मन की दुविधा को मिटा देता है। वह केवल उषा के सुख और हर्ष की आकाक्षां से युक्त है : ---

मैं भिक्षु सदय स्मिति का मुझको,
केवल चाहिए तुम्हारा सुख
वीणा-सा लेटा निर्निमेष
निरखूँ यह स्मिति से आनत मुख।[3]

इस प्रकार राजीव का भुजबंधन सार्थक होता है और वह एक पुत्र का पिता बन जाता हैं। उसका दाम्पत्य-जीवन प्रेम के ज्वार में बहने लगता है।

राजीव एक भावुक पति है। वह प्रभात और उषा के साहचर्य से शंकाकुल हो उठता है। वह अपने मन की ईर्ष्या भावनाओं में मन-ही-मन घुटता रहता है।

1- 'उषा' , पृ0 130 2- 'उषा' , पृ0 20
3- वही, पृ0 22

ऐसी ही विक्षुब्ध मनःस्थिति में प्रभात और उषा के पूर्व प्रेम-सम्बन्ध को जानकर वह घर छोड़कर चल देता है ---

मैं चला, जहाँ मेरा ममत्व पा सके तुष्टि
तुम रहो, रहे यह स्नेह-स्वर्ग, सौन्दर्य, सृष्टि।[1]

निराश और दुःखी राजीव विदेश के एक द्वीप में निवास करने लगता है। वह जहाज की दुर्घटना से अपनी त्राण-कर्त्री किरण के प्रति अनुराग से भर उठता है : --

लालसा जीवन की जग रही
रूप का देख भरा भंडार
देख तुमको जीवन का मोह
नवांकुर सा लहराता आज
कौन तुम विधु की नूतन कला ?
नव्य यह कैसा मनुज-समाज ?[2]

किरण और राजीव का सम्बन्ध धीरे-धीरे प्रेम में परिवर्तित हो जाता है। लेकिन, इस सुख और उल्लास के क्षण में भी उसको अपना पूर्व जीवन कभी-कभी याद आने लगता है --- '

किन्तु.. रह गये अधर-दल काँप
कसक-सी उठी हृदय के बीच
अश्रु से धुला कमल-मुख एक
रहा था मानो पीछे खींच। [3]

राजीव स्वतंत्रता-प्रेमी है। वह मानव की स्वतंत्रता में विश्वास करता है। द्वीप में कठोर साम्यवादी अधिनायक-प्रणाली का शासन है। राजीव का व्यक्तिवादी संस्कार इसको सहन नहीं करता है ---

यहाँ स्वप्न अपंख, घुटती कल्पना की वेल
पशु बना मानव रहा सब श्रृंखलायें झेल

1- 'उषा' , पृ0 44
2- 'उषा' , पृ0 60
3- वही, पृ0 66

साँस भी खुलकर नहीं पाता यहाँ मैं खींच
बँट गई ज्यों वायु भी सम हो सबों के बीच।[1]

राजीव पिता की अगाध ममता अपने हृदय में सँजोये है। उसे अपना पुत्र मुकुल याद आता है --

आह ! कितनी दूर इस विस्तृत जलधि के पार
पूर्व-जन्म-विलुप्त स्मृति-सा वह सरल परिवार
इंदु के लघु खंड-सा वह वत्स दीन, अबोध
दे रहा होगा पिता का उसे कौन प्रबोध ?[2]

राजीव एक वीर योद्धा के रूप में भी दिखायी पड़ता है। उसके द्वीप पर पड़ोसी द्वीप का आक्रमण होता है। राजीव एक छोटे-से सेना-नायक के रूप में भाग लेता है। वह युद्ध में अद्‌भुत वीरता का प्रदर्शन करता है। वीरता और पुरुषार्थ के बल पर राजीव उस द्वीप का महत्त्वपूर्ण व्यक्ति बन जाता है। राजीव सेनाध्यक्ष के पद पर पहुँचकर आत्मिक विकास की भावनाओं का अनुभव करता है।

निष्कर्ष : राजीव एक ऐसा पात्र है जिसका व्यक्तित्व प्रेम, वीरता और पुरुषार्थ से युक्त है।

महात्मा गांधी

महात्मा गांधी को **आलोक-वृत्त** खण्डकाव्य का नायक-पद प्राप्त है। आलोच्य खण्डकाव्य में कवि ने बापू के रूप में ऐसे चरित्र का आश्रय लिया है जिसके जीवन से जनता को जागरण की प्रेरणा मिलती है। बीसवीं शताब्दी के अन्य वैज्ञानिक चमत्कारों से अधिक वैचारिक क्रांति की व्यावहारिक पृष्ठभूमि तैयार करने में गांधी जी का नाम चिरस्मरणीय है। सत्य, अहिंसा, सेवा, करुणा, और सत्याग्रह के अमोघ अस्त्रों से बापू जन-जीवन के कल्याण के लिए संघर्ष करते हैं। भारत को स्वतंत्रता दिलाना उनका प्रधान उद्देश्य है। इन्हीं चारित्रिक रेखाओं के आलोक में गुलाब ने गांधी जी के चरित्र को प्रस्तुत किया है। विदेशी शासन से देश को मुक्त करने की चिन्ता गांधी जी के मन में किशोरावस्था से ही होने लगती है ---

---

1- उषा, पृ0 68
2- 'उषा', पृ0 69

चिंता व्याप्त हुई शिशुमन में, गोरों का शासन क्यों
टूट न पाता है प्राणों की जड़ता का बंधन क्यों।[1]

चिन्तन की आरम्भिक अवस्था में उन्हें लगा कि अंग्रेजों को भगाने के लिए हमें शक्ति की आवश्यकता है और यह शक्ति मांसाहार से ही सम्भव है। अतः निरामिषभोजी वैष्णव होकर भी वे घर का पैसा चुराकर मांस खाने लगते हैं। किंतु सत्य के प्रति उनकी निष्ठा इतनी गहरी है कि शीघ्र ही वे अपने पिता के सामने अपनी भूल स्वीकार कर लेते हैं ---

और एक दिन निशि के सूनेपन में रुग्ण पिता के
चरणों पर रख पत्र एक, सुत बैठा शीश झुकाके
पत्र नहीं वह प्रथम मंत्र था आत्मशुद्धि के जप का
जड़ीभूत हिम-से प्राणों पर लेपन शरदातप का।[2]

अध्ययन के लिए इंगलैंड जाते समय मांस, मदिरा और चरित्रहीन स्त्रियों से बचने की जो प्रतिज्ञा माता से करते हैं, उसका निर्वाह करना गांधी जी जैसे संकल्प के धनी और सत्यव्रती का ही काम है : ---

मंत्र सीखकर सत्यनिष्ठ जीवन का, कष्ट-सहन का
आत्मतंत्र का, लोकतंत्र का, चिर-स्वतंत्र नियमन का
आत्म-शुद्धि का पाठ निरन्तर मन-ही-मन दुहराता
जगदीश्वर को साक्षी रखकर माँ के वचन निभाता।[3]

इस प्रकार अपनी प्रबल सत्यनिष्ठा के कारण गांधी अपने चरित्र की रक्षा करने में समर्थ होते हैं।

चिन्तन की प्रौढ़ता आने पर गांधी जी का देश-प्रेम विश्व-प्रेम में परिणत हो जाता है, यद्यपि भारत को स्वतंत्र करना उनका लक्ष्य है। साध्य की पवित्रता के साथ-साथ साधन की प्रवित्रता को भी वे अनिवार्य मानने लगते हैं। इससे राजनीति में छल-प्रपंच की जगह सात्विकता का प्रसार होता है और हिंसा के बदले अहिंसा से स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ी जाने लगती है ---

पशुबल के सम्मुख आत्मा की शक्ति जगानी होगी
मुझे अहिंसा से हिंसा की आग बुझानी होगी। [4]

1- 'आलोक-वृत्त' , पृ0 6 2- वही, पृ0 7
3- 'आलोक-वृत्त' , पृ0 12-13 4- वही, पृ0 20

इस प्रकार सत्य और अहिंसा के प्राचीन भारतीय दर्शन को गांधी जी मौलिक अर्थ देते हैं।

गांधी जी के चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे अपने सिद्धांतों पर दृढ विश्वास के साथ आचरण करते हैं। चम्पारण-सत्यग्रह, खेड़ा-सत्याग्रह और नमक-सत्याग्रह उनके अहिंसात्मक संघर्ष के अनुपम उदाहरण हैं।

भारतीय संस्कृति और साधना में जो कुछ श्रेष्ठ है, उसके संचित रूप का नाम गांधी है। गांधी जी भारतीय संस्कृति के सन्देशवाहक हैं। आस्तिकता, सदाचार, पुरुषार्थ, लोक-सग्रंह, क्षमाशीलता और न्याय-भावना उनके चरित्र की स्वाभाविक विशेषताएँ हैं। चिन्तन और आचरण की सहज दिव्यता के कारण वे अपने विरोधियों को भी (निलहे-गोरे दम्पति) ईसा जैसे मालूम पड़ते हैं ---

देखा जो अद्‌भुत दृश्य सामने, पड़ी चीख
थे स्वयं खडे ईसा देने के लिए, सीख
वह भाव नयन का स्नेहपूर्ण, वह सहज हास
वह ज्योति अलौकिक, दिव्य चेतना का प्रकाश[1]

गांधी जी मनुष्य-मात्र की एकता के परम विश्वासी हैं , लेकिन उन्होंने अपने को भारत की दीन-हीन जनता के साथ एकाकार कर लिया --

बोले गांधी -- मैं भारत का बुनकर किसान

गांधी नंगी-भूखी जनता के स्वर हैं। यहाँ तक कि देश के लिए चिन्तन-व्यस्त वे अपनी पत्नी पर भी ध्यान नहीं दे पाते हैं ----

सबको तो देते रहे तोष
बापू ! 'बा' का भी रहा होश !
'बा' रो-रोकर ज्यों कहती थी
दृग से जलधारा बहती थी। [2]

गांधी जी सुदूर भविष्य की चिन्ता किये बिना, फल का आग्रह छोड़कर कर्त्तव्य करने वाले कर्मयोगी हैं। उनका विश्वास है कि भगवान हमारे जीवन-रथ के सारथी हैं। अंततः उनके सतत संघर्ष से देश को आजादी मिलती है ---

विजय राजेन्द्र को सकुचा रही थी !
जवाहर लाल की ध्वनि आ रही थी
महत्ता हम सबों की क्या भला थी !

1- 'आलोक-वृत्त', पृ0 50 2- 'वही' , पृ0 74

सभी उस वृद्ध माँझी की कला थी।'[1]

आजादी के बाद भी विकास और विश्व-शांति के लिए महात्मा गांधी चिन्तित दिखायी पड़ते हैं ---

विषमता, फूट, मिथ्याचार भागे
सभी का हो उदय, नव ज्योति जागे
विजित हों प्यार से तक्षक विषैले
दयामय ! विश्व में सद्भाव फैले।'[2]

निष्कर्ष : महात्मागांधी का चरित्र अभूतपूर्व मानवीय गुणों से समन्वित है।

(ग) प्रधान नारीपात्र :

उषा

कवि गुलाब ने **उषा** महाकाव्य में नायिका उषा को प्रेमिका, पत्नी, तथा माँ की भूमिका में उतारकर भारत की एक आदर्श नारी का चित्र प्रस्तुत किया है। उषा अपने विवाह के पूर्व अपने सहपाठी प्रभात से प्रेम करती है। वह अत्यन्त ही रूपवती और भावुक युवती है। उसने प्रभात को जीवनसंगी बनाने का वचन दिया है, लेकिन उसका विवाह राजीव से होनेवाला है। इस सूचना से वह अत्यन्त ही मर्माहत होती है। प्रभात और उषा एक-दूसरे से विलग हो जाते हैं। विदा लेती उषा अपनी दशा बतलाकर प्रभात को कह देना चाहती है कि उसके बिना विवाहित उषा का जीवन कभी प्रसन्न नहीं रहेगा। सचमुच, वह विवश है ----

कुसुम-सेज काँटों से होगी अधिक मुझे दुखदायी
देखूँगी उन्मत करो की क्रीड़ा ज्यों पथराई
लौट चली, प्रियतम ! जो भादों की बदली-सी आई
भूल न जाना कर्म-जगत में नारी की कठिनाई।'[3]

पीड़ा का पाथेय लेकर वह ससुराल आती है। पत्नी बनकर भी वह अपनी प्रेमिका की भूमिका से अपने को बहुत दिनों तक मुक्त नही कर पाती है ---

---

1- आलोक वृत्त, पृ0 76 2- 'आलोक-वृत्त' , पृ0 78
3- उषा, पृ0 7

वंदी शुक-सी घड़ियाँ गिनते
दिन बीत न पाते जीवन के
एकाकीपन का भार कठिन
शर-सा चुभता भीतर मन के।[1]

पर्वत की कारा में वंदिनी धारा की तरह और देवमंदिर में निष्कंप प्रदीप-शिखा की तरह उषा का जीवन बाद में सतुंलन प्राप्त कर लेता है। वह एक साध्वी पत्नी की तरह अपनी भूल स्वीकार कर लेती है ---

मेरे राजा ! जलता था मन
'उत्सर्ग' वही पर एक भाव
स्वामी ! जन्मान्तर के भर्ता !
किससे दुराव ! कैसा दुराव ![2]

वह सर्वस्व-समर्पण में ही नारीत्व की पूर्णता देखती है। वह पति को ही गति, मति, जीवन तथा संसार मानती है। प्रभात प्रायः उषा के पास याचक की तृषित मुद्रा लेकर आता [illegible] है, लेकिन उषा में अब किसी प्रकार की भावुकता शेष नहीं रह जाती है। [illegible]भात की भावुकता पसन्द नहीं है ---

यह संवेदन-म[illegible]वुकता नहीं तुम्हारे योग्य
रच देना है जीवन तुमको जन-जन के उपभोग्य।[3]

गणतंत्र-दिवस के अवसर पर राष्ट्रध्वज के नीराजन के लिए आयी हुई उषा के सौदंर्य का वर्णन उसके अतुलनीय सौदंर्य का संकेत करता है ---

गौर भाल पर गैरिक बिँदिया, कृशकटि, पीन उरोज
ज्यों विधु में रवि-उदय, देखकर बढ़े सनाल सरोज
केसरिया साड़ी में लिपटी तनु-सुषमा सुकुमार
पीछे नागिन लटें झूमतीं, सम्मुख हीरक-हार।[4]

विवाह के बाद पवित्र पत्नी उषा अपने पति राजीव की शंका का

1- 'उषा' , पृ0 17
2- वही, पृ0 18
3- वही, पृ0 33
4- 'उषा' , पृ0 34

अभिशाप ग्रहण कर वियोगिनी बन जाती है। एक मात्र शिशु-पुत्र मुकुल ही उसके जीवन का आधार रहता हैं। इस अवधि में प्रभात पुनः आशान्वित होता है। उषा को प्रभात की ऐसी आकांक्षा अच्छी नहीं लगती है। वह व्यंग्य करते हुए अपने आक्रोश को व्यक्त करती है --

तुम पुरुष, तुम्हें नारी का बस चाहिए स्नेह
क्षण में उजाड़ते और बसाते नया, गेह
पर नारी मन-मौक्तिक बिँधता बस एक बार
होती जीवन की एक दाँव में जीत-हार
सुन लो मुझसे यदि कभी किया हो तनिक स्नेह
उनको लौटाये बिना गेह यह नहीं गेह।[1]

उषा को एकाकी जीवन का आधार मुकुल है। गुप्त जी की यशोधरा की तरह उषा भी अपने विरह के दिनों को पुत्र के सहारे काटने लगती है ---

यह नन्हा मुख देख-देखकर
ही तो जीती जाती हूँ।
रोक-रोक रखती प्राणों को
सुना-सुनाकर, -- 'थाती हूँ'।[2]

पर, भाग्य की विडम्बना कुछ और ही सामने लाती है। मुकुल (पुत्र) की आकस्मिक मृत्यु से उषा असहाय तथा शोकातुर हो जाती है ---

सोओ मेरे प्रिय सुत ! तुम्हें स्वप्न भी छू न पायें
सोओ ऐसे युग-युग न जो नींद टूटे किसीसे
भूले भी मैं अब न तुमको जागने को कहूँगी
रोने से भी अब न जननी अंक में ले सकेगी। [3]

ऐसी उषा को एकाकी जीवन से मुक्त करने का प्रयास पुनः प्रभात करना चाहता है। उसकी आकांक्षा उषा द्वारा उपेक्षित होती है --

पर नहीं उठती, अब स्वप्न में,
फिर वधू बन लूँ, यह भावना। [4]

1- 'उषा', पृ0 46 2- वही, पृ0 55
3- 'उषा' , पृ0 86 4- वही, पृ0 92

उषा सर्वदा अपने पति की मंगल-कामना करती रहती है। एक दिन प्रभात से राजीव का पता चलता है और उषा उसकी खोज में निकल पड़ती है। एक द्वीप में वह राजीव को एक युवती और उसके शिशु के साथ देखती है और त्यागमयी नारी की भावना से भर जाती है :--

सुखी प्राण को रुला हर्ष में शोक बुलाऊँ
प्रेम यही ! इससे तो अच्छा है मर जाऊँ।[1]

उषा समुद्र में छलाँग लगाकर पति के नये जीवन को सुरक्षित कर देती है। सच है **उषा** के चरित्र में नारी के आत्म-त्याग तथा जीवन-उत्सर्ग-पूर्ण मानवीय स्वरूप का विकास है जिसे देखकर बरबस 'श्रद्धा' की मूर्ति मन में जाग उठती है।[2]

देवयानी

देवयानी **कच-देवयानी** खण्डकाव्य की नायिका है। वह असुरों के गुरु शुक्राचार्य की एकमात्र संतान है। उसका सौंदर्य अद्वितीय है :--

माधवीलता के आनन पर
मधुपावलियों का घेरा था
अंतिम प्रवास की रजनी का
मानो हो रहा सवेरा था। [2]

कौतूहल-बुद्बुद फूट रहे
नीले नयनों के कोनों से
जैसे मकरन्द टपकता हो
निस्पन्द कमल के दोनों से। [3]

संपूर्ण खण्डकाव्य में देवयानी एक प्रेमिका के रूप में चित्रित की गयी है। वह कच से प्यार करती है। कच देवलोक से शुक्राचार्य के आश्रम में संजीवनी-विद्या प्राप्त करने आया है। देवयानी मन-ही-मन कच के प्रति आकर्षित है। इसीलिए वह कई

1- 'उषा', पृ0 125
2- श्री सुमित्रानन्दनन पंत, उषा (प्राक्कथन) , प्र0 1
3- 'कच-देवयानी' , पृ0 12

बार कच के प्राणों की रक्षा भी करती है। कच देवयानी के प्यार से अनभिज्ञ है। कच ने संजीवनी-विद्या प्राप्त कर ली है। उसे कल ही देवलोक जाना है। विदा की घड़ी में देवयानी कच से अपना प्रेम प्रकट करती है --

मैं अपने कोमल सपनों का
संसार सजाती थी तुम-से
नव पारिजात की माला-से
जो उतरे थे कल्पद्रुम से।[1]

वह कच के अज्ञान को भी रेखांकित करती है ---

तुम ऐसे विद्यालीन रहे
पुस्तक से आगे बढ़ न सके
पढ़ लिये शास्त्र-इतिहास सभी
नारी के मन को पढ़ न सके।[2]

देवयानी स्त्रियोचित लज्जा से भरी हुई है। इसीलिए वह बार-बार प्रयत्न करके भी मन की बात कच से नहीं प्रकट कर सकी है ---

मैं कर सोलह शृंगार चली
नभ के तारों ने टोक दिया
जब-जब आकुलता मचल पड़ी
तब-तब लज्जा ने रोक दिया। [3]

कच के संभावित वियोग से देवयानी व्यथित हो जाती है। वह अपनी वियोगभीत मानसिकता को अभिव्यक्त करते हुए कहती है ---

अनसुनी पिकी की तान-सदृश
जब निर्जन में लहराऊँगी
मेरे प्रसूनधारी वसंत
मैं तुम्हें कहाँ फिर पाऊँगी ![4]

1- 'कच-देवयानी' , पृ0 21
2- वही, पृ0 21
3- वही, पृ0 22
4- वही, पृ0, 23

कच देवयानी के सौन्दर्य से आकर्षित हो जाता है। वह उसे 'भाग्य-रेखा' की तरह दिखायी पड़ती है। देवयानी कच के आश्वासनों से पुलकित हो जाती है।

देवयानी के प्रेमी-रूप में वियोग की ही प्रधानता हे। कच की प्रस्थान-वेला में देवयानी पुनः कच से मिलती है। वह आश्रम में विवाह की प्रतीक्षा के लिए कच को रोकना चाहती है। वह कच को अपना परिचय देती है। ज्यों ही कच को यह मालूम होता है कि देवयानी उसके गुरु (शुक्राचार्य) की ही संतान है, वह हतप्रभ हो जाता है। कारण यह कि देवयानी गुरु-संतान होने के कारण उसकी बहन के सदृश है। वह देवयानी के प्रेम को ठुकरा देता है ---

गुरु-कन्या, भगिनी तुम मेरी
श्रद्धा की प्रतिमा प्रभापूर्ण
अब उसकी याद दिलाओ मत
जो स्नेह-स्वप्न हो चुका चूर्ण।[1]

कच की इस कर्त्तव्य-भावना को देखकर देवयानी क्रन्दन करने लगती है। वह उसकी निर्दयता की ओर संकेत करते हुए कहती है ---

यह कैसा झूठा सत्य, भीरु
वीरत्व, सदय निर्दयता है !
जो हृदय निमिष में चूर करे
वह भी अच्छी सहृदयता है ![2]

देवयानी के लिए उसका प्रेम ही सर्वस्व है। उसके लिए कर्त्तव्य से भी अधिक श्रेयस्कर उसका प्यार है। वह कच को इस संकीर्ण धर्म-भावना को तोड़ने के लिए कहती है :---

मिथ्या संकोच-भावना यह
तोड़ो, पौरुष-निर्झर तुम हो
मेरे जीवन-वन के वसंत
मेरे सुहाग के कुंकुम हो।[3]

1- 'कच-देवयानी', पृ0 43
2- वही, पृ0 44
3- 'कच-देवयानी' , पृ0 47

देवयानी कच से विवाह के लिए बहुत आग्रह करती है। कच बार-बार उसके समक्ष धर्म-भावना की दुहाई देता है। लेकिन, देवयानी के लिए उसका प्रेम ही सब कुछ है ---

तुम ज्ञानी, पुरुष, समर्थ किन्तु
अबला जड़-बुद्धि बिचारी मैं
अस्तित्व प्रेम में ही जिसका
जीती हूँ अथवा हारी मैं।[1]

विवश अबला देवयानी कच से हाथ जोड़कर अपने प्रेम की रक्षा के लिए आग्रह करती है। इसका आग्रह दैन्यभरा है ---

मैं हाथ जोड़ती हूँ, मेरे
जीवन की धूल उड़ाओ मत
यह हृदय तुम्हारी थाती है
ले, देख इसे लौटाओ मत।[2]

देवयानी के बार-बार निवेदन करने पर भी जब कच उसे स्वीकार नहीं करता तो वह उसपर क्रोधित हो जाती है। उसके सारे अरमान चूर-चूर हो जाते हैं। वह क्रोध में आकर कच को शाप दे देती है ---

संजीवन-शक्ति विफल होगी
तुम से निर्मम अधिकारी की।[3]

इस शाप के बाद भी देवयानी कच की स्मृति में विकल है। वह इस प्रेम के लिए दैत्यों के राज्य को भी समर्पित करने को तैयार है। कच की स्मृतियाँ बार-बार देवयानी को विकल करने लगती हैं। वह अपने प्रेम-पूर्ण हृदय को भी उपालम्भ देती है ---

रो हृदय चपलता का तेरी
परिणाम यही तो होना था
पगले परदेसी के आगे
तुझको यों आपा खोना था।[4]

1- 'कच-देवयानी', पृ0 51
2- वही, पृ0 52
3- 'कच-देवयानी' , पृ0 61
4- वही, पृ0 67

निष्कर्षतः, देवयानी एक अतृप्त-प्रेमिका के रूप में चित्रित की गयी है।

(ग) अहल्या

अहल्या गुलाब जी के पौराणिक खण्डकाव्य **अहल्या** की नायिका है। उसे कवि ने पत्नी, परित्यक्ता नारी एवं भक्तिन के रूप में चित्रित किया है। अहल्या जैसे प्रख्यात पौराणिक नारी-पात्र को कवि ने मनोवैज्ञानिक स्पर्श से बहुत ही स्वाभाविक बना दिया है।

सर्वप्रथम नवयौवना अहल्या एक रूपवती नारी के रूप में दिखायी पड़ती है। उसका सौन्दर्य अलौकिक है। उसके अद्वितीय सौन्दर्य को देखकर वृद्ध ब्रह्मा जी भी विभ्रम में पड़ जाते हैं। वह इतनी सुंदर है कि रति रंभा, रमा और उमा उसकी प्रतिकृति लगती हैं ---

वह निज से निर्मित आदि उषा नभ को रँगती
रति, रम्भा, रमा, उमा जिसकी प्रतिकृति लगती
छवि वह सुर-नर-मुनि-वंदित, अभिनंदित-जगती
यौवन-विभ्रम से वृद्ध पितामह को ठगती
ज्यों उतर खड़ी थी आगे। [1]

सुर, दानव और यहाँ तक कि महेश भी उस सौन्दर्य से अभिभूत हैं ---

मच गई खलबली देवों में, उन्मद महेश
भुजपाशों में भरने को। [2]

ब्रह्मा के निर्देश से अहल्या गौतम को पतिरूप में वरण करती है। गौतम की यशोदीप्त छवि क्षण-क्षण तप से निखर रही है। उन्हें देखकर अहल्या की चेतना शिथिल हो जाती है। वह सर्वस्व समर्पण के लिए तत्पर हो जाती है। वह एक आदर्श पत्नी की तरह ऋषि की भग्न एवं कृश देह को सेवा का आश्वासन देती है --

अंतर की अकलुष स्नेह-वृत्ति कब हुई मृषा !
तन मिलता उससे जिससे मन की बुझी तृषा

1- 'अहल्या' , पृ0 2
2- वही, पृ0 2

सेवा-वंचित यह, आर्य ! आपकी खिन्न दशा
मैं दूँगी इन सूखे अंगों में सुरभि बसा
जो असमय कुम्हलाये हैं। [1]

वह गौतम के प्रति अनन्य भाव से समर्पित है। वह पति के प्रति स्नेह-भावना से ओतप्रोत हो जाती है ---

दिन भर तप रवि-से लौटोगे, प्रिय ! जभी गेह
मैं संध्या-सी देहरी-दीप में भरे स्नेह
अर्पित कर दूँगी यह नामांकित सुमन-देह
मैं बरस, बिखर जैसे पावस का प्रथम मेंह
अंतर मधु से भर दूँगी।[2]

अप्रतिम सुन्दरी अहल्या पितृ-भक्ति से भी समन्वित है। वह अपने पिता ब्रह्मा के आदेश से तापस गौतम को स्वीकार कर लेती है। उसके लिए उसके पिता की इच्छा सर्वोपरि है ---

दृग-तारों से छलके छल-छल आँसू कज्जल
मुनि-चरणों पर झुक कहा अहल्या ने विह्वल
मैं संकल्पित कलिका, कर में लो या दो मल
दे दिया पिता ने जिसे वही मेरा संबल
यह जीवन हाथ उसीके।' [3]

पत्नी अहल्या के इस समर्पण से गौतम के जीवन का तार-तार झंकृत हो उठता है। उन दोनों का दाम्पत्य जीवन प्रेम की धारा में बहने लगता है। धीरे-धीरे प्रेम का यह ज्वार मन्द होने लगता है। गौतम अहल्या की यौन इच्छाओं को पूरा नहीं कर पाते। अहल्या की **पति-प्रतिक्षा** और श्रृंगार लज्जित-सा रह जाता है।

पति की शिथिलता से अहल्या की यौन इच्छाएँ कुंठित हो जाती हैं। सुरपति इन्द्र को देखकर अहल्या का मन-जीवन सागर-सा लहराने लगता है।

1- 'अहल्या', पृ0 11
2- 'अहल्या', पृ0 11
3- वही, पृ0 12

उसके निष्फल नारीत्व में सिहरन आ जाती है। वह प्रेम, यौवन-रस एवं प्रीति-विलास की धारा सें आप्लावित हो जाती है ---

झीनी फुहार, यौवन-रस दश-दिशि गया बरस
अब अंगु प्रियंगु-लता-से हँस-हँस, विकस-विकस
अपनी छवि पर झुक गये आप वेसुध, सालस
प्राणों से प्रीति, विलास, भावना की बरबस
धारा स्वयमेव उमड़ती। [1]

भोली-भाली अहल्या इन्द्र के छल को नहीं समझ पाती है। वह उसे पति समझकर स्नेह के चरम-क्षण में पहुँच जाती है और अपनी काया भी अर्पित कर देती है ----

आई श्रावन-घनमाला-सी युवती अधीर
खो जाने को प्रिय स्नेहाकुल भुजबंध चीर
चातकी तृषित ज्यों देख उमड़ता स्वाति-नीर
चंचल तरंग-माला ज्यों पाकर तृषित तीर
अर्पित करती काया को। [2]

संध्या-वंदन से लौटनेवाले गौतम अहल्या के साथ सुरपति को देखकर क्रोध से भर जाते हैं। इन्द्र के छल से अहल्या काँप उठती है। भयभीत अहल्या पति के चरणों में गिर जाती है ----

'स्वामी ! अपराध क्षमा' कहती-सी दृष्टि-संग
चरणों पर पति के गिरी अहल्या शिथिल-अंग।[3]

क्रुद्ध गौतम अहल्या को क्षमा नहीं करते हैं। वे अहल्या को शाप देते हुए छोड़कर चले जाते हैं ---

जीवन के जड़ सुख-भोग भोग जो इष्ट तुझे
पत्थर-सी आत्मा-रहित न जिसकी प्यास बुझे
दे मुक्ति, चला मैं, अब मत देना दोष मुझे।[4]

1- 'अहल्या', पृ0 17
2- वही, पृ0 25
3- वही, पृ0 29
4- 'अहल्या' , पृ0 29

पति-परित्यक्ता अहल्या क्षण मात्र में ही पाषाणी की तरह जड़ता से भर जाती है।

पुरजन-परिजन से तिरस्कृत अबला समाज की घृणा को विवश भाव से झेलती है। उसके दिन-रात किसी अमृत की प्रतीक्षा में बीतने लगते हैं। एक दिन उसे राम-लक्ष्मण के दर्शन होते हैं। भगवान के दर्शन मात्र से ही वह पाप-ताप से मुक्त हो जाती है। चिर-उपेक्षिता अहल्या राम के प्रति भक्ति-भावना से भर जाती है। उसे सत्-चित् आनन्दमय राम के चरणों में मंगल-स्रोत का अनुभव होता है। उसे पुनः गौतम का प्यार मिल जाता है। इस प्रकार चिर-उपेक्षिता एवं लांछिता अहल्या कलंक से मुक्त हो जाती है।

निष्कर्षतः, महाकवि गुलाब की अहल्या का चरित्र मनोवैज्ञानिक स्पर्श से बहुत ही यथार्थवादी बन गया है।

(घ) गौण पात्र

(1) गौण पुरुष-पात्र

प्रधान पात्रों की चरित्र-योजना की तरह ही कवि गुलाब के प्रबंधकाव्यों के गौण पात्रों की चरित्र-भूमि भी वैविध्यपूर्ण है। गौण पुरुषपात्रों में मुनि गौतम, दशरथ, राम और सुरपति इन्द्र (**अहल्या**) विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

गौतम

गौतम मुनि **अहल्या** खण्डकाव्य के परम्पराभुक्त पात्र हैं, तथापि कवि के पुनस्पर्श से कुछ मौलिकता भी आ गई है। वे एक तपस्वी के रूप में दिखायी पड़ते हैं। अहल्या उनकी पत्नी है। नव-यौवना अहल्या की यौन इच्छाएँ तपस्वी पति से पूरी नहीं हो पातीं। गौतम अपनी निष्फलताओं में खीझ से भर उठते हैं। अहल्या उनके लिए शल्या बन चुभने लगती है ---

निष्फलताओं में खीझ भरी-सी अकुलाती
वह सदा अहल्या शल्या बन चुभ-सी जाती
कर खोल न पाते जैसे पर की हो थाती
वाह्यांतर में देहरी-दीप की-सी बाती
अविकार देह जलती थी। [1]

1- 'अहल्या' , पृ0 14

मुनि गौतम मर्यादा के समर्थक हैं। वे इंद्र के छल से वेदना और दर्द से भर जाते हैं --

सागर भी मर्यादा यदि पल में भूल जाय
रक्षक, भक्षक ! तो फिर किसकी जग शरण जाय !
सब नीति-व्यवस्था-धर्म-श्रृंखला छिन्न-प्राय
असहाय मनुज का आज कौन होगा सहाय
ऋत-विरत विश्व-प्रांगण में ?[1]

गौतम एक क्रोधी व्यक्ति हैं। वे शाप देना जानते हैं। दे इन्द्र को भी शपित करते हैं --

यह अयश कालिमा ले शिर पर, चिर-मलिन काग !
तुम भटकोगे त्रिभुवन में। [2]

क्रोधी पति गौतम पत्नी की विवशताओं पर विचार नहीं करते, 'पत्थर-सी आत्मा-रहित' अहल्या को छोड़कर चले जाते हैं। अन्त में जब अहल्या का उद्धार होता है, तब पुनः उसे गौतम स्वीकार कर लेते हैं।

इस प्रकार गौतम एक तपस्वी एवं क्रोधी पुरुष के रूप में चित्रित किये गये हैं।

दशरथ

अहल्या खण्डकाव्य के दशरथ भी एक परम्पराभुक्त पात्र हैं। वे एक आदर्श पिता एवं धर्मरक्षक के रूप में दिखायी पड़ते हैं।

राजा दशरथ वृद्धावस्था में भी धर्मरक्षण के लिए खड्ग धारण करने को तैयार हैं ---

मुनिवर मैं स्वयं धर्मरक्षण को खड्ग-हस्त
धिक् जीवन ! देखूँ साधुजनों को ध्वस्त, त्रस्त
जलते अन्याय-अनल में।[3]

1- 'अहल्या', पृ0 28
2- 'अहल्या' , पृ0 28
3- वही, पृ0 35

दशरथ के हृदय में अपने पुत्रों के प्रति अगाध प्रेम है। उनके चारों पुत्र आँखों के तारे हैं ---

वृद्धावस्था के पुत्र नहीं किसको प्यारे !
जी सकते प्राण कुमारों से होकर न्यारे !
ये प्राण प्राण के, जी के जी, दृग के तारे।[1]

राजा दशरथ अपने पुत्रों के बदले में कौशिक मुनि को सब कुछ देने के लिए तैयार हैं ---

'मै इन्हें छोड़ धन, धाम, धरा, वैभव सारे
जो माँगें, दूँ पल भर में।'[2]

इन चारों पुत्रों में राम सबसे अधिक प्रिय हैं। जब कौशिक राम को 'यज्ञ-रक्षार्थ' माँगते हैं, तो दशरथ व्याकुल हो जाते हैं ---

पुर, परिजन, प्रिय, परिवार, बंधु, धन, धाम, सही
मैं दे सकता हूँ सब कुछ लेकिन राम नहीं
मुनि गूँज रहा नस-नस में मेरे नाम वही
नृप कह न सके आगे, पलकें अविराम बहीं
परिषद डूबी, उतरायी। [3]

विश्वामित्र के बार-बार कहने से वे बड़े विवश भाव से राम और लक्ष्मण को दे देते हैं ---

'नृप कह न सके कुछ रुद्ध-कंठ , बस इंगित से
युग वत्स बुलाकर पास स्नेह-कातर चित से
मुनि के चरणों में सौप दिये संकल्पित-से।'[4]

निष्कर्षतः, दशरथ के हृदय में पुत्र-प्रेम का जो भाव दिखायी पड़ता है, वह अन्यत्र दुर्लभ है।

1- 'अहल्या' , पृ0 37
2- वही, पृ0 37
3- वही, पृ0 38
4- वही, 40

राम

अहल्या खण्ड काव्य के राम एक परम्पराभुक्त पात्र हैं। वे मुनियों के रक्षक एवं असुरों के विनाशक हैं। वीरता की सजीव मूर्त्ति हैं ---

ये सिंह कुमारों से निर्भय, वय के किशोर
लघु भी महान चिर, धीर, वीर, कोमल, कठोर।[1]

राम पूर्ण ब्रह्म हैं। वे विराट् और विभु-रूप हैं ---

सहसा खुल गयें बंद अंतर के ज्योति-द्वार
थे राम मनुज ! सच्चिदानन्द, पूर्णावतार
देखा विराट् विभु-रूप सामने महाकार
क्षिति-भार-हरण, भव-शरण-वरण, जन-हृदय-हार
सुर-मुनि-विधि-हरि-हर पूजित।[2]

राम की वीरता अद्भूत है --

हर लिया एक शर ने सुर-संशय, रिप-सुनाम।[3]

राम पीड़ित, लांछित एवं दीन दुखियों के रक्षक हैं ---

जो पीड़ित, लांछित, दीन दुखी, दुर्बल, अनाथ
चिर-पतित, अपावन, जग में चलते झुका माथ
मैं भक्ति-मुक्ति से भरता उनके रिक्त हाथ
दूँ बहा सृष्टि में प्रेम-जाह्नवी पुण्य-पाथ
बस इसीलिये आया हूँ।' [4]

सुरपति इन्द्र (अहल्या)

इन्द्र एक कामुक एवं छली चरित्र के रूप में दिखायी पड़ते हैं। एक दिन वे अहल्या को देखकर काम-भावना से बेचैन हो उठते हैं ---

---

1- 'अहल्या' , पृ0 36 2- वही, पृ0 33
3- वही, पृ0 44
4- 'अहल्या' , पृ0 52

नभ से जाते सुरपति ने भू की देख ओर
अंतर की शांति गँवाई। [1]

अहल्या के बिना इन्द्र को सब कुछ व्यर्थ लगता है। उसको बिना प्राप्त किये मन में स्थिरता नहीं है ---

इस ओर व्यर्थ लगता था जीवन प्रियाहीन
उर्वशी, मेनका रंभा, तिलोत्तमा, विलीन
परिपक्व रसाल विशाल जहाँ क्या पनस पीन !
सुरपति को मिलती पल भर भी स्थिरता कहीं न
परिषद् या अंतःपुर में। [2]

काम की ज्वाला में जलते हुए इन्द्र मर्यादा-विहीन होकर अहल्या के सौन्दर्य-भोग के लिए षड्यंत्र करते हैं। वे गौतम का रूप धारण कर छल से अहल्या के साथ प्रीति-विलास के सुख को भोगते हैं। इस प्रकार वे एक परम्पराभुक्त पात्र हैं। यहाँ भी कवि ने उनके कामुक और छली चरित्र की रक्षा की है।

गौण नारी-पात्र :

गुलाब के प्रबंध-काव्यों के गौण नारी-पात्रों में किरण **(उषा)** और कस्तूरबा **(आलोक-वृत्त)** विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

किरण

किरण **उषा** महाकाव्य की पूर्णतः काल्पनिक नारी-पात्र है। लेकिन, कवि के स्वाभाविक वर्णन से यह चरित्र काफी सत्य एवं रोचक प्रतीत होता है। वह मातृ-पितृ-हीन कुमारिका एक द्वीप में रहती है। वह मानवीय सेवा-भावना से ओत-प्रोत है। इसलिए राजीव नामक दुर्घटनाग्रस्त युवक की रक्षा करती है। उसीकी सेवा-सुश्रूषा से राजीव स्वास्थ्य-लाभ करता है।

किरण एक आदर्श प्रेमिका है। वह राजीव के प्रेम में बँध जाती है --

---

1- 'अहल्या', पृ0 15
2- वही, पृ0 19

चरण कुंठित फूलों से बँधे
अधर की हँसी हुई अपराध
लुटा सर्वस्व हृदय में आज
भिखारी बन जाने की साध।[1]

इस प्रकार किरण और राजीव दाम्पत्य-प्रेम में बँध जाते हैं।

किरण के हृदय में मानवीय करुणा का स्रोत उमड़ता है। वह प्रभात और उषा के शव को देखकर मर्माहत हो जाती है।

कस्तूरबा

कस्तूरबा एक ऐतिहासिक नारी-चरित्र है। वह युग-पुरुष महात्मा गांधी की पत्नी है। कवि गुलाब ने कस्तूरबा को एक आदर्श पत्नी के रूप में चित्रित किया है। उसका व्यक्तित्व तेज, गौरव तथा नारी के आदर्श गुणों से समन्वित है --

'तेजमयी, गुणमयी, समर्पित भी चिर-गौरव-भरिता
हरित-नील, जलनिधि में जैसे धवल-चरित नभ-सरिता।[2]

कस्तूरबा, गांधी के उच्च अध्ययन और लोकमंगल के लिए पति-वियोग को धैर्यपूर्वक सहन करती है। गांधी की इंग्लैंड-यात्रा में उसकी सहमति प्रेम-भावना और कर्त्तव्य-निष्ठा की परिचायक है।

आदर्श भारतीय नारी की तरह कस्तूरबा पति की सहधर्मिणी है। वह साठ वर्षों तक सुदीर्घ दाम्पत्य जीवन में सदा पति की अनन्य सेवा करती है। वह जीवन के अनेक सुख-दुःख और उतार-चढ़ाव को धैर्यपूर्वक झेलती है। पति-सेवा ही उसके जीवन का अभीष्ट है। गांधी स्वयं स्वीकार करते हैं ---

मेरी सेवा में ही लय थी
वह मुझसे अधिक राममय थी
दे मुझे महात्मा-पद भास्वर
वह बनी नींव की ज्यों पत्थर।[3]

1- 'उषा' , पृ0 64
2- 'आलोक-वृत्त', पृ0 8
3- आलोक-वृत्त पृ0 73

देश के स्वाधीनता संग्राम में कस्तूरबा पति के कंधे से कन्धा मिलाकर साथ देती है। उसकी मृत्यु जेल में ही होती है। ऐसी प्रेममयी पत्नी की समाधि ा देखकर महात्मा गांधी की आँखे भर आती हैं --

होंगा स्वतंत्र भारत लेकिन
'बा' देख न पावेगी वह दिन। [1]

इस प्रकार कस्तूरबा के चरित्र में सहधर्मिणी की संज्ञा पूर्णतः चरितार्थ होती है।

(5) विषय-वस्तु की अभीष्टता

कवि गुलाब के प्रबंध-काव्यों में निम्नलिखित अभीष्टताओं (लक्ष्यों) को ध्यान में रखा गया है :--

(क) शुद्ध प्रेम के लिए त्याग और बलिदान की भावना को जाग्रत करना ---- **उषा** महाकाव्य के मूल में त्याग और बलिदान का संदेश है। उषा का जीवन त्याग और बलिदान का जीवन्त प्रतीक है। उषा वस्तुतः भारतीय नारी का आदर्श प्रस्तुत करती है। यद्यपि प्रेम जीवन का अनिवार्य और शाश्वत धर्म है, किन्तु भारतीय समाज में उसकी निश्चित मान्यताएँ हैं ; निश्चित मूल्य और आदर्श स्थापनाएँ हैं। वह विवाह से पूर्व प्रभात से प्रेम करती है। किन्तु विवाहोपरान्त अपने पति राजीव को ही सब कुछ समझती है। अतएव वह प्रेमिका की भूमिका से पत्नी की सफल भूमिका में आती है। उसके चरित्र का अंतर्द्वंद्व दिखलाकर तथा अन्त में उसे दांम्पत्य जीवन में बाँधकर कवि ने मूलतः प्रेम-बलिदान की स्थापना की है।

शंकालु पति राजीव के प्रवास-काल को वह बहुत संघर्षपूर्ण विवशताओं में जीती है। वह उसकी तलाश के लिए निकल पड़ती है और जब उसका पति उसे मिलता है तो राजीव किसी अन्य युवती किरण के साथ नया जीवन प्रारम्भ कर चुका होता है। भारतीय नारी उषा पुनः नारी-जीवन की महान उत्सर्ग-परम्परा को सार्थक करती है।

वह राजीव के सुखी परिवार को देखकर मानवीय क्रोध और ईर्ष्या से ऊपर उठकर त्याग की भावना से भर जाती है ---

त्यागमयी तू भूल गयी जीवन की दीक्षा
नारी ! सँभल, प्रेम की तेरे आज परीक्षा

1- 'आलोक-वृत्त', पृ0 73

सुखी प्राण को रुला हर्ष में शोक बुलाऊँ
प्रेम यही, इससे तो अच्छा है मर जाऊँ। [1]
अथवा
भोग भावना का प्रतीक जीवन ओझल था
केवल सूनी आत्मा, सूना भूमंडल था।[2]

इस प्रकार **उषा** महाकाव्य की नायिका 'उषा' त्याग और बलिदान की भावना से ओत-प्रोत होकर, समुद्र में कूदकर अपनी जीवन-लीला समाप्त कर देती है।

(ख) कर्त्तव्य निष्ठा की भावना को जाग्रत करना : -- **'कच-देवयानी'** खण्डकाव्य का मूल उद्देश्य प्रेम-भावना पर कर्त्तव्य-निष्ठा और धर्म-परायणता की महत्ता स्थापित करना है। कच कर्त्तव्यनिष्ठा और धर्मपरायणता की प्रतिमूर्ति है। इसलिए वह गुरु-पुत्री देवयानी के अयाचित प्रेम-समर्पण को ठुकरा देता है; वह देवयानी से कहता है ---

यदि प्रेम सत्य भी होता तो
कर्त्तव्य प्रेम से ऊपर है। [3]

कच गुरु-कन्या को बहन की तरह पवित्र मानता है। उसके भीतर धर्मपरायणता कूट-कूटकर भरी है। इसलिए वह देवयानी से कहता है ---

'गुरु-कन्या, भगिनी तुम मेरी
श्रद्धा की प्रतिमा प्रभापूर्ण
अब उसकी याद दिलाओ मत
जो स्नेह-स्वप्न हो चुका चूर्ण।' [4]

(ग) राष्ट्रीय भावना को जाग्रत करना -- **'आलोक-वृत्त'** नामक खण्डकाव्य का मूल उद्देश्य राष्ट्रीय भावना को जाग्रत करना है। महात्मा गांधी के चरित्र के माध्यम से कवि ने देश-प्रेम को जाग्रत किया है। इस खण्डकाव्य के अन्तर्गत **मेरे भारत, मेरे स्वदेश** (राष्ट्र-वंदना गीत) का मूल उद्देश्य यही है। कवि

1- 'उषा' , पृ0 125 2- वही, पृ0 126
3- 'कच-देवयानी', पृ0 43
4- 'कच-देवयानी', पृ0 48

ने देश-प्रेम को रेखांकित करते हुए लिखा है ---

सबसे मनोहर था, सनातन देश जो
सबसे पुरातन, पूर्ण वैदिक सभ्यता [1]

अथवा ---

कोई भी बलिदान न भारी पथ में स्वतंत्रता के
मिलता है जयमुकुट यहाँ पर अपना शीश कटाके।[2]

(घ) संघर्ष एवं मानवीय प्रेम-भावना को जाग्रत करना --- **अहल्या** खण्डकाव्य में संघर्ष एवं प्रेम-भावना को जाग्रत किया गया है। **अहल्या** के राम अहल्या के भीतर संघर्ष की भावना को स्थापित करते हुए कहते हैं ---

रवि-शशि-से मन की चपल वृत्ति में बँधे आप
किसके मानस में उदित न होते पुण्य-पाप !
गिर-गिर कर उठना, चेतनता का यही माप,
जन-जीवन पर बस उसी पुरुष की पड़ी छाप
जो कभी न दुख से हारा। [3]

अहल्या के राम, प्रेम का ही समर्थन करते हैं ; किन्तु यह प्रेम मानवतावादी है --

जो पीड़ित, लांछित, दीन, दुखी, दुर्बल, अनाथ
चिर-पतित, अपावन, जग में चलते झुका माथ
मैं भक्ति-मुक्ति से भरता उनके रिक्त हाथ
दूँ बहा सृष्टि में प्रेम-जाह्नवी पुण्य-पाथ
बस इसीलिए आया हूँ। [4]

आलोक-वृत्त के नायक गांधी भी प्रेम-भावना के प्रतीक हैं। किन्तु, उनकी प्रेम-भावना अत्यन्त ही व्यापक है ; पूर्णतः मानवतावादी ---

---

1- वही, पृ0 2
2- वही, पृ0 7
3- 'आहल्या' , पृ0 52
4-वही, पृ0 21

प्रेम सृष्टि का मूल धर्म, चेतन का नियम सनातन
इसके कारण ही विनाश से बचा आजतक जीवन।[1]

(ड.) सदाचार तथा उन्नत मानवीय मूल्यों के प्रति आस्था -- **आलोक-वृत्त** खण्डकाव्य का मूल स्रोत मानव-जीवन में सदाचार एवं मानवीय मूल्यों की स्थापना करना है। उदाहरण द्रष्टव्य हैं ---

(1) मानवता

जिसने मारा मुझे, कौन वह ! हाथ नहीं क्या मेरा !
मानवता तो एक, भिन्न बस उसका-मेरा घेरा। [2]

अथवा --
ऊर्ध्वगामिनी चेतनता पाषाण फोड़ कर आयेगी
यह मानव-विकास की धारा आगे बढ़ती जायेगी।[3]

(2) आस्तिकता

माया डँसती उसे जिसे मायापति स्वयं उबारे !
जिसको रखते राम उसे किसका सामर्थ्य कि मारे ![4]

(3) सत्याचरण

मैं मरूँ सौ बार यदि मेरे मरण से
सत्य और विवेक जागे।[5]

अथवा--
'जादू था न चतुरता कोई, नहीं छद्म या छल था
उन आँखो में जो भी बल था सत्य-प्रेम का बल था।[6]

1- 'आलोक-वृत्त' , पृ0 20 2- वही, पृ0 21
3- 'आलोक-वृत्त', पृ0 30 4- वही, पृ0 14
5- वही, पृ0 28

अथवा --
'अहिंसा ने अजब जादू दिखाये
विरोधी हैं खड़े कंधा मिलाये।' [1]

(5) न्याय-भावना

मैं मंत्र अभय का, न्याय-भावना का प्रतीक
बस यही चाहता, सभी सत्य की चलें लीक[2]

(6) समत्व-दृष्टि

लोकतंत्र का रथ समता के पहियों पर चलता है
मंदिर कोई भी हो सब में दीप वही जलता है[3]

(7) लोक-संग्रह की भावना

देवि ! हमारे घर में माना कुछ दिन तिमिर पलेगा
कोटि-कोटि पर दुखी गृहों में आशा-दीप जलेगा।[4]

(8) साध्य के साथ साधन की पवित्रता

जिन पर मेरा सतत नियंत्रण, रहें विमल वे साधन
साध्य अभिन्न सदा उनसे जिस तरह कार्य से कारण।[5]

इस प्रकार गुलाब जी के प्रबंधकाव्यों में जीवन के श्रेष्ठ मूल्यों का उद्घोष है। आलोक-वृत्त खण्डकाव्य के नायक महात्मा गांधी इन श्रेष्ठ मानवीय मूल्यों के प्रतीक हैं।

1- 'आलोक-वृत्त' , पृ0 77 2- वही, पृ0 44
3- वही, पृ0 39
4- वही, पृ0 11
5- वही, पृ0 21

सारांश यह है कि आलोच्य कवि भावों की व्यंजना मात्र ही नहीं करता, वह उच्चतर लक्ष्य में उसकी परिणति का प्रयास भी करता है। उसके काव्य में भाव का भोग नहीं वरन् उन्नयन ही मिलता है।

चतुर्थ अध्याय

प्रबन्ध-रचनाओं के कला-पक्ष का विश्लेषण

प्रबंध काव्यों के कला-पक्ष का विश्लेषण

कला-पक्ष (बाह्य रूप-सौन्दर्य) के अनिवार्य तत्त्वों में भाषा-शैली, अलंकार-योजना तथा छंद-विधान आदि उल्लेखनीय हैं। इनमें 'शैली' शब्द अत्यन्त ही व्यापक अर्थ रखता है। वस्तुतः शैली का सम्बन्ध संपूर्ण रचना-प्रणाली से होता है। इसे विषय की अभिव्यक्ति, रीति की संज्ञा दी जाती है।[1] कवि गुलाब के प्रबंधकाव्यों में अनेकानेक शैलियों को अपनाया गया है। यथा --

(1) अन्तर्विश्लेषणात्मक शैली -- **अहल्या**
(2) नाटकीय शैली -- **कच-देवयानी**
(3) वर्णनात्मक शैली -- **आलोक-वृत्त**
(4) अलंकृत अथवा कलात्मक शैली -- **उषा**।

(1) प्रबंध का काव्य-रूप-निर्णय

गुलाब जी के प्रबंधकाव्यों की संख्या चार है --
(क) **उषा**
(ख) **कच-देवयानी**
(ग) **अहल्या**
(घ) **आलोक-वृत्त**

(क) उषा : प्रबंधकाव्य का काव्य-रूप

उषा एक प्रबंधकाव्य है, क्योंकि आदि से अन्त तक इसमें एक कथा की धारा प्रवाहित हो रही है जिसका संक्षिप्त परिचय इस शोध-प्रबंध के द्वितीय अध्याय (द्वितीय खण्ड) में दिया जा चुका है।

1- द्रष्टव्य '**आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों का शिल्प-विधान**' डॉ0 श्यामनन्दन किशोर, पृ0 154। (9वां अध्याय)।

उषा का महाकाव्यत्व'

उषा प्रबंध-काव्य के महाकाव्यत्व पर विचार करने से पूर्व हमारा ध्यान महाकाव्य के लक्षणों की तरफ जाता है, जिसकी अनिवार्यता भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्रियों ने आवश्यक समझी है। इस शोध-प्रबंध के द्वितीय अध्याय (द्वितीय खण्ड) के अन्तर्गत महाकाव्य के लक्षणों पर विचार किया जा चुका है। [1]

निश्चय ही गुलाब जी का प्रबंध-काव्य **उषा** अपनी विविधताओं के सन्दर्भ में पूर्णतः न तो शास्त्रीय लक्षणों के आधार पर रचित है और न एकदम अशास्त्रीयता का आग्रही है। महाकाव्य के शास्त्र-सम्मत स्थूल लक्षणों को धारण करनेवाले प्रबंध भी महाकाव्य कहे गये हैं और आज के ऐसे प्रबंध भी, जिनमें प्राचीन लक्षणों का पूर्णतः अथवा अंशतः निषेध है, महाकाव्य कहे जाते हैं। इसका कारण यह है कि हमेशा लक्षण-ग्रंथों को सामने रखकर ही लक्ष्य-ग्रंथों की रचना नहीं होती है। उदाहरणार्थ **कामायनी** एवं **उर्वशी** की रचना लक्षण-ग्रंथों के ध्यान में रखकर नहीं की गई। यद्यपि इन महाकाव्यों की कथा पौराणिक है, तथापि मनोविज्ञान की प्रतीकात्मकता एवं सर्ग-विभाजन आदि के कारण इनका अपना विशिष्ट महत्त्व है। प्राचीन महाकाव्यों की तुलना में आज के महाकाव्य बिलकुल नवीन हैं। प्रतिपाद्य-विषय एवं रचना-शैली, दोनों दृष्टियों से **कामायनी** एवं **उर्वशी** में नवीनता अधिक है। इसलिए इन महाकाव्यों तक पहुँचते-पहुँचते महाकाव्य का स्वरूप भी बदल जाता है।[2] छायावादोत्तर प्रबंधकाव्यों में परिवर्तन की यह दिशा और भी स्पष्ट है। वस्तुतः, यह परिवर्तन आकस्मिक एवं अस्वाभाविक नहीं है।[3] निष्कर्ष यह कि लक्षणों के निर्वाह के बिना भी कोई कृति महाकाव्य कहलाने की अधिकारी है और कोई लक्षणों से पूर्णतः युक्त होकर भी महाकाव्य नहीं कहला सकती है यथा दिनकर का **कुरुक्षेत्र** और मैथिलीशरण का **जय भारत** क्रमशः ऊपर के

1- महाकाव्य के लक्षण इस अध्याय में इसलिए नहीं दिये जा रहे हैं कि अलग से (स्वतंत्र रूप में) इस पर विचार द्वितीय अध्याय (द्वितीय खण्ड) में हो चुका है। वहाँ महाकाव्य, प्रबंध-काव्य, मुक्तक-काव्य एवं खण्ड-काव्य के स्वरूप (छायावादोत्तर) पर विचार किया जा चुका है। शोधकर्त्ता की दृष्टि में पुनरावृत्ति से बचना ही अभिष्ट है :-

2- 'काव्य-रूपों का मूल स्रोत एवं उनका विकास : 'डॉ0 शकुन्तला दूबे, पृ0 79

कथन के उदाहरण हैं। पहला प्रयोग की एक नवीन दिशा का उद्‌बोधक महाकाव्य है और दूसरा शास्त्रीयता एवं विशालता को लेकर भी निष्प्राण-सा प्रतीत होता है। अतएव महाकाव्यों के शास्त्रीय मूल्यांकन की तीन श्रेणियाँ मानी गई हैं [1] --

(1) लक्षणोन्मुख महाकाव्य (शास्त्रसम्मत महाकाव्य) -- इस श्रेणी के प्रबंधों में पुरातन लक्षणों के निर्वाह की कोशिश की गई है।

(2) विकासोन्मुख महाकाव्य (मिश्र महाकाव्य) -- इसमें पुरातन और अधुनातन का सम्मिलित रूप है।

(3) प्रयोगोन्मुख महाकाव्य (नूतन महाकाव्य) -- इस श्रेणी के महाकाव्यों में प्रयोगशील नवीनता का आग्रह है, तथा यह आग्रह इतना बढ़ा हुआ है कि परम्परागत लक्षणों का लगभग निषेध-सा ही हो गया है।

उपर्युक्त तीनों श्रेणियों के आलोक में **उषा** महाकाव्य का मूल्यांकन आवश्यक है। भारतीय एवं पाश्चात्य साहित्य-शास्त्रियों में महाकाव्य की स्वरूपगत विशेषता की दृष्टि से अंतर मिलता है। फिर भी गहराई में जाने पर यह स्पष्ट होता है कि दोनों तरह के विचारकों के लक्षण महाकाव्य की महनीयता को ही अधिक से अधिक प्रश्रय देना चाहते है। गुलाब जी के **उषा** महाकाव्य का मूल्यांकन प्राचीन और आधुनिक दोनों मान्यताओं के आधार पर होना चाहिए, क्योंकि कवि और उसके काव्य पर प्राचीन के साथ-साथ आधुनिक काव्यधारा का भी प्रभाव पड़ता है। अतएव, हम **उषा** के महाकाव्यत्व का निर्णय करने के लिए समन्वित दृष्टि का आश्रय लेते हैं और उसके एक-एक पहलू पर अलग-अलग विचार करते हैं।

(1) - महाकाव्य का कथानक भारतीय साहित्य-शास्त्रियों के अनुसार ऐतिहासिक, पौराणिक अथवा प्रख्यात होना चाहिए --

इस दृष्टि से जब हम **उषा** का परीक्षण करते हैं तो पाते हैं कि **उषा** की कथा ऐतिहासिक अथवा लोकप्रसिद्ध नही है। उसकी कथावस्तु कल्पित है जिसे जीवन में घटनेवाली घटनाओं के अनुकूल प्रस्तुत किया गया है। जीवन में

1- 'शिल्प-विधान का विकास काव्य-धारा के अनुरूप होता है और प्रत्येक कवि, प्रत्येक युग अपने लिये भिन्न-भिन्न कोटियों के शिल्प का निर्माण करता है।' ---- 'आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों का शिल्प-विधान' -- डॉ0 श्यामनन्दन किशोर, पृ0 118

2- 'छायावादोत्तर प्रबंधकाव्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन' : डॉ0 दीनानाथ सिंह, शोधप्रबंध, अप्रकाशित, पटना विश्वविद्यालय, सन् 1972

घटनेवाली घटनाएँ संदिग्ध नहीं कही जा सकती हैं। अतः जो कार्य प्रख्यात कथावस्तु से संभव है, उसी कार्य को कवि गुलाब ने काल्पनिक कथा से प्रस्तुत किया है और तत्समान रस-स्थिति उत्पन्न कर दी है। अतः इसकी कथा के विषय में किसी प्रकार का दोषारोपण नहीं किया जा सकता है। आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने **उषा** की कथावस्तु पर टिप्पणी करते हुए लिखा है -- 'आधुनिक युग में कथाबंध के आधार पर बने काव्य में सबसे पहले श्री रामनरेश त्रिपाठी ने स्वच्छन्दता दिखायी। पर उनके कथाबंध लघुकाय हैं। वृहत्काय या महाकाय कथाबंध में वस्तु (कथा) गत स्वच्छन्दता दिखाने का साहस हिन्दी के परम स्वतंत्र प्रातिभ को भी नहीं हो सका। यद्यपि कामायनी में अन्यापदेश की रहस्यात्मक स्थिति निर्माता ने स्वीकार की है, पर उसके वृत्त को अपनी ओर से ऐतिहासिक या ख्यात ही घोषित किया है, रहस्य को गौण ही माना है, अप्रस्तुत ही कहा है। इसलिए इस क्षेत्र में पूर्ण स्वतंत्रता से प्रविष्ट होने का साहसपूर्ण पदन्यास एक प्रकार से प्रतीक्षित था। यही कार्य आधुनिक हिन्दी-काव्य-धारा में हमारे सुपरिचित प्रातिभ श्री गुलाब ने अपनी प्रस्तुत कृति में किया है।' [1] श्रद्धेय श्री मिश्र जी की यह धारणा गुलाब के आलोच्य प्रबंधकाव्य को नवीन प्रयोग के रूप में प्रस्तुत करती है।

प्राचीन धारणा के अनुसार महाकाव्य का नायक कोई देवता या धीरता और उदात्तता से युक्त कोई ऐतिहासिक पुरुष होना आवश्यक है। नायकत्व की दृष्टि से भी **उषा** एक अभिनव महाकाव्य है। नवीन काव्य-शिल्प में अन्य क्षेत्रों की तरह महाकाव्य के नायकत्व में भी नवीन दृष्टिकोण प्रस्तुत किये गये हैं। **उषा** नायिका-प्रधान प्रबंध है। नयी काव्यधारा में सामाजिक यथार्थ और मनोविश्लेषण को लेकर महाकाव्य के प्राचीन निकष को अमान्य कर दिय गया है। **उषा** के पुरुष-पात्र (प्रभात और राजीव) उषा की अपेक्षा दुर्बल प्रतीत होते हैं। दोनो पुरुष-पात्रों से कोई शाश्वत संदेश कवि नहीं दे पाया है। उषा का चरित्र महाकाव्य के लिए बाधक नहीं है, वह उदात्त मानवीय गुणों से युक्त है। अतः चरित्र की दृष्टि से **उषा** प्रयोगोन्मुख महाकाव्य के अन्तर्गत आता है।

आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र **उषा** महाकाव्य के रचयिता श्री गुलाब खंडेलवाल के इस नये प्रयोग को स्वच्छन्दतावाद की हठधर्मिता नहीं मानते हैं। उनकी दृष्टि में -- 'श्री गुलाब ने रूढ़ियों का बन्धन खोल दिया है नूतन उत्फुल्ल

1- 'उषा' , आर्शीवचन, पृ0 घ

विकास के लिये, पर परम्परा के काँटों को अपनी रक्षा के लिए बनाये रखा है।'[1] परम्परा के काँटो को बनाये रखने के लिए कविवर गुलाब ने सर्गबद्धता, चरित्र-योजना, रस-वैविध्य, अलंकृत भाषा, अवान्तर कथा, प्रकृति-चित्रण आदि पर ध्यान रखा है। सर्गो की संख्या बारह (12) है। अनतिदीर्घ कथानक में एक काल्पनिक प्रेम-त्रिकोण को आधुनिक जीवन-मूल्यों से सजाया गया है। उषा, राजीव और प्रभात के इस प्रेम-त्रिकोण में पाश्चात्य छाप हो अथवा नहीं, पर **कामायनी** की छाप स्पष्ट है। उषा के चरित्र में श्रद्धा का रूप झाँकी मारता है। उषा इस महाकाव्य की नायिका है। उसीके नाम पर काव्य का नामकरण हुआ है। विवाह से पूर्व प्रभात से प्रेम करनेवाली उषा विवाहित होकर पति राजीव के सुख के लिए आत्महत्या कर लेती है। उसका प्रेमी प्रभात भी उसके साथ समुद्र में कूद पड़ता है। इस प्रकार महाकाव्य की उपसंहृति त्रासद है। पूरे प्रबंधकाव्य में करुण रस की प्रधानता है। कहीं-कहीं श्रृंगार, रौद्र, वात्सल्य और वीररस का भी चित्रण है।[2]

भारतीय आचार्यो के अनुसार महाकाव्य में प्रकृति-चित्रण अनिवार्य है। इसलिए प्रभात, मध्याह्न एवं सायंकाल का वर्णन होना चाहिए। कवि गुलाब ने भी संध्या का बड़ा ही मनोहारी चित्र प्रस्तुत किया है ---

लहरों पर शतदल-सा जिसका पगतल छाया-प्रभ था
नील मधुप-माला-सा उर पर मेघोंवाला नभ था
कर रवि-दीप जल रहा जिसमें एक उदास शलभ था
गूँथ किरण-कच चली अरुणिमा, उड़ता पट-सौरभ था। [3]

गुलाब जी ने **उषा** महाकाव्य में अलंकृत शैली का प्रयोग किया है। लाक्षणिक शब्दावली का प्रयोग छायावाद की प्रमुख विशेषता है। छायावादी शैली का प्रभाव होने के कारण उपर्युक्त विशेषता **उषा** में भी विद्यमान है जिसे **उषा** महाकाव्य की आरम्भिक पंक्तियों से स्पष्ट किया जा सकता है ---

सुरसरि-तट पर जहाँ धरे खग-हार विनत-दृग-तारा
यमुना-सरस्वती-सी मिलती सांध्य तिमिर की धारा

1- उषा, पृ0 च

2- इस शोध-प्रबंध के तृतीय अध्याय (द्वितीय-खण्ड) के अन्तर्गत 'रस-निरूपण' में रसो के उदाहरण दिये गये हैं। शोधकर्त्ता की दृष्टि में पुनरावृत्ति से बचना ही अभीष्ट है

3- 'उषा', पृ0 2

एक किशोर युवक बैठा था तरु का लिये सहारा
पूर्णचन्द्र-सा सेवित फणि-सी लहरों की मणि द्वारा।

उषा महाकाव्य में मंगलाचरण तथा वस्तु-निर्देशन नहीं है। दो एक अवान्तर कथाएँ हैं, लेकिन उन्हें विस्तार नहीं दिया गया है। यथा, द्वीपवासिनी किरण की कथा और पड़ोसी द्वीप का आक्रमण। आधिकारिक कथा में श्रृंखला है, प्रेम-कथा के बहाने सामाजिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक तथा आध्यात्मिक आदि मानव-जीवन के विविध पक्षों का विश्लेषण कर दिया गया है। उषा के चरित्र में संघर्ष की पूर्णता है। कथानक के पूवार्ध में जो संघर्ष अपनी मनोवैज्ञानिक भूमिका रखता है, उत्तरार्ध में आदर्शवादी हो जाता है। सच तो यह है कि आदर्शोन्मुख यथार्थवाद को ध्यान में रखकर ही **उषा** की वस्तु की कल्पना की गयी है। प्रसंगानुकूल छंदो का प्रयोग हुआ है। इस तरह 'हृदय, बुद्धि के ऊहापोहों तथा जीवन, मरण, सुख, दुःख, संयोग, वियोग, नियति, पुरुषार्थ आदि गंभीर प्रश्नों पर कथा के भीतर कवि-सुलभ भावनात्मक दृष्टि से चिंतन की अमूल्य वैचारिक निधि बिखेर कर कवि की प्रतिभा निश्चय ही उषा को महाकाव्य के स्वर्ण-शिखर पर आरूढ़ कर सकी है।'' [1]

(ख) कच-देवयानी :-

उषा के मूल्यांकन के बाद गुलाब जी के छोटे प्रबंधों में सर्वप्रथम **कच-देवयानी** है। यह रचना कलेवर और शिल्प दोनों दृष्टियों से प्रबंध की कोटि में है तथा इसे लघु खण्डकाव्य माना जा सकता है। इसमें वृहस्पति-पुत्र कच और देवयानी (शुक्राचार्य की पुत्री) की कथा है, जिसका मूल स्रोत **महाभारत** है। गुलाब जी ने इसके स्रोत और कथ्य के सम्बन्ध में लिखा है ---

इसका कथानक महाभारत पर आधारित है। इस काव्य-रचना में मैंने कच और देवयानी के चरित्रों के पारस्परिक विरोध का निरूपण किया है। यह विरोध न केवल संस्कृति-गत और जातिगत है, बल्कि स्त्री-पुरुष की प्रवृत्ति और प्रकृति-गत भिन्नता का भी सूचक है। यही पारस्परिक विरोध पुस्तक के दोनों सर्गो में कच और देवयानी की संवेदनाओं और मनःस्थितियों के अलगाव को

1- 'उषा' प्राक्कथन, महाकवि सुमित्रानन्दन पंत, पृ0 ख

चित्रित करता है।' [1] गुलाब जी ने लिखा है **कच-देवयानी** के प्रणयन द्वारा स्वयं को छायावाद और प्रगतिवाद के विवादों से बचाकर मैं एक स्वच्छन्द काव्यधारा की ओर उन्मुख हुआ। उस समय या तो छायावादी गीतों का बोल-बाला था या प्रगतिवादी कविताओं का। मैने हिन्दी-काव्यधारा को प्रंवध की ओर मोड़ने का प्रयास किया।' [2] इससे स्पष्ट होता है कि **कच-देवयानी** में कवि ने प्रबंध-शिल्प का प्रयोग किया है, जिसके कारण यह एक खण्डकाव्य का रूप प्राप्त कर सका है।

कच-देवयानी का खण्डकाव्यत्व

खण्डकाव्य के लक्षणों का विवेचन प्राचीन काव्य शास्त्रियों ने महाकाव्य की अपेक्षा कम किया है। **कच-देवयानी** के खण्डकाव्य पर विचार करने से पूर्व हमारा ध्यान खण्डकाव्य के लक्षणों की तरफ जाता है। इस शोध-प्रबंध के द्वितीय अध्याय (द्वितीय खण्ड) के अन्तर्गत् खण्डकाव्य के लक्षणों पर विचार किया जा चुका है। खण्डकाव्य के लिए भी दो प्रकार के लक्षणों की चर्चा की गई है '(क) स्थायी लक्षण (ख) औपचारिक अथवा अस्थायी लक्षण। स्थायी लक्षणों में कथानक, चरित्र, सर्ग, नामकरण, रस आदि उल्लेखनीय हैं और अस्थायी में मंगलाचरण, वस्तुनिर्देश, सर्गान्त में छंद-परिवर्तन, प्रकृति-चित्रण प्रभृति आलोच्य होते हैं।'[3] लक्षणबद्ध खण्डकाव्यों के सही मूल्यांकन के लिए इन्हीं दोनों लक्षणों के निकष की अनिवार्यता है।

कच-देवयानी खण्डकाव्य का कथानक महाभारत पर आधारित है ; अतः पौराणिक और लोक-विश्रुत है। कविराज विश्वनाथ ने खण्डकाव्य में एक-देशीयता [4] पर बल दिया है। तात्पर्य यह कि खण्डकाव्य की कथा एक स्थल पर केन्द्रित होनी चाहिए। **कच-देवयानी** में घटनाओं का विस्तार नहीं है। इसका एकमात्र घटनास्थल शुक्राचार्य का आश्रम है। देवयानी का कच के प्रति आकर्षण, प्रणयनिवेदन और कच की कर्त्तव्य-निष्ठा को प्रदर्शित करते हुए कथा को समाप्त

1- 'कच-देवयानी' ,भूमिका, पृ0 3

2- वही, पृ0 3

3- 'छायावादोत्तर प्रबंध काव्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन' : डॉ0 दीनानाथ सिंह, शोध-प्रबंध (अप्रकाशित)

4- 'साहित्य-दर्पण, सप्तम् परिच्छेद, पृ0 329, द्रष्टव्य।

कर दिया गया है।

आलोच्य खण्डकाव्य में केवल दो चरित्र हैं ---

कच और देवयानी। देवयानी कच के प्रति आकर्षित है। वह प्रेम-दीवानी है, अतिशय भावुक है। उसके लिए उसका प्रेम ही सर्वोपरि है। कच का चरित्र इसके ठीक विपरीत है। वह प्रेम से अधिक कर्त्तव्य की महत्ता जानता है। इसीलिए देवयानी के प्रेम को अस्वीकृत कर देता है।

कच-देवयानी काव्य केवल दो सर्गो में विभाजित है। इसका नाम-करण काव्य के नायक और नायिका के नाम पर हुआ है। इस काव्य में मंगलाचरण की परम्परा का निर्वाह नहीं किया गया है।

महाकाव्य के लिए वीर, श्रृंगार और शान्त में से किसी एक रस की प्रधानता और शेष रसों का गौण रसों के रूप में समावेश आवश्यक बताया गया हैं। पर खण्डकाव्य के लिए ऐसी अनिवार्यता नहीं है। इसमें किसी एक रस की प्रधानता होनी चाहिए। **कच-देवयानी** में श्रृंगार-रस की प्रधानता है। यहाँ रसों का वैविध्य नहीं दिखाई पडता है। इस खण्ड-काव्य में वस्तु-निर्देश नहीं है। स्थान-स्थान पर कथा को स्पष्ठ करने के लिये नये छंदों को जोड़ा गया है।[1] प्रकृति की सुषमा की तरफ भी कवि ने कहीं-कहीं संकेत दिया है, लेकिन प्रकृति का आलम्बन-गत चित्रण नहीं है। इस काव्य में अधिकांश स्थानों पर प्राकृतिक उपमान और रूपक प्रस्तुत किये गये हैं। इस प्रकार आलोच्य काव्य खण्डकाव्य की दृष्टि से सफल है।

अहल्या का खण्डकाव्यत्व

गुलाब जी के **अहल्या** प्रबंधकाव्य को भी खण्डकाव्य की श्रेणी में रखा जा सकता है। यह काव्य पौराणिक कथानक पर आधारित हैं। इसकी कथा **वाल्मीकि-रामायण, अध्यात्म रामायण** और **रामचरितमानस** में मिलती है। अत : **अहल्या** की कथा पौराणिक एवं लोक-विश्रुत है। इस प्राचीन कथा में भी कवि गुलाब की मौलिकता स्पष्ट परिलक्षित होती है। कथा पुरानी होने पर भी इस रचना में भी कवि गुलाब जी की अपनी भंगिमा है। विभिन्न प्रसंगो में उनकी कला की विशेषता परिलक्षित होती है। गुलाब जी ने प्राचीन कथा में आधुनिक मनोवैज्ञनिकता के सामंजस्य जैसा कठिन कवि-कर्म इसमें अत्यन्त

1- 'कच-देवयानी' , गुलाब, भूमिका, पृ0 3

सहज ढंग से सम्पन्न किया है। पात्रों की अनुभूतियों एवं भावनाओं का चित्रण बहुत ही स्वाभाविक और हृदय-ग्राही है।' [1]

अहल्या खण्डकाव्य में मुख्य पात्र केवल अहल्या ही है। इसमें गौतम, इन्द्र, राम, दशरथ, कौशिक इत्यादि गौण पात्र हैं।

अहल्या खण्डकाव्य दो खण्डों में विभाजित है। इसका नामकरण नायिका के नाम पर हुआ है। इस काव्य में मंगलाचरण का निर्वाह नहीं किया गया हैं।

आलोच्य खण्डकाव्य का अंगीरस श्रृंगार है। यहाँ रसों का वैविध्य भी दिखायी पड़ता है। गौण रस के रूप में वीर और रौद्र का भी चित्रण मिलता है। इस खण्डकाव्य के द्वितीय खण्ड में कवि ने अहल्या के माध्यम से भक्ति-भावना का भी प्रदर्शन किया है।

आलोच्य खण्डकाव्य में अहल्या और गौतम की कथा मुख्य कथा है। इसके साथ-साथ अवान्तर कथा का भी नियोजन इस काव्य में किया गया है। यज्ञरक्षार्थ राम का कौशिक के साथ बक्सर के आश्रम में जाकर राक्षसों का संहार करना, अवान्तर कथा के अन्तर्गत ही आता है।

प्रस्तुत खण्डकाव्य में वस्तुनिर्देश नहीं मिलता है। सर्गान्त में छन्द-परिवर्तन का भी आग्रह नहीं है। प्राकृतिक सुषमा की तरफ कवि ने कहीं-कहीं संकेत किया है। न्यूनाधिक रूप से **अहल्या** का कलेवर खण्डकाव्य जैसा ही है।

(घ) आलोक-वृत्त का खण्डकाव्यत्व

आलोक-वृत्त गुलाब जी का एक प्रबंध-काव्य है। काव्य-रूप की दृष्टि से इसकी प्रबंधात्मकता खण्डकाव्य के अनुरूप है।

आलोच्य खण्डकाव्य 13 सर्गो में विभक्त है। इसमें महात्मा गांधी के जन्म से लेकर स्वाधीनता-संग्राम की कथा मार्मिक शैली में प्रस्तुत की गई है। स्वाधीनता-संग्राम का इतिहास बहुत व्यापक है। इस काव्य की कथ्यभूमि इतनी विस्तृत है कि इसे खण्डकाव्य की सीमा में समेट पाना काफी कठिन है। कवि गुलाब ने संपूर्ण काव्य में मुख्य-मुख्य घटनाओं को विवेकपूर्ण ढंग से नियोजित करके कथा को आगे बढ़ाया है।

1- 'अहल्या' , भूमिका, गंगाशरण सिंह, पृ0 5

गांधी-कथा के मार्मिक प्रसंगो की पहचान प्रबंध-कौशल को आकर्षक बना देती है। [1] **आलोक-वृत्त** की यह प्रबंधात्मकता महाकाव्य के लिए अधिक अनुकूल है। यह काव्य अनेक दृष्टियों से महाकाव्य के अनुरूप है ---

(1) इस काव्य में सर्गो की संख्या बहुत अधिक है। इसमें 13 सर्ग हैं, जो प्रबंध के कलेवर को महाकाव्य की तरह व्यापक बना देते हैं।

(2) खण्डकाव्य का बहुचर्चित तत्त्व एकदेशीयता है। इस काव्यकृति में इसका निर्वाह नहीं हो सका है। महान पुरुष के व्यापक जीवन के विशाल कथा-पट को अपना लेने से एकदेशीयता को घात पहुँचना स्वाभाविक है। महात्मा गांधी भारत के ही नहीं, अपितु विश्व के युग-पुरुष बन गये हैं। इस उदात्त दृष्टिकोण को प्रस्तुत करने के कारण खण्डकाव्य का उपर्युक्त दोष बहुत कुछ समाप्त हो जाता है।

(3) आलोच्य खण्ड-काव्य में मुख्यपात्र के रूप में महात्मा गांधी का ही चरित्र प्रस्तुत किया गया है। किन्तु इसमें अनेक गौ पात्रों, कस्तूरबा, नेहरू, पटेल, राजेन्द्रबाबू और महात्मा गांधी के पिता इत्यादि की भी योजना है।

(4) इस खण्डकाव्य की कथा महात्मा गांधी के जीवन और स्वतंत्रता-संग्राम पर आधारित है। अतः इसकी कथा ऐतिहासिक एवं लोक-प्रख्यात है।

(5) **आलोक-वृत्त** खण्डकाव्य में रसों की विविधता है। इसका प्रधान रस शांत है। श्रृंगार, रौद्र, वीर इत्यादि गौण रसों की भी योजना है।

निष्कर्षतः, **आलोक-वृत्त** को एक विशाल खण्डकाव्य कहा जा सकता है। वर्ण्य-विषय के स्रोत की विशालता ही इसके लिए उत्तरदायी है।

1- 'प्रबंध-रचनाओं के भाव-पक्ष' के अन्तर्गत मार्मिक प्रसंगों की चर्चा की गई है।

(2) भाषा

किसी भी प्रबंधकाव्य की उत्कृष्टता का मूलाधार भाषा है, क्योंकि भाषा ही विचारों की वाहिका होती है। अच्छे शब्दों के सार्थक प्रयोग, मुहावरों की बहुलता, रस के अनुकूल रीति एवं गुण, मुख्यार्थ की अभिव्यक्ति के लिए शब्द-शक्तियों की योजना, बिम्बों एवं प्रतीकों की सुन्दर संरचना तथा नाद आदि के चमत्कार से भाषा की प्रभविष्णुता एवं सहज संप्रेषणीयता प्रकट होती है। भाषा की उपर्युक्त विशेषताओं की दृष्टि से गुलाब के प्रबंधों में भिन्न-भिन्न प्रयोग मिलते हैं। जैसे ---

(क) संस्कृत-गर्भित खड़ी बोली का प्रयोग **उषा** और **अहल्या** में हुआ है ---

अपलक दृग-नभ मधुपान्वेक्षी मुँदते सांध्य कमल-सा
वर्ह-पुच्छ या जल-पट-अंकित छाया-चित्र तरल-सा
शतधारा गिर रहा प्रतीची में मरीचि-द्रव जल-सा
सुरद्यनुषी घन-कनक-सेतु था आर-पार झलमल-सा।'[1]

अथवा --

आवर्त शून्य के जलद-पटल-सी खोल सघन
नव ज्योति इंद्र-द्यनु-शर-सी प्रतनु, अतनु-मोहन
माधवी-लता-सी फुल्ल, उल्लसित, दोलित-मन
उतरी नीले नभ के गवाक्ष पर से निःस्वन
क्षण-क्षण सहमी, सकुचाती।' [2]

(ख) महाकवि निराला की तरह तत्सम शब्दों की बहुलता तथा लम्बे-लम्बे सामासिक शब्दों की प्रचुरता से सम्पन्न संस्कृत-निष्ठ भाषा का भी प्रयोग गुलाब जी के प्रायः सभी प्रबंध-काव्यों **उषा, कच-देवयानी, अहल्या,** तथा **आलोक-वृत्त** में मिलता है।

उषा, कच-देवयानी, अहल्या, एवं **आलोक-वृत्त** में तत्समता है, पर दुरूहता नहीं है। **उषा** हिन्दी-महाकाव्य है लेकिन इसमें संस्कृत के शब्दों का प्रयोग अधिक हुआ है। **उषा** के कुछ तत्सम शब्द इस प्रकार हैं ---

दृग, प्रतीची, मरीचि-द्रव, वर्ह-पुच्छ (पृ0 1) व्योम-विभाये, पूर्णिमा, नग्न, कुंकुम, गिरि, स्मित, ग्रीवा, विधु-लेखा (पृ0 2), मृणाल, दुग्ध, चन्द्रिका, अरुण (पृ0 3), उपक्रम, भ्रुओं, स्वर्ण,मृदु (पृ0 4), विद्युत, ज्योत्स्ना, निशा, श्लथ, इन्द्र, मेघ-गिरा (पृ0 5), स्मृति, भ्रान्त, भव-चिंतार्णव, उडु-पति, कुसुम-कपोल, निष्कृति (पृ0 6), आकर्ण, बिंबाधर, तरुण, क्रीड़ा, कज्जल, ऊष्मा, उन्मत्त, पाथेय (पृ0 7), रक्तिम, तरणी, शून्य, तिमिर, ज्योति, अन्तः-सलिला (पृ0 8) उर्मियाँ, स्वर्णिम, कपिशा, उर्मिल, चिकुर, विभ्रम, सृष्टि-प्रलय, मधु-स्रोत (पृ0 9), चतुर्दिक, क्षितिज, अश्रु, रश्मि, (पृ0 10), भुज-पल्लव-अवगुंठन, मानस-मरु, अधर-सुधा, विश्रृंखल, रजनी, संसृति (पृ0 20) तम-आलकों, नीरव, अनंग, अतृप्त, अभिलाषा, संधि-पत्र, कमनीय, विस्मरण, सित, मेघ-खण्ड

1- 'उषा' , पृ0 1 2- 'अहल्या' , पृ0 1

(पृ0 27), अतीत, पीताभ, मलिन (पृ0 29), हिमावृत्त शैल-शिखर, मुक्तावलि, विधु-वदनी, तरु-कृषक, मध्याह्न, वृष-शस्य, सिरों (पृ0 28) वत्स, कोष, रिक्त, अस्ति-नास्ति, चंदन-चर्चित, स्वप्न-जड़ित (पृ0 118) गोधूली-पट, चन्द्रानन, नूपुर, मुर्च्छित, प्रभा, जलनिधि, शिखी (पृ0 128) आदि शब्द द्रष्टव्य हैं।

अहल्या खण्डकाव्य के कुछ उल्लेखनीय तत्सम शब्द इस प्रकार हैं ---

आवर्त, शून्य, जलद-पटल, तिर्यक्-तुरंग-दृग, अभंग, भ्रूभंग, कच-भृंगों, लावण्य-वसन-धृत, आत्मा-प्रदीप (पृ0 1), ज्योतिर्लेखा, अनाघ्रात, निर्मित, प्रतिकृति, संत्रस्त, जलधि, स्तवन, निद्रा (पृ0 2), अंबर, विकीर्ण, सुषमा, तप-शीर्ण, कुहावृता (पृ0 3) क्रुद्ध, कनक-पात्र, अतींद्रिय मृण्मयता, हिरण्य (पृ0 5) ज्योति-सायक, ऋतुपति, सुमन, उज्ज्वल, यशोदीप्त, कृश, उच्छ्वसित, ऊर्ध्व-ज्वाल, पुरुषोत्तम, तप-पूत, (पृ0 8) ब्राह्म, प्रज्जवलित, मयन, मुक्तालक, ज्योति-अयन, मुनि-पुंगव (पृ0 21) अभिशप्त, तप्त, अश्रुतुहिन, शतक्रतु, चरण-रेणु (पृ0 49)।

इसी तरह **कच-देवयानी** खण्डकाव्य के कुछ तत्सम शब्द द्रष्टव्य हैं -- सप्ताश्व-जुता, द्रुतगति, मन्त्रित, मख-शाला, मृगशिशु, पूर्णाहुति (पृ0 9) तुंग, गिरि-श्रृंगों, प्रतिनिमिष, साधना-सिद्धि, निस्पंद, विटप-बेलि (पृ0 10) जलधि, हिम-सरिता, अभिसार, राका-निशि, कंचुकी, मकरन्द, निस्पन्द (पृ0 13) समीर, अंचल, कंचन, निर्जन, कानन, अभिलाषा, हिमकर (पृ0 15), रोमांच, सहस्रों, आलिगंन, शैशव, सद्यःस्नाता (पृ0 16) कल्लोल, तनु-तन्त्री, सुरभित, आक्रोश, मौक्तिक-गृह, विस्मित (पृ0 19) खग-रव, उन्मीलित, भैरवी, ज्योति-छत्र, स्नेहाश्रम (पृ0 35) इत्यादि।

आलोक-वृत्त खण्डकाव्य के कुछ तत्सम शब्द इस प्रकार हैं -- अगम, अप्सरा, तड़ित, अतनु, अजिर, ज्योतिश्चरण, नक्षत्र (पृ0 1), अशनि-निपात, कुटिल, करतल, दशन, अमित, तापस-अस्थि (पृ0 2), सदृश, उन्मुक्त, अश्वों, भानु, आसेतुहिमगिरि, वीर-प्रसवा, चिर (पृ0 4), आयुध, विभूति, प्रस्फुटित, शिथिल, रक्तरंजित (पृ0 5), अम्लान, मुक्ति, (पृ0 31)।

सामासिक शब्दों से निर्मित पंक्तियों के उदाहरण विशेषतः **अहल्या** खण्डकाव्य में मिलते हैं ---

यथा --

'सुगठित भुज-पटट्, कपाट-वक्ष, स्मि-गौर-स्कंध
तनु तरुण भानु-सा अरुण, स्रस्त-तूणीर-वंध
दृढ़ जटा-मुकुट-शिर, कटि-तट मुनि पट धरे, अंध

प्रेमी के छल पर सलज, विहँस, उन्मद, सगंध
उर-सुमन प्रिया का फूला।' [1]

अथवा ----
धनु-शर-परिकर, शिर-मुकुट, पीत-पट, भृकुटि-वाम
शिंशुप-तनु, वृषभ-स्कन्ध, भुज-वल्लि-सरोज-दाम
मृदु-वय, किशोर, चित-चोर, युगल छवि गौर-श्याम
नव सिंह-कुमारों-सी निर्भय, मुनि-सँग ललाम
जिसने भी देखी जाती।' [2]

इस प्रकार कवि गुलाब के सभी प्रबंधकाव्यों (**उषा**, **कच-देवयानी**, **अहल्या**, **आलोक-वृत्त**) में संस्कृत-निष्ठता भरी है। **उषा** की भाषा अत्यन्त प्रौढ़ भावानुसारिणी है। उसमें छायावाद की लाक्षणिकता दिखायी पड़ती है। 'मौलिक उपमाओं, उत्प्रेक्षाओं, लाक्षणिकता तथा बिंब-विधान आदि के कारण इस काव्य में छायावाद के सर्वोत्तम उपकरणों का प्रचुर मात्रा में उपयोग हुआ है और उनमें कवि की मौलिक काव्य-दृष्टि के कारण नये आयाम उदित हुए हैं।'[3]

(ग) विविध शब्द-प्रयोग -- (विदेशज)

कविवर गुलाब ने **आलोक-वृत्त** नामक खण्ड-काव्य में विविध प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है। राजनीतिक, सामाजिक आदि परिस्थितियों के प्रभाव के कारण **आलोक-वृत्त** खण्डकाव्य में अरबी, फारसी, तुर्की और अंग्रेजी आदि विदेशी भाषाओं का भी विपुल प्रयोग मिलता है। यथा ---

अरबी भाषा के शब्द --- कफन (पृ0 39), बंदूक (पृ0 54), तूफान (57), हौंसले (165), ताज (पृ0 66), बाग़ (पृ0 78) कत्लेआम (पृ0 40), मसीहा, (पृ0 43), माफ (पृ0 47), उफ् (पृ0 29)।

फारसी के शब्द --- जंजीर (पृ0 114), संगीन (54), दीवानों (पृ0 57), विस्तर, बंदी (पृ0 60), अंदाज (पृ0 66), रिश्ता (पृ0 70), नमाज (पृ0 61), दाग (पृ0 48)।

1- 'अहल्या' पृ0 23
2- वही, पृ0 40
3- 'उषा', प्राक्कथन, पृ0 ख, सुमित्रानन्दन पंत।

तुर्की के शब्द --- कुर्क (पृ0 55), तोप (पृ0 55)
अंग्रेजी के शब्द --- रेलों, ट्रामों (पृ0 47) पुलिस (पृ0 24)

(घ) भाषा-संगीत

यद्यपि भाषा की गेयता गीति-काव्य की अनिवार्यता है, तथापि प्रबंधकाव्यों में भी धार्मिक प्रसंगों की अनुकूलता के लिए, प्रेमाभिव्यक्ति के लिए, श्रृंगार निरूपण के लिए, चरित्र की भावात्मक अभिव्यक्ति के लिए तथा विशेषकर विरह-वर्णन के लिए प्रबंधकार गीत-योजना का विधान करता है। द्विवेदी-युगीन प्रभावों से पूर्ण मैथिली-शरण गुप्त के **साकेत** महाकाव्य का नवम् सर्ग इस संदर्भ में विशेष उल्लेखनीय है।

यशोधरा खण्डकाव्य में भी गुप्त जी ने गीतात्मक प्रसंगों की उद्‌भावना की है।

छायावादी कवियों के लिए यह एक विशेष प्रवृत्ति के रूप में द्रष्टव्य है। प्रसाद के **आँसू** और पंत के **'ग्रंथि** खण्डकाव्यों में भाषा-संगीत का सफल प्रयोग हुआ है। **कामायनी** महाकाव्य में प्रसाद की संगीतात्मक काव्य-कला इस प्रबंध की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता मानी जाती है।

न्यूनाधिक रूप से गुलाब खण्डेलवाल भी छायावादी काव्य-शैली और भाव-शिल्प के ही कवि हैं, अतः इनके प्रबंधकाव्यों में भाषा-संगीत की प्रचुरता है।

गुलाब जी के प्रबंधों से भाषा-संगीत के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं --

उषा ---

(1) **'मैं अमाँ की एक विस्मृत तान**
चंद्रिका जिसकी नहीं, जिसका न स्वर्ण विहान

दूर मुझसे सिंधु के दो कूल
नाव-सी मँझधार में आकर गई पथ भूल
सो चुके स्वर विफल करते अर्थ का संधान
मैं अमाँ की एक विस्मृत तान।' [1]

1- 'उषा' , पृ0 50

(2) 'वे अंग, बिछलती हो जिन पर
कमनीय तरलता लहरों की
चंद्रिका बनी मादक कितनी
रजनी के पिछले प्रहरों की।
सित मेघ-खंड-सा हृदय कहीं,
उड़ता जाता था दूर-दूर
विस्मरणभरा अवसाद-लोक
चेतना जहाँ थक चूर-चूर।' [1]

अहल्या

'डोले सुगंध से अंध भ्रमर, मधुऋतु आयी
तारक-द्वीपों में दीप-मालिका-सी छायी
अमरत्व निछावर, यौवन ने ली अँगड़ाई
तप-शीर्ण युगों से हृदय-कली पा अलसायी
मुनियों ने आँखें खोलीं।' [2]

आलोक-वृत्त

(1) 'प्रिय की अनुगामिनी, कामिनी, पावन शोभावाली
नयी कोपलों से मंडित जैसे रसाल की डाली
सदियों से खोयी स्वतंत्रता ज्यों स्वदेश में आयी
मोहन के सँग नव-परिणीता ज्यों कस्तूरीबाई।' [3]

(2) 'घोर निराशा में आशा की वीर टेरते तान चले
तम-तमाल पर तरुण तरणि का जैसे किरण-कृपाण चले
विद्युत-वाहित अयस्कांत-से मुट्ठी में ले प्राण चले
दूर अफ्रिका से भारत तक रचते नया विधान चले।' 4

- 'उषा' , पृ0 27 2- 'अहल्या' , पृ0 3
- 'आलोक-वृत्त', पृ0 8
- वही, पृ0 31

(3) मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ

कवि गुलाब के प्रबंध-काव्यों की भाषा में मुहावरे एवं लोकोक्तियों के प्रयोग विशेषकर मिलते हैं ; किन्तु ये स्थूल और वाच्यार्थ प्रधान न होकर अत्यन्त ही लाक्षणिक तथा सांकेतिक हैं ---

उषा :-

1- 'स्मृति में इन सुखमय घड़ियों की केवल कर मलना है।' (पृ0 6)
2- 'देख रहे लोहित दृग फाड़े ये पल्लव के प्रहरी' (7)
3- 'कर्ता कोई नहीं सुने जो, अश्रु पोंछने आये' ? (10, पृ0)
4- 'कुछ दिन तक फूला फिरता था, हृदय किसीका होकर' (पृ0 11)
5- 'साँसों में भर साँस, आँख में आँखे डाल उलझती' (पृ0 12)
6- 'फूला न चकोर समाता हो' (पृ0 27)
7- 'जिसकी दुर्धर्ष प्रतिज्ञा, पानी की लकीर' (पृ0 39)
8- 'पलक झुकती आँखें पा चार' (पृ0 63)
9- 'रहा कबसे चरणों को चूम (पृ0 65)
10- 'भीत बालू की न पर मन की अनन्य प्रतीति !
'मोह मुँहदेखा जहाँ का, आखँ देखी प्रीति।' (पृ0 70)
11- 'याचना क्यों करे कोई दीन घुटने टेक।' (पृ0 72)
12- 'देखती हूँ किंतु मैं तो ढोल में बस पोल' (पृ0 73)
13- 'पार्श्वचर पीछे छुटे मुँह देखते' (पृ0 82)
14- 'कहाँ शरण ? यदि मोड़ वही अपना मुँह लेंगे'। (पृ0 12)
15- 'जीवन तो बस एक दाँव हारे या जीते,
आये मुट्ठी बाँध, चले युग कर ले रीते' (पृ0 127)
16- 'गाँठ जोड़ ली जीवन की' (पृ0 55)

कच-देवयानी

1- 'यह गंध नहीं बन हँसी उड़े' (पृ0 30)
2- 'ओसों से प्यास बुझा तुम तो जा रहे प्रात के तारे-से'(पृ0 54)
3- 'जीवन की धूल उड़ाओ मत' (पृ0 52)
4- 'मैंने घर फूँक दिया अपना' (पृ0 59)
5- 'होगा काँटों की सेज कठिन

तारे गिन-गिन सूनी रातें' (पृ0 63)
6- 'तुझको यों आपा खोना था' (पृ0 67)

अहल्या --

1- चेतना हाथ मलती थी' (पृ0 14)
2- 'ये प्राण प्राण के, जी के जी, दृग के तारे' (पृ0 37)
3- ''अब रहा न तेरी पावनता में मीन-मेष' (पृ0 42)

आलोक-वृत्त --

1- 'फिर रहे थे हाथ मलते' (पृ0 14)
2- 'पर ये दोनों तो बस उनकी आँखो के तारे थे' (पृ0 36)
3- 'जितने मुँह उतनी बात, न कोई सका जान' (पृ0 41)
4- 'वे दिन ढलते रिक्त लौटते अपना-सा मुँह लेकर' (पृ0 54)
5- 'बिस्तर बाँध विदेशी उस दिन चुपके-से प्रस्थान करेंगे' (पृ0 60)
6- 'लगे थे नेत्र वर्धा पर सभी के' (पृ0 63)
7- 'कि कैसे आग पानी में लगी थी' (पृ0 65)
8- 'मधुर मुस्कान के पीछे छुरी थी' (पृ0 65)
9- 'अंग्रेजों के छक्के छूटे' (पृ0 68)
10- 'महानाश से लोहा लेने जैसे नव निर्माण चले' (पृ0 29)
11- 'सब एक दूसरे का मुँह तकते रहे मौन' (पृ0 48)
12- 'हर रण से पाँव उखड़ते थे, सब पासे उलटे पड़ते थे।
13- 'जब पानी गुजर गया सर से' (पृ0 68)
14- 'बापू ने सीना तान दिया' (पृ0 70)
15- 'विरोधी हैं खड़े कंधा मिलाये' (पृ0 77)
16- 'चुप देख रहे थे तारे आँखे फाड़-फाड़' (पृ0 49)

(4) वर्ण या रंग

प्रकृति-चित्रण जब 'आलम्बन-रूप' में होता है, तो कवि प्रकृति को विभिन्न रंगो या वर्णो मे देखता है। कभी-कभी वह नायक-नायिका के सौन्दर्य-वर्णन में विभिन्न रंगों अथवा वर्णो की सूक्ष्म अभिव्यक्ति करता है। इसलिए प्रकृति अथवा नायिका के रूप-वर्णन में नाना प्रकार के रंगो का वर्णन हो जाता है। गुलाब जी के प्रबंध-काव्यों में इस प्रकार के चित्रण का वैविध्य है। यथा ---

उषा :-

उषा में संध्या के मानवीकरण के रूप में विविध रंगों का उल्लेख हुआ है ---

(1) **लहरों पर शतदल-सा जिसका पगतल छाया-प्रभ था**
नील मधुप-माला-सा उर पर मेघोंवाला नभ था
कर-रवि-दीप, जल रहा जिसमें एक उदास शलभ था
गूँथ किरण-कच चली अरुणिमा, उड़ता पट-सौरभ था।[1]

यहाँ जल की लहरों पर संध्या की अरुणिमा शतदल के समान प्रतीत हो रही है, आकाश के बादल संध्या के वक्षस्थल पर 'नीले' मधुपों की माला की तरह सुशोभित हो रहे हैं।

निम्न पंक्तियों में रजनीबाला के मानवीकरण के प्रसंग में कवि ने विभिन्न रंगो की योजना की है ---

पहन नील घन-वसन विरहिणी रजनी बाला
नभ-गवाक्ष से झुकी निरखती थी पथ काला
चितवन चकित चतुर्दिक हिम-तारों की झलकें
लहराती थी स्मृति-लहरों में कज्जल अलकें।[2]

यहाँ रात्रि के नीले घन-वसन, काला रंग, और कज्जल अलकों का चित्रण आलम्बन विभाव के अन्तर्गत हुआ है।

कवि ने **उषा** महाकाव्य में नायिका के सौन्दर्य वर्णन में भी रंगों की योजना प्रस्तुत की है। यथा ---

नत चंपक पलकें ज्यों विधु पर तितली बैठ लजाई
नील वसन से फूट रही थी तनु की स्वस्थ गुराई।[3]

यहाँ नायिका उषा की चंपक पलकों, नीले परिधान, एवं गोरे रंग का वर्णन है। उषा के अधरों की अरुणिमा को निम्न पंक्तियों में चित्रित किया गया है ---

---

1- 'उषा' , पृ0 2 2- 'उषा', पृ0 115
3- वही, प10 2

पारे-सा चल वक्ष, अधर की अरुण पँखुरियाँ प्यासी[1]

नायिका '**उषा**' की आँखों का रंग निम्न पंक्तियों में देखा जा सकता है-

नयनों की नील गहनता में यौवन का आकुल ज्वार छिपा।[2]

उषा के भाल, और साड़ी का रंग नीचे द्रष्टव्य है ---

गौर भाल पर गैरिक बिँदिया, कृश कटि, पीन उरोज
ज्यों विधु में रवि-उदय देखकर बढ़े सनाल सरोज
केसरिया साड़ी में लिपटी तनु-सुषमा सुकुमार
पीछे नागिन लटें झूमती, आगे हीरक-हार।[3]

प्रभात के सौन्दर्य वर्णन में भी रंगों की योजना है —

गौर वदन पर बिखर रहे कुछ कुंचित श्यामल केश
मेघमयी प्राची में पूनों के हिमकर-सा वेश।[4]

यहाँ प्रभात के गोरे वदन पर, काले केशों का चित्रण है।

कच-देवयानी :-

कच-देवयानी खण्डकाव्य के अन्तर्गत नायिका देवयानी के सौन्दर्य-वर्णन में कवि ने रंगों की योजना की है। यथा ---

कौतूहल-बुद्बुद फूट रहे नीले नयनों के कोनों से।[5]

यहाँ देवयानी की आँखें नीले रंग की है। देवयानी की अलकों का काला रंग निम्न पंक्तियों में चित्रित है --

खुल व्यस्त लजीली ग्रीवा से श्यामल अलकें छू भूमि रहीं।[6]

1- वही, पृ0 3
2- 'उषा' , पृ0 13
3- वही, पृ0 34
4- वही, पृ0 32
5- 'कच-देवयानी' , पृ0 13
6- 'कच-देवयानी', पृ0 18

देवयानी के चरणों का रंग लाल है ---

नूपुर वह कितना धन्य, आह ! जो पीता चरणों की लाली।[1]

आलोच्य खण्डकाव्य में कवि ने अम्बर, बादल इत्यादि को भी नीले रंग से चित्रित किया है ---

अम्बर का रंग --

(1) **सहसा नीले अम्बर-पथ पर चलते-चलते विधु-यान रुका।**[2]

(2) **जल भरती विद्युत-बाला-सी नीली-नभ-सरिता के तट पर।**[3]

बादल का रंग :-

मैं नील जलद-प्राचीरों से बिजली-सी बाहर कढ़ आयी। [4]

अहल्या :-

अहल्या खण्ड काव्य में अहल्या के सौन्दर्य-वर्णन-प्रसंग में कवि ने रंग-योजना प्रस्तुत की है। यथा ---

लावण्य-वसन-धृत, गौर गुलाबी अंगों में
आत्मा-प्रदीन की बाती। [5]

उक्त पंक्तियों में अहल्या के गुलाबी अंगों का चित्रण है। अहल्या के सौन्दर्य-वर्णन विविध रंगों से भरपूर है ---

लोचन काले मृगशावक-से डह-डह, अडोल
काजल रेखांकित गोरे, गोल, कपोल लोल। [6]

यहाँ अहल्या की काली-काली आँखे और गोरे कपोलों का चित्रण है।

अहल्या खण्डकाव्य में आकाश को नीले रंग से चित्रित किया गया है। यथा ---

---

1- 'कच-देवयानी', पृ0 26 2- वही, पृ0 15
3- वही, पृ0 31 4- वही, पृ0 22
5- 'अहल्या' , पृ0 1 6- वही, पृ0 18

उतरी नीले नभ के गवाक्ष पर से निःस्वन
क्षण-क्षण सहमी सकुचाती।[1]

आलोक-वृत्त

आलोक-वृत्त खण्डकाव्य में रंगों की योजना बहुत कम है। यहाँ प्रकृति-चित्रण एवं सौन्दर्य-वर्णन नाम मात्र के लिए है। फिर भी रंग-योजना कहीं-कहीं दिखलायी पड़ जाती है। कवि ने भारतीय और अंग्रेजों को क्रमशः श्याम और गौर रंग में चित्रित किया है :--

श्याम-गौर के बीच न अब भ्रम की कल्पित दीवार थी।[2]

भय की भावना को काली छाया के रूप में कवि ने चित्रित किया है। यथा --

(1) रेंग रही इतिहास-फलक पर इसकी काली छाया
दूर अनागत पर भी इसने अपना जाल बिछाया। [3]

(2) गहनतम होती गई थी घन तमिस्रा श्यामता की
ज्योति जितनी ही प्रखर गोरे कपोलों पर खिली थी
कालिमा उतनी सघन थी
श्याम पलकों के तटों पर।[4]

बादल का रंग भी निम्न पंक्तियों में द्रष्टव्य है ---

(1) श्यामल घनमाला में बिजली ज्यों कड़क उठे। [5]

(2) नीली घनमाला में छिपकर
यह कौन गगन से रही उतर[6]

ऊपर की पंक्तियों में बादल को क्रमशः काले और नीले रंगों में चित्रित किया गया है।

1- वही, पृ0 1
2- 'आलोक-वृत्त', पृ0 28
3- वही, पृ0 17
4- वही, पृ0 22
5- वही, पृ0 47
6- वही, पृ0 67

निष्कर्षतः, पारम्परिक रंग या वर्ण के प्रस्तुतीकरण से अधिक गुलाब जी ने उक्त प्रबंधों में रंगों का मौलिक, रसात्मक, सौन्दर्यपूर्ण तथा उत्तेजक वर्णन किया है।

(5) गंध की संवेदना

गुलाब जी ने अपने प्रबंध - काव्यों में गंध की संवेदना पहचानी है। उषा महाकाव्य में गंध की संवेदना निम्न स्थलों पर मिलती है ---

यह अलकों की गंध जुही-सी श्वास तृषित पी लेंगे
इस लावण्य-मृदुल-मुख के सौ चुबंन एक बनेंगे।[1]

यहाँ प्रभात को उषा की अलकों से जुही की गंध मिलती है। उषा भी कवरी पुष्प की मदिर सुगंध की अनुभूतियों से भर जाती है ---

स्मृति-सा दूरागत पवन उड़ा कवरी की मदिर सुगंध गया। [2]

कच-देवयानी खण्डकाव्य के अन्तर्गत देवयानी को कच से मिलन के समय आनांदानुभूति के मादक क्षणों में गंध की संवेदना होती है ---

यह गंध नहीं बन हँसी उड़े पगली कोकिल चुप ही रहना
मैं फूल रही माधवी-लता मलयानिल धीरे-से बहना। [3]

कच से शुक्राचार्य का सम्बन्ध फूल और गंध की तरह है --

कुक्षिस्थ रहा था मैं उनके जैसे फूलों में गन्ध मधुर
भावना मात्र ही नहीं, देवि ! शोणित का है सम्बन्ध निठुर[4]

अहल्या खण्डकाव्य में अहल्या के आगमन से फूल प्रफुल्ल हो उठते हैं, भ्रमर गंध से अभिभूत हो उठते हैं ---

डोले सुगंध से अंध भ्रमर, मधुऋतु आयी
तारक-द्वीपों में दीपमालिका-सी छायी।[5]

आलोच्य खण्डकाव्य में कामदेव के प्रभाव से संपूर्ण जंगल सुगंध से भर उठता है --

वन-वन सुगंध के बौर मौर से गये फूल। [6]

1- 'उषा' , पृ0 11
2- वही, पृ0 24
3- 'कच-देवयानी' , पृ0 30
4- वही, पृ0 54
5- 'अहल्या', पृ0 3
6- वही, पृ0 13

(6) नाद-व्यंजना अथवा अनुरणनात्मकता

भारतीय तथा पाश्चात्य आचार्यों ने काव्य को मुख्यतः चाक्षुष्य न कहकर श्रव्य अथवा श्रावणिक कहा है।[1] इसका मूल कारण है कि काव्य में नाद-संगीत की प्रधानता होती है। शब्दों की ध्वनि के द्वारा ही अर्थ-सिद्धि की प्राप्ति होती है। यही कारण है कि ध्वन्यात्मक शब्दों के द्वारा नाद-व्यंजना या अनुरणनात्मकता उत्पन्न की जाती है। ध्वन्यात्मक शब्दों की रचना में अनुप्रास (Alliteration) तथा ध्वनिचित्र (Onomotopoia) की अपरिहार्य अवश्यकता होती है। कभी-कभी शब्द-विन्यास की पुनरावृत्ति से भी नाद उत्पन्न होता है। गुलाब जी के प्रबंधों में नाद व्यंजना के भिन्न-भिन्न उदाहरण मिलते हैं। जैसे -- उषा महाकाव्य से नाद-व्यजंना के दो उदाहरण उल्लेखनीय हैं ---

(1) **वह मनुहार ! हँसी वह खिलखिल ! वंक भ्रुओं की घातें !**[2]

(2) **तम सुदूर पुर, नूपुर-सी वन-झिंगुर-झाँझें-बजतीं**
पगतल पर नागिन-सी लहरें फण फुफकार गरजतीं।[3]

ध्वन्यर्थ-व्यंजना का एक और सुंदर उदाहरण **उषा** से द्रष्टव्य है ---

डग्-डग् ब्रह्मांड, खगोल खसे
दिग्गज चिंघाड़ रहे भय से
धक-धक त्रिनेत्र, गज-अजिन कसे।[4]

उषा प्रबंध-काव्य के निम्नलिखित उदाहरणों में शब्दों की आवृत्ति से नाद-व्यंजना को उपस्थित किया गया है --

(1) **ओ मन की हलचल ठहर, ठहर**
मेरे जीवन में बिखर रहे
सुख-दुख की गिन लूँ लहर-लहर[5]

---

1. George Whalley : Poetic process --" when I said that poetry was sonic rather tha visual, I meant that poetry was most suitably to be apprehended by ear, that the patterns, resonances and rhythms of poetry will scarcely stand forth unless the ear is engaged."
--page 193, chap X (music and rhythm)

2- 'उषा', पृ0 4। 3- वही, पृ0 9।
4- 'उषा' , पृ0 96।

(2) गुंजित हैं जिनसे प्रहर-प्रहर[2]
(3) जीवन के तट पर छहर-छहर[3]
(4) बढ़ती अनन्त में हहर, हहर
ओ मन की हलचल ! ठहर-ठहर।' [4]

कच-देवयानी खण्ड काव्य से ध्वन्यर्थ-व्यंजना के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं ---

(1) कौतूहल-बुद्‌बुद फूट रहे नीले नयनों के कोनों से। [5]

(2) कुंजों में कुसुम-समूहों में पगली-सी बन खिलखिला उठे।[6]

(3) संकेत पढ़ा करता था मैं जिसके सरिता की कल-कल में। [7]

उक्त तृतीय उदाहरण में गति-संकेत के लिए शब्दों की पुनरावृत्ति के द्वारा ध्वनि-चित्र कवि ने उपस्थित किया है।

अहल्या खण्डकाव्य में ध्वन्यार्थ व्यंजना के सुंदर उदाहरण मिलते हैं। यथा ---

(1) 'दीपक-सी भुक्-भुक् करती।' [8]

(2) 'दृग-तारों से छलके छल-छल आँसू कज्जल।' [9]

(3) 'हिम-ताप-विकल पावस कितने दृग से झर-झर'[10]

इसी तरह 'आलोक-वृत्त' में भी ध्वन्यर्थ-व्यंजना उदाहरणार्थ हैं ---

---

1- 'उषा', पृ0 113
2- 'उषा', पृ0 113
3- वही, पृ0 113
4- 'उषा' , पृ0 113
5- 'कच-देवयानी' , पृ0 13
6- वही, पृ0 23
7- वही, पृ0 25
8- 'अहल्या' , पृ0 4
9- वही, पृ0 12
10- वही, पृ0 14

'घटा अनुदिन नयी घहरा रही थी
झकोरे नाव जल में खा रही थी।'[1]

(7) बिम्ब-विधान

आधुनिक साहित्य में (विशेषकर काव्य में) बिम्ब का साधारण अर्थ मूर्त रूप प्रदान करना है। सौंदर्यशास्त्रीय अथवा कलात्मक अनुभूतियों को चित्रबद्ध कर देना, प्रतिबिम्बित कर देना अथवा मूर्तरूप प्रदान करना ही बिम्ब-विधान कहलाता है। अंग्रेजी में बिम्ब के लिए 'इमेज' शब्द आता है। 'इमेज' के भी कोषगत अर्थ वही हैं, जो 'बिम्ब' के हैं। व्यापक अर्थ में सम्पूर्ण कविता ही एक पूरा बिम्ब है।' [2] काव्य में बिम्ब-विधान का बहुत महत्त्व होता है, 'क्योंकि बिम्ब-निर्माण ही भाषा को वह शक्ति प्रदान करता है जिसके फलस्वरूप मनुष्य अज्ञात को ज्ञात से, अगोचर को गोचर से, अप्रत्याशित को प्रत्याशित से, अपरिमेय को परिमेय से तथा अपार्थिव को पार्थिव से सम्बन्धित कर उन्हें मानव-ग्रहण-शक्ति की परिधि में ला सकता है।' [3]

बिम्ब-संरचना के लिए कल्पना और स्मृति की अनिवार्य आवश्यकता होती है।[4] 'बिम्ब का सीधा सम्बन्ध उपमा, रूपक आदि सादृश्यमूलक अलंकारों से है, लेकिन मूलतः बिम्ब का धर्म उनसे भिन्न है। 'प्रत्येक बिम्ब वर्ण्य को इस रूप में प्रस्तुत करता है कि वह उसका समग्र रूप किसी विशिष्ट इन्द्रिय के बोध के आधार में प्रत्यक्ष कर सके, लेकिन उपमा, रूपक का कर्तव्य-कर्म केवल सादृश्य

---

1. आलोक-वृत्त' , पृ0 63
2. The image is the constant in all poetry and every poem is itself an image." -- C.D. Lewis," The poetic Image", page 17, 6th Edition 1951, Jonathan cape. Thirty Bedford square, London.
3- काव्यात्मक बिम्ब-प्रो0 अखौरी ब्रजनन्दन प्रसाद, पृ0 57, प्रथम संस्करण, प्रकाशक ज्ञानलोक, पटना-4
4. Images are conscious memories which reproduce a previous perception in whole or in part, in the absence of the original stimulus to the perception." E.B. Ltd. London 1768, Encyclopedea Britannica, vol. 12. page 103.

(ख) 'बिम्ब-विधान कला का क्रिया-पक्ष है, जो कल्पना से उत्थित होता है।' -- डॉ0 कुमार विमल, 'सौंदर्यशास्त्र के तत्त्व', पृ0 201, प्रथम संस्करण 1967

कथन मात्र है, सादृश्य के आधार पर वर्ण्य का मानस-प्रत्यक्षीकरण नहीं।'[1]

'छायावाद' का काव्य-शिल्प अतिशय बिम्बमूलक रहा है। कविवर गुलाब के प्रबंध-काव्यों का शिल्प न्यूनाधिक रूप से छायावादी ही है। इसीलिए विम्ब के सभी प्रकार चाक्षुष विम्ब (Visual image) श्रावणिक बिम्ब (Auditary image) स्पर्श-सम्बन्धी (Tectual image), घ्राण-विषयक बिम्ब (Olfactory image)तथा रसना-विषयक बिम्ब (Gustatory image)[4] किसी-न-किसी प्रकार गुलाब के प्रबंधों में मिल जाते हैं। जैसे --

(क) 'उषा' से चाक्षुष बिम्ब के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है --

(1) संध्या-घन-अंचल में हँसता
कर फैला लघु नक्षत्र एक
ऊषा स्वप्निल निरखा करती
खिड़की पर करतल युगल टेक। [3]

(2) सिहर-सा उठा विकल राजीव
दृगों से गिरा अश्रु की बूँद
देर तक रही तलहथी गौर
अलक सहलाती, पलकें मूँद।[4]

(3) यह कौन खड़ी उदयाचल पर ?
भर रही तारकों की गागर
संध्या-सी प्राची में निःस्वर
वह पहने हीरक-हार कौन ?
इस पार कौन ? उस पार कौन ?[5]

(4) काजल-रेखांकित सित कपोल
वेणी नागिन-सी रही डोल

1- 'छायावाद का काव्य-शिल्प' , डॉ0 प्रतिमा कृष्णबल, पृ0 277 I4
2- रसना-विषयक-बिम्ब का उदाहरण गुलाब के प्रबंधों में नहीं मिलता है।
3- 'उषा'', पृ0 24 4- 'उषा' , पृ0 62
5- वही, पृ0 99

उठ गिरता वक्षस्थल-हिँडोल।[1]

ऊपर के उदाहरण सौंदर्यमूलक चाक्षुष बिम्ब के हैं। उत्साहमूलक गत्यात्मक चाक्षुष-बिम्ब का एक उदाहरण द्रष्टव्य है --

दिख पड़ा कुछ दूर पर ही सामने
अरि-कनक-ध्वज एक टीले पर गड़ा
तीर-सा राजीव आ द्रुत नाव से
कूद एकाकी उसे लेने बढ़ा।[2]

अत्यन्त ही चित्रात्मक चाक्षुष बिम्ब **उषा** में इस प्रकार हैं ---

(1) झिलमिल गोधूली-पट में
खिलखिल हँसती इठलाती
रजनी चन्द्रानन से थी
तम का घूँघट सरकाती।[3]

(2) जलनिधि उन्मत्त शिखी-सा
लहरों के पंख उठाये
नूपुर पर नाच रहा था
झुक-झुककरदायें-बाँये।[4]

कच-देवयानी खण्डकाव्य से चाक्षुष बिम्ब के दो उदाहरण इस प्रकार हैं ---

(1) आश्रम के कुंज-कुटीरों से
कुछ आगे तिरछी झुकी हुई
स्वर्गगा विद्युत्-सलिला-सी
हेमाद्रि-शिखर पर रुकी हुई।[5]

(2) तितली-सी सँग-सँग उड़ न गयीं
पाकर भी पलकों की पाँखें

1- उषा, पृ0 82
2- वही, पृ0 128
3- 'उषा' , पृ0 128
4- वही
5- 'कच-देवयानी' , पृ0 36

अब दीन-मीन-सी तड़प रहीं
रो-रो जलहीन हुई आँखें।[1]

कच-देवयानी खण्ड-काव्य से ही सौन्दर्यमूलक चाक्षुष बिम्ब का एक उदाहरण प्रस्तुत है --

पिछले घन की लट खोल खडी
विलगाती हीरक-हारों से
बिजलियाँ नहाती हैं जिसके
आँगन में रजत-फुहारों से।[2]

अहल्या खण्डकाव्य से गत्यात्मक चाक्षुष बिम्ब का एक सार्थक उदाहरण --

तरणी ज्यों डाँड़-विहिन क्षुब्ध जलनिधि-तल में
चक्कर खा धँसती ही जाती हो पल-पल में
चेतना डूबती मेरी मुझमें, मैं जल में।[3]

इसी खण्डकाव्य से सौन्दर्यमूलक चाक्षुष बिम्ब का उत्कृष्ट उदाहरण इस प्रकार है --

आँखों में काजल की गहरी रेखा आँकी
वेणी में गूँथे सुमन, भाल बिंदी टाँकी
ओंठों पर क्रीड़ामयी, जयी, मृदु स्मिति बाँकी
करुणा की करवट, अरुणिम तरुणाई झाँकी
भौंहें साँपिन-सी डोलीं।[4]

आलोक-वृत्त से भी चाक्षुष बिम्ब के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं ---

(1) हँस-हँसकर अंगारे चुगते शशि की और चकोर चले
जैसे घन-पाहन-वर्षण में पर फैलाये मोर चले।[5]

(2) कटि-तट पर कंचन-कलश धरे
विष और अमृत के पात्र भरे

1- 'कच-देवयानी', पृ0 71
2- 'कच-देवयानी' , पृ0 27
3- 'अहल्या', पृ0 4
4- वही, पृ0 47
5- वही, पृ0 71

नीली घनमाला में छिपकर
यह कौन गगन से रही उतर।[1]

(ख) स्पर्श सम्बन्धी बिम्ब -- 'स्पर्श-सम्वंधी विम्व अप्रस्तुत रूप में स्पर्श-विषयक विशिष्ट अनुभूति को स्पष्ट कर उसके आश्रय से वर्ण्य विषय के समग्र प्रभाव को मूर्तिमन्त कर देते हैं।' [2] गुलाब जी के **अहल्या** और **कच-देवयानी** खण्डकाव्यों में इसके उदाहरण मिलते हैं। यथा ---

(1) 'शशि-भुजपाशों से ज्योत्स्ना-सी अँगडाई ले जो भाग गई।'[3]

(2) तन काँप रहा था तिनके-सा बिजली को भुजपाशों में भर।'[4]

अहल्या खण्डकाव्य से स्पर्श-बिम्ब के दो उदाहरण निम्नलिखित हैं ---

(1) 'पट-अस्त-व्यस्त जैसे सरिता के लोल लहर
ढीले भुजबंधन से हँस निकली प्रिया सिहर।'[5]

(2) 'कसमस कंचुकी, काँपता झीना लज्जांशुक
भींहें लगतीं बल खाने।' [6]

(ग) घ्राण-विषयक बिम्ब :-- 'गंध-विषयक वर्णन, अप्रस्तुतों के आश्रय से वर्ण्य-विषय की घ्राणविषयक अनुभूतियों को उभारकर, उसके समग्र प्रभाव को मूर्तिमन्त करते हैं।' [1] इस तरह के बिम्ब **अहल्या** खण्डकाव्य में मिलते हैं। यथा --

(1) 'डोले सुगंध से अंध भ्रमर, मधुऋतु आई
तारक-द्वीपों में दीपमालिका-सी छाई।'[7]

1- 'आलोक-वृत्त', पृ0 85
2- छायावाद का काव्य-शिल्प, डॉ0 प्रतिमा कृष्ण बल
3- ''कच-देवयानी' , पृ0 37 4- वही, पृ0 70
5- 'अहल्या', पृ0 3 6- वही, पृ0 13
7- 'छायावाद का काव्य-शिल्प' : डॉ0 प्रतिभा कृष्णबल, पृ0 289।

(2) **वन-वन सुगंध के बौर मौर से गये झूल**
चोरों से भौंरें, पौरों से खिल उठे फूल[1]

(घ) श्रावणिक बिम्ब -- नाद-व्यंजना-प्रंसग के समस्त उदाहरण श्रावणिक बिम्ब के हैं, 'क्योंकि ध्वनि-चित्र, अलंकार, वर्ण-विन्यास-वक्रता एवं अनुप्रासगत वर्णवृत्तियाँ आदि इसके प्रमुख साधक हैं।' [2] विस्तार-भय के कारण उदाहरणों की पुनरावृत्ति ठीक नहीं होगी।

(ड) रसना-विषयक बिम्ब -- रसना-विषयक बिम्व के उदाहरण गुलाब के प्रबंधकाव्यों के अन्तर्गत नहीं मिलते हैं। उनकी विशेष चर्चा मुक्तक-काव्यों में बिम्ब-योजना के अन्तर्गत होगी।

(च) मिश्र बिम्ब (मिश्रित बिम्ब) --- **अहल्या** खण्डकाव्य से मिश्रित बिम्ब का एक उदाहरण द्रष्टव्य है ---

खग-खगी चोंच में चोंच दिये कामातुर से
तरु-बेलि-केलि-रत, सहज सुवेष्ठित उर-उर से
गाता रसाल पर नर-कोकिल पंचम सुर से
चौका देती जिसको क्षण-क्षण क्वण-नूपुर से
मंजर-मजीरित भ्रमरी।[3]

प्रारम्भ की दो पंक्तियों में रसात्मक चाक्षुष-बिम्ब और अंतिम दो पंक्तियों में नाद-विषयक (श्रावणिक) बिम्ब की योजना है। अतः, यह मिश्रित बिम्ब का उदाहरण है।

(8) अलंकार-योजना

कवि गुलाब के प्रबंधों में भारतीय और पाश्चात्य दोनों ही प्रकार की अलंकार-योजना दृष्टिगत होती है। इन प्रबंधों में अलंकारों की योजना सप्रयत्न नहीं की गयी है, बल्कि भाषा की शक्ति एवं उसके विभिन्न प्रयोगों के रूप में अलंकारों का विधान अनायास ही हो गया है। सच तो यह है कि गुलाब जी के प्रबंधों में परम्परानुमोदित अनेकानेक अलंकारों को छोड़कर उनके स्थान पर लाक्षणिक चमत्कार के द्वारा भाषा को अभिनव अर्थ प्रदान किया गया है। फिर

1- 'अहल्या' , पृ0 3 2- वही, पृ0 13
3- 'छायावाद का काव्य-शिल्प' : डॉ0 प्रतिभा कृष्ण बल, पृ0 286

भी प्राचीन अलंकारों की प्रचुरता इन प्रबंधों में है।

उषा : -- **उषा** महाकाव्य में गुलाब जी की रुचि सादृश्यमूलक अलंकारों में विशेष रूप से रही है। कहीं-कहीं तो इन्होंने उपमा, रूपक और उत्प्रेक्षा तीनों सादृश्य-मूलक अलंकारों की योजना एक साथ की है ---

उदित पूर्णिमा-सी थी सहसा सोने की परछांई
मेघ-अलक खोले बिजली-सी एक बालिका आई
नत चंपक पलकें ज्यों विधु पर तितली बैठ लजाई
नील वसन से फूट रही थी तनु की स्वस्थ गुराई।[1]

यहाँ पहली पंक्ति में उपमा, दूसरी में रूपक और उपमा तथा तीसरी पंक्ति में उत्प्रेक्षा अलंकार का नियोजन है।

उपमा-अलंकार

भूल गई वह प्रथम मिलन जब नभ के नील-नखत-सी
इन कुंजों में आई थी तुम लेकर हँसी रजत-सी।[2]

अथवा --
स्मिति चित्रित थी अधरों पर
पाटल पर हिम-रेखा-सी
बालुका-तीर पर सोई
द्वाभा की विधु-लेखा-सी।[3]

मालोपमा अलंकार

वह सजला यशोधरा-सी
इतिहास-पृष्ठ पर लेटी
परित्यक्त सती सीता-सी
धरती की दुखिया बेटी
उर्वशी अनंत विरह की

1- 'उषा', पृ0 2 2- 'उषा' , पृ0 4
3- वही, पृ0 130

वह दग्धा शकुंतला-सी
निष्ठुर नल की दमयंती
वह विधु की भग्न-कला सी। [1]

रूपक

कर रवि-दीप जल रहा जिसमें एक उदास शलभ था
गूँथ किरण-कच चली अरुणिमा, उड़ता पट-सौरभ था।[2]

या ---
शून्य निशा बन आऊँगी मैं, मन की बातें कहना
स्मृति-बयार बन जीवन-वन में आते-जाते रहना[3]

उत्प्रेक्षा

झुकती ज्यों आपाद मुकुलिता लता वंसतोद्गम में
स्वर्गंगा उतरी हो मानो गंगा के संगम में[4]

वीप्सा-अलंकार

गुंजित हैं जिनसे प्रहर-प्रहर
ओ मन की हलचल ठहर-ठहर।[5]

अथवा --
जीवन के तट पर छहर-छहर
ओ मन की हलचल ठहर-ठहर। [6]

1- उषा, पृ0 134
2- 'उषा' , पृ0 2
3- वही, पृ0 8
4- वही, पृ0 35
5- वही, पृ0 113
6- वही

अनुप्रास

विश्वास प्रेम का ! चंचल लहरों के समान
अनसमझ, अकारण, चिर-अनियंत्रित. अप्रमाण।[1]

विरोधाभास

तिरना जिसमें डूबना पहुँचकर बीच धार
विष अमृत, व्यथा वरदान, जलन शीतल तुषार।[2]

अथवा --
नव गणतंत्र-दिवस का दिशि-दिशि था अद्‌भुत उत्साह
वह स्वतंत्रता का आकर्षण, सुख का शीतल दाह।[3]

(2) कच-देवयानी

कवि को उपमा अलंकार के प्रति विशेष मोह है, जिसका प्रयोग 'कच-देवयानी' खण्ड काव्य में बहुत हुआ है। यथा ---

(क) सागर से मिलने भादों की मदभरी नदी-सी बढ़ आयी
मैं नील जलद-प्राचीरों से बिजली-सी बाहर कढ़ आयी।[4]

(ख) छायाकृति कँप कर मौन हुई जल में चंचल विधु-लेखा-सी
दृग के तारों से फूट चली पीड़ा की जलती रेखा-सी।[5]

मालोपमा अलंकार

अपनी ही खोई आत्मा-सी फणवाले नयनों के मणि-सी

1- 'उषा', पृ0 39
2- वही, पृ0 39
3- वही, पृ0 31
4- 'कच-देवयानी', पृ0 22
5- वही, पृ0 23

अति दूर विदेशी कुंजों की छाया में परिचित पिकध्वनि-सी
अस्पष्ट नयन-जल में तिरती दिख पड़ी भाग्य की रेखा-सी
वह मूर्ति अचल-शशि-शेखर के सिर चढ़ी शरद-शशि-लेखा-सी।[1]

रूपक अलंकार

(क) रोमांच सदृश मानस-सर में जो खिला सहस्रों कमल गया। [2]

(ख) सहसा नीले अम्बर-पथ पर चलते-चलते विधु-यान रुका। [3]

उत्प्रेक्षा

अलकें उड़ पलकों पर आती पर हास न वह निर्धूम रहा
कंचन की धरती पर मानो नीलम का पौधा झूम रहा। [4]

अनुप्रास

नयनों के जल से धरती के सरिता-सर-सागर भरती-सी। [5]

वीप्सा अलंकार

तनु-लता सिहरती थी रह-रह मूर्च्छित लिपटी तरु-माला से
जल-जल उठती हो ज्योति बुझी जैसे अपनी ही ज्वाला से। [6]

(3) अहल्या

उपमा

(क) ज्योतित लपटों-सी ग्रीवा, उड़ते चिकुर-जाल[7]

इस पंक्ति में प्रयुक्त उपमा सर्वथा नवीन है।

(ख) मंत्रित भुजंग-सी दीप्त चेतना सजल, मौन [8]

1- 'कच-देवयानी', पृ0 24
2- वही, पृ0 16
3- वही, पृ0 15
4- वही, पृ0 29
5- 'कच-देवयानी' , पृ0 68
6- वही, पृ0 72
7- 'अहल्या' , पृ0 9
8- वही, पृ0 46

ऊपर की पंक्ति में अमूर्त के लिए मूर्त उपमान की योजना है।

मालोपमा-अलंकार

शत यज्ञों की मूर्तित संसिद्धि, सफलता-सी
विजड़ित चपला-सी, अचपल दीपक-लतिका-सी
मुनि-पत्नी कौंध गई दृग में उज्ज्वलता-सी
मोती के पानी की अरुणाभ तरलता-सी
अंगों में भरे लुनाई। [1]

रूपक-अलंकार

(क) स्मिति-कण जो यौवन कनक-पात्र से रहे छलक
मैं जिन्हें देखती पथ पर रह जाती अपलक।[2]

(ख) उर-कुसुम समर्पण को आकुल हो बार-बार
दल पर दल खोल रहा था। [3]

उत्प्रेक्षा

कुंतल में पहली किरण भानु की अरुण-साज
थी बनी अयोध्या मानो सीमंतिनी आज।[4]

विरोधाभास

ये सिंहकुमारों-से निर्भय, वय के किशोर

1- 'अहल्या' , पृ0 15
2- वही, पृ0 5
3- वही, पृ0 8
4- वही, पृ0 31

लघु भी महान, चिर-धीर, वीर, कोमल, कठोर।[1]

वीप्सा-अलंकार

(क) 'सब अंग कदंब-कुसुम-से फूले सिहर-सिहर। [2]

(ख) 'पछताती-सी पग-पग पर रुक-रुक, ठहर-ठहर [3]

उत्प्रेक्षा

बक्सर के पावन सिद्धाश्रम तक आ सहास
सहसा ठिठके विस्मय से मृग ज्यों मुग्ध-पाश।[4]

अपह्नुति-अलंकार

यह कमल नहीं अंगार, अपरिवर्तित जिस पर
मैं चिर-अनादि से एकाशन शासन-तत्पर। [5]

संदेह-अलंकार

मैं कली ? सूँघ सब जिसे निमिष भर दें उछाल
मैं रत्न ? कि रख लें जिसको युग-युग तक सँभाल।
मैं जीवन तरु का मूल ? कि उसका आलबाल ?
मैं विष की प्याली हूँ ? कि अमृत से भरा थाल ?
हे वृद्ध पितामह ! बोलो [6]

1- अहल्या, पृ0 36
2- वही, पृ0 47
3- 'अहल्या', पृ0 24
4- वही, पृ0 7
5- वही
6- वही, पृ0 4

आलोक-वृत्त

उपमा

(क) तड़प रही थी जो मछली-सी प्रिय के उर से लग के
जाने कैसे मृगी विकल वह रही बिना निज मृग के।[1]

(ख) ऐसे तमोमय क्षितिज पर
उतरी किरण-सी भानु की। [2]

पूर्णोपमा-अलंकार

अज्ञान-महिषासुर-दलन दुर्गा-सदृश
उस वीर-प्रसवा देववंदित भूमि को,
आसेतु हिमगिरि उसी पुण्य-प्रदेश को
चिर-दासता के राहु ने था ग्रस लिया। [3]

उत्प्रेक्षा अलंकार

बातों ही बातों में उस पर चली काम की माया
चंद्र-ग्रहण के लिए राहु ने मानो कर फैलाया[4]

अनुप्रास

घोर निराशा में आशा की वीर टेरते तान चले

1- 'आलोक-वृत्त', पृ0 4
2- वही
3- वही, पृ0 13
4. वही, पृ0 133

तम-तमाल पर तरुण तरणि का जैसे किरण-कृपाण चले।[1]
प्रस्तुत उदाहरण में 'त' वर्ण और 'क' वर्ण की आवृत्ति हुई है, अतः अनुप्रास है।

काव्यलिंग और यमक-अलंकार

(क) किसे न कर देता तरुणी का भ्रू-विलास मतवाला
मन्मथ धन्य प्रमथ-नामक का जिसने मन मथ डाला

श्लेष-अलंकार

सरल विभव का त्याग, भस्म सर्वांग चिता की रचना
किन्तु कठिन है मृगनयनी के नयन-शरों से बचना।
इस उद्धरण के 'मोती' शब्द में श्लेष है, जिसका अर्थ मोती (रत्न) और पं0 मोती लाल नेहरू भी है।

(9) पाश्चात्य अलंकार[1]

पश्चिमी अलंकारों में तीन मुख्य हैं---
(क) मानवीकरण (Personification) (ख) ध्वन्यर्थ-व्यंजना (Onomotopoia) (ग) विशेषण-विपर्यय (Transferred epithet)। कवि गुलाब के प्रबंधों में इन तीनों अलंकारों के बहुत सारे उदाहरण मिलते हैं---
(क) मानवीकरण--कविवर गुलाब के प्रबंधों में मानवीकरण के उदाहरण अन्य अलंकारों की तुलना में कम नहीं हैं। प्रकृति के विभिन्न उपादानों को मानव की तरह क्रियाशील दिखाकर प्रबंधकार ने मानवीकरण की विभिन्न स्थितियाँ प्रस्तुत की हैं। (**उषा** महाकाव्य में संध्या का मानवीकरण इस प्रकार है---

अर्थहीन पुस्तक-से दिन का
पृष्ठ उलट जाती संध्या
वह सित-केशी, धूम-तारिका
वृद्धा, सुरदासी, वंध्या।[2]

उषा से ही संध्या के मानवीकरण का एक दूसरा चित्र द्रष्टव्य है---

लहरों पर शतदल-सा जिसका पगतल छाया-प्रभ था
नील मधुप-माला-सा उर पर मेघोंवाला नभ था

---

1. आलोकवृत्त, पृ0 31
2- 'आधुनिक हिन्दी कविता में अलंकार विधान' : डा0 जगदीशनारायण त्रिपाठी, पृ0 241
3. 'उषा', पृ0 21

कर-रवि-दीप जल रहा जिसमें एक उदास शलभ था
गूँथ किरण-कच चली अरुणिमा, उड़ता पट-सौरभ था।[1]

उषा महाकाव्य से रजनीबाला के मानवीकरण का चित्र प्रस्तुत है---

झिलमिल गोधूली-पट में
खिलखिल हँसती इठलाती
रजनी चंद्रानन से थी
तम का घूँघट सरकाती।[2]

कच-देवयानी खण्डकाव्य में देवयानी की स्थितियों का मानवीकरण इस प्रकार है---

नूपुर पहने थी नाच रहीं
उर्मिल सपनों की छाया में
आकुल सुख की स्मितियां चंचल
बेसुध अपनी ही माया में।[3]

कच-देवयानी में ही बिजली का मानवीकरण बहुत आकर्षक है--

पिघले घन की लट खोल खड़ी
बिलगाती हीरक-हारों से
बिजलियाँ नहाती हैं जिसके
आँगन में रजत-फुहारों से।[4]

अहल्या, खण्डकाव्य में पवन का मानवीकरण इस प्रकार हुआ है
झुक किया पवन ने स्तवन अलक-दोलों में तिर।[5]
इसी खण्डकाव्य से भ्रमरी का मानवीकरण द्रष्टव्य है---

---

1. 'उषा', पृ0 2
2. वही, पृ0 128
3. कच देवयानी, पृ0 11
4. वही, पृ0 37
5. 'अहल्या', पृ0 2

'चौंका देती जिसको क्षण-क्षण क्वण नूपुर से
मंजर-मंजीरित भ्रमरी।'[1]

आलोक-वृत्त खण्डकाव्य में क्रांति का नारी के रूप में मानवीकरण हुआ है---

कटि-तट पर कंचन-कलश धरे
विष और अमृत के पात्र भरे
नीली घनमाला में छिपकर
यह कौन गगन से रही उतर ![2]

(ख) ध्वन्यर्थ शब्दों के नाद द्वारा ही अर्थ की व्यंजना करने को ध्वन्यर्थ-व्यंजना कहते हैं। हमारे कवि के प्रबंधों में इसके बहुत ही उल्लेखनीय उदाहरण हैं।[3]
(ग) विशेषण-विपर्यय : काव्य में कथन को विशेष रूप से अर्थ-गर्भित तथा गंभीर बनाने के लिए विशेषण का स्थान-विपर्यय कर दिया जाता है। हमारे कवि के प्रबंधों से इसके कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं---

उषा :--
मुड़ो ! हाय, अब भी क्या बिगड़ा ! सिसक रहा उडुपति है।'[4]
सिसकना व्यक्ति का गुण है, उडुपति का नहीं। इसलिए यहाँ विशेषण-विपर्यय है।
अथवा---

पहली प्रेम-व्यथा अंतर के आर-पार चलती ज्यों
तट-तरु से मिल उर्मि तरुण सर्वस्व हार चलती ज्यों।[5]

यहां उर्मि के लिए 'तरुण' विशेषण का प्रयोग हुआ है। यह मनुष्य की विशेषता है, उर्मियों की नहीं।

---

1. 'अहल्या', पृ0 20
2. 'आलोक-वृत्त', पृ0 67
3. 'उषा', पृ00 6
4. वही, पृ0 9
5. 'कच-देवयानी', पृ0 46

कच-देवयानी

(1) देखो माधीवीलता मुड़मुड़
कहती है क्रुद्ध दिवाकर से
क्या प्रीति यही, तनु बेध रहे
तुम मेरा-ज्वालामय शर से ![1]

ऊपर की पंक्तियों में दिवाकर का क्रुद्ध होना बताया गया है, क्रुद्ध होना मनुष्य का गुण है, सूर्य का नहीं।

(II) प्रिय-वंचित छवि-भवनों में ज्यों
वंदी सौन्दर्य सिसकता हो।[2]

सिसकना व्यक्ति का गुण है, सौंदर्य का नहीं।

अहल्या

मुनि रहे आत्मकातरता में जल-जल निष्फल
फैला कपोल पर दोषी पलकों का काजल।[3]

ऊपर की पंक्ति में पलकों को दोषी कहा गया है, अतः विशेषण-विपर्यय है।

आलोक-वृत्त

सहसा सिहरन हुई धरा में, पतझड़ गया, वसंत हुआ
अँगड़ाई ले जगा अफ्रिका, काल-निशा का अंत हुआ।[4]

'सिहरना' व्यक्ति का गुण है, पृथ्वी का नहीं। अतः विशेषण-विपर्यय है।

---

1. 'कचदेवयानी', पृ0 53
2. 'अहल्या', पृ0 28
3. 'आलोक-वृत्त', पृ0 32
4. 'आधुनिक हिन्दी-महाकाव्यों का शिल्प-विधान'--डा0 श्यामनन्दन किशोर, (नवम् पृ0)

(10) छंद-योजना

'छंद कविता का चरण है, गति है और है उसके प्राणों का स्पन्दन। मन की ऐंठन, भावनाओं की उमड़न-घुमड़न जिस लय में प्रकट होती है--उसे ही छंद कहते है। यही कारण है कि छंद को कविता का संगीत कहा जाता है।'[1] इस तरह छंद का सम्बन्ध कविता की भाषा से अनिवार्यतः होता है, क्योंकि भाषा को वह एक मनोरम और प्रभावमयी गति देता है,उसके प्रवाह को लालित्य के साथ सुखद-सुन्दर बनाता है। 'छंद के कारण भाषा में सांकेतिकता और कमनीय कला-कुशलता से रखी हुई भाव-व्यंजना भी बढ़ जाती है।'[2] यही कारण है कि प्रत्येक कवि अपनी आवश्यकता और अभिरुचि के अनुसार छंदों का चयन करता है। किसी भी प्रबंधकार के लिए छंदचयन की समस्या गीतकार एवं मुक्तक-काव्य के रचनाकार से अधिक कठिन होती है, क्योंकि उसे रस-निर्वाह एवं भिन्न-भिन्न पात्रों के चरित्रांकन के लिए पात्रोचित मानसिकता और कालोचित अनिवार्यता के अनुकूल ही छंदों का चुनाव करना पड़ता है। महाकाव्य की संगति में छन्द-परिवर्तन की स्वीकृति देकर आचार्यों ने एक ही प्रबंध में कई छंदों के परिवर्तन की छूट दे दी। सच तो यह है कि प्रबंधों की विषय-वस्तुगत भिन्नताएँ तथा पात्रों की मनोविश्लेषणात्मकता, पात्रताएँ आदि के कारण छंद के विविध प्रसंग कवि गुलाब के प्रबंधों में मिलते हैं। कवि गुलाब के प्रबंधों में मात्रिक एवं वर्णिक दोनों प्रकार के छंदों का प्रयोग है। आलोक-वृत्त खण्डकाव्य में अतुकान्त छन्द के प्रति भी कवि ने रुचि दिखलायी है। छंद-योजना की इन विविधताओं को जानने के लिए उनके प्रबंधों का उल्लेख अनिवार्य है ---

(क) **उषा** --- महाकाव्य में कवि गुलाब ने हिन्दी-संस्कृत के शास्त्रीय छंदों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में किया है। उनके ये छंद निम्नलिखित हैं ---

सारछंद -- **उषा** प्रबंध-काव्य के प्रथम सर्ग में इस छन्द का प्रयोग हुआ है। इसमें 16, 12 की यति से प्रत्येक चरण में 27 मात्राए होती हैं। अन्त में एक या दो गुरु होते हैं। कवि ने इसकी यति में स्वच्छन्दता से काम लिया है। यथा --

---

1. 'छंद-शास्त्र' आचार्य प्रवर डॉ0 रमाशंकर शुक्ल 'रसाल', पृ0 13, प्र0 संस्करण।

सुरसरि-तट पर जहाँ धरे खग-हार विनत-दृग-तारा
यमुना-सरस्वती-सी मिलती सांध्य तिमिर की धारा
एक किशोर युवक बैठा था तरु का लिये सहारा
पूर्ण चन्द्र-सा सेवित फणि-सी लहरों की मणि द्वारा।[1]

सरसी छंद : -- इसका प्रयोग **उषा** महाकाव्य के तृतीय सर्ग में हुआ है। यह 27 मात्राओं का नाक्षत्रिक जाति का छंद है। इसके प्रत्येक बंद में 27 मात्राएँ होती हैं। यति 16-17 पर और अन्त में गुरु-लघु (51) पड़ने चाहिए। परन्तु कवि गुलाब ने यति के बंधनों को स्वीकार नहीं किया है। इसका एक उदाहरण द्रष्टव्य है --

मलयानिल कलियों में फिरता अलस, अधीर, अदृश्य
किसलय-किसलय में जीवन का चिर-कमनीय रहस्य
तितली के चित्रित पंखों पर बैठ समय-शिशु मौन
उड़ता जाता था अनंत में, उसे पकड़ता कौन !²

पादाकुलक छंद :- यह 16 मात्रिक संस्कारी जाति का प्रसिद्ध छन्द है। इसके प्रत्येक चरण में 16 मात्राएँ होती हैं और अन्त में गुरुवर्ण भी रखा जाता है। इसमें चार-चार मात्राओं के चौकल भी बनते हैं (4X4=16) यह छन्द माधुर्य के लिए प्रयुक्त होता है। इसका प्रयोग **उषा** महाकाव्य के द्वितीय सर्ग में हुआ है ---

नयनों की नील गहनता में
यौवन का आकुल ज्वार छिपा
अंचल में दीपक-सी झिलमिल
आत्मा का बिखरा प्यार छिपा।³

ताटंक

इसका प्रयोग कवि ने **उषा** के पंचम सर्ग में किया है। इसके प्रत्येक पाद में 30 मात्राएँ होती हैं। यहाँ यति 16-14 पर पड़ती है। अन्त में तीन गुरु होने

---

1. 'उषा' , पृ0 1
2. वही, पृ0 31
3. वही, पृ0 13

चाहिए पर अन्तवाला नियम कवि ने स्वीकार नहीं किया है --

दिन डूबा रजनी भी बीती,
आ फिर मलिन प्रभात गया
प्रतिक्षण का प्रति शब्द हृदय पर,
करता नव आघात गया।[1]

अथवा --

उषा प्रात जलनिधि-तट हँसती
उधर, सरोज सनाल धरे
इधर मंद होते दीपक-से
नयन किसीके स्नेहभरे।[2]

आँसू छंद

उषा के द्वादश सर्ग में यह छंद प्रयुक्त हुआ है। इसके प्रत्येक चरण में 14 मात्राएँ होती हैं। इसे सखी छन्द भी कहते हैं। इसके अन्त में यगण अथवा भगण होना चाहिए।

झिलमिल गोधूली-पट में
खिलखिल हँसती इठलाती
रजनी चन्द्रानन से थी
तम का घूँघट सरकाती।[3]

कच-देवयानी

कविवर गुलाब ने इस खण्डकाव्य की छंद-योजना पर प्रकाश डालते हुए लिखा -- 'प्रसाद जी की **कामायनी** के एक छंद विशेष का प्रयोग यद्यपि मैंने किया है, परन्तु अन्य बातों के अतिरिक्त मैंने जहाँ अमूर्त को भी मूर्त रूप में रखने का प्रयास किया है, प्रसाद जी मूर्त को भी अमूर्तरूप में प्रस्तुत

---

1. 'उषा'-, पृ0 49
2. 'उषा', पृ0 128
3. 'उषा', पृ0 128

करते हैं।'[1]

पादाकुलक छंद

श्रृंगार-रस से युक्त कच-देवयानी खण्डकाव्य में इस छन्द का प्रयोग गुलाब ने किया है। इसका एक उदाहरण द्रष्टव्य है --

कल की अनन्यता स्वप्न, आज
उलझन यह कैसी ले ली है !
क्षण-क्षण परिवर्तनशील हृदय !
सचमुच तू एक पहेली है।[2]

आलोक-वृत्त

आलोक-वृत्त खण्डकाव्य में कवि की अभिरुचि अतुकान्त छंदों के प्रति भी दिखायी पड़ती है। **आलोक-वृत्त** के प्रथम सर्ग में अतुकान्त छंद का प्रयोग हुआ है ---

इतिहास ---
जो अंकित हुआ था वृद्ध-तापस-अस्थि से दिव-पृष्ठ पर
जलयान ही जब चाहता था डूबना
बढ़ते निरंतर वृत्र-भुज-प्रलयाब्धि में,
इतिहास ---
जो रघुवंश भूषण के समुद्रोत्तरण का
था आदिकवि ने कनक वर्णों से लिखा,
इतिहास ---
जो कुरुक्षेत्र के रण-पीठ पर
अंकित हुआ था चक्र से धनश्याम के।[3]

सार छंद

आलोक-वृत्त के सप्तम सर्ग में इस छन्द का प्रयोग हुआ है ---

---

1. 'कच-देवयानी', भूमिका, पृ0 3।
2. वही, पृ0 41।
3. 'आलोक-वृत्त', पृ0 2-3।

ओ पथचारी ! जाग, देख सूरज सिरपर चढ़ आया
गिरि-गह्वर लाँघता काल का रथ कितना बढ़ आया !
तू अचेत ही रहा और सदियों पर सदियाँ बीतीं
जिस बाजी को हार गया तू वह औरों ने जीती।[1]

---

1. 'आलोक-वृत्त', पृ0 33।

पंचम अध्याय
अन्य कृतियों के भाव-पक्ष एवं कला-पक्ष

कविवर गुलाब के मुक्तकाव्यों का भाव-पक्ष

1. गुलाब के मुक्तक-काव्यों में रस-निरूपण

गुलाब के प्रबंधों की तरह उनके मुक्तक-काव्यों में भी रस-निरूपण की दो स्थितियाँ मिलती हैं :---

(क) परम्परानुमोदित तथा

(ख) परम्परा-मुक्त।

(क) परम्परानुमोदित रस-निरूपण

गुलाब के मुक्तक-काव्यों में इस प्रकार के रस-निरूपण का अभाव है। उनके मुक्तकों में रस-व्यंजना से अधिक भाव-व्यंजना पर ध्यान दिया गया है। फिर भी एक दो मुक्तकों में परम्परानुमोदित रस के उदाहरण मिल जाते हैं। निम्नलिखित मुक्तकों के उदाहरण परम्परानुमोदित रस-निरूपण के अन्तर्गत आते हैं ---

नूपुरबँधे चरण

इस मुक्तक काव्य में विभिन्न मनःस्थितियों को चित्रित करनेवाली कविताएँ हैं। इसमें 'हवा का राजकुमार और रात की रानी' (प्रतीक-काव्य), 'मृग-तृष्णा' और 'जादू का देश' (गाथा-काव्य) शीर्षक में परम्परानुमोदित रस के उदाहरण मिलते हैं। यथा ---

श्रृंगार-रस

हवा का राजकुमार और रात की रानी एक दूसरे को देखकर मुग्ध हो जाते हैं। रात की रानी राजकुमार के गले में वरमाला पहना देती हैं। दोनों के संयोग का चित्र बहुत ही आकर्षक रूप में प्रस्तुत किया गया है --

मधुर गंध की लपटें उठतीं घुली-मिली साँसों से
अधर पी रहे थे अधरों को झुक-झुक कर प्यासों-से
मृदुल मोम की पुतली-सी वह आलिंगन में घुलती
कितना सुख संग्रह कर पाती कंपित भुजपाशों से।[1]

---

1. 'नूपुरबँधे चरण', पृ0 26

यहाँ राजकुमार और रानी परस्पर एक दूसरे के लिए आलम्बन आश्रय हैं। दोनों का सौंदर्य उद्दीपन है। अधरों का अधरों से स्पर्श, आलिंगन, कंपित भुजपाश इत्यादि अनुभाव हैं। प्रच्छन्न 'हर्ष' संचारी भाव है। राजकुमार और रानी का एक दूसरे के प्रति 'रति' भाव स्थायी है।

रौद्र रस

क्रुद्ध उठा दानव कर मलता मानो यह सपना था
कढ़तीं ज्वाला-लपटें दृग से, भौं का धनुष तना था।[1]

यहाँ राजकुमार और रानी का मिलन आलम्बन है और दानव आश्रय। दोनों की 'अवज्ञा' उद्दीपन का कार्य कर रही है। आँखों से ज्वाला निकलना और भौं का तनना अनुभाव हैं। स्थायी भाव दानव का 'क्रोध' है।

भयानक-रस

पर्वत के शिखरों पर पर्वत उलट-उलट कर गिरते
लहरों पर पत्तों से थर-थर द्वीप-पुंज थे तिरते
महादेश कितने कट-कटकर जुड़े अन्य देशों में
रवि-शशि भीत विहग थे नभ में शरण ढूँढते फिरते।[2]

ऊपर की पंक्तियों में राजकुमार और दानव का भयंकर युद्ध आलम्बन है और रवि-शशि तथा विहग आश्रय हैं। इनका आकाश में शरण के लिए इधर-उधर फिरना अनुभाव है। स्थायी भाव रवि-शशि एवं विहगों का 'भय' है।

करुण-रस

नूपुरबँधे चरण शीर्षक मुक्तक-काव्य में कवि ने शोक-गीतियों का प्रणयन किया है। उनकी साढ़े तीन वर्ष की अल्पवय पुत्री शकुंतला की मृत्यु पर लिखे गये शोकगीत 'मेरा हृदय कुलिश-कठोर' में करुण-रस का उदाहरण मिलता है। यथा ---

मेरा हृदय कुलिश-कठोर
मृत्तिका-घट-सा न फूटा टूटते ही डोर

---

1. 'नूपुरबँधे चरण', पृ0 26।
2. 'नूपुरबँधे चरण', पृ0 27

वह चपलता, स्मित वदन का वह सरल उल्लास
वे सुधामय शब्द, जैसे स्वप्न का आभास
भूमि पर भी पग जिसे रखने न देता, हाय !
वही कोमल गात सिकता में दबाया जाय !
भग्न सर-सा साँस मैं भरता रहूँ दिन-रात
तोड़कर ले जाय कोई प्राण का जलजात[1]

यहाँ बन्धु-विनाश-जन्य करुण का उदाहरण है। पुत्री शकुंतला की मृत्यु से उत्पन्न शोक स्थायी भाव है। आश्रय कवि है। शकुंतला की स्मृतियाँ उद्दीपन हैं। 'हाय' ! इत्यादि शोक सूचक शब्द अनुभाव हैं तथा विषाद संचारी भाव है।

वात्सल्य-रस

निम्न पंक्तियों में वियोग वात्सल्य का एक चित्रण द्रष्टव्य है :--

वृद्ध गँवा आँखों की पुतली, अश्रु रहा था ढलका
मानों वरुण करुण हो सागर बहा रहा हो जल का।[2]

यहाँ पुत्री 'रात की रानी' की विदाई की घड़ी में उसका पिता दानव अश्रुसिक्त हो जाता हैं।

बलि-निर्वास (काव्यनाटक) आलोच्य काव्यनाटक का अंगी रस करुण है। श्रृंगार रस का भी चित्रण इस काव्य-नाटक में मिलता है। यथा ---

श्रृंगार-रस

इन्द्र के इन्द्रत्व से भ्रष्ट हो जाने पर दानवों के राजा बलि इन्द्र-पद पर आसीन होते हैं। ऐसी स्थिति में स्वर्ग की अप्सराएँ अपने प्रेमियों से वियुक्त हो जाती हैं। विरहवियुक्ता उर्वशी का कथन निम्न पंक्तियों में द्रष्टव्य है --

उर्वशी --

अवधि में क्या हो किसे पता !
कब तक मन की पीर सँभाले तरुणी नवागता
वन-वन ढूँढ रही है अपने पति को पतिव्रता
झुक चुबंन देती मधुपों को कलियाँ केलि-रता
रो-रोककर ही घुल जायेगी क्या यह सुदंरता।[3]

---

1. 'नूपुर बँधे चरण', पृ0 28
2. 'नूपुरबँधे चरण', पृ 31
3. 'बलि-निर्वास', पृ0 36

यहाँ स्वर्ग की अप्सरा उर्वशी आश्रय और उसका वियुक्त प्रेमी आलम्बन है। तरुओं से लिपटनेवाली लताएँ, और कली तथा मधुपों का मिलन आदि प्राकृतिक दृश्य उद्दीपन हैं, अप्सराओं का प्रेमी के वियोग में रोना, प्रेमी को वन-वन ढूँढना अनुभाव हैं। उर्वशी का अपने प्रेमी के प्रति 'रति' स्थायी भाव है।

करुण-रस

'शरीर ! हाय ! तो क्या आज
मृत्यु भी रहेगी अमरत्व-सी अलभ्य ही ?
तीन-लोक-पति पाशबद्ध क्रीत मर्कट-सा
नर्तन करेगा हास-ध्वनियों पर स्वर्ग के
क्रूर देवताओं की, दिखायेंगी सहास मुझे
वृद्धाएँ चपल शिशुओं के नन्हें हाथ धरे
सघन पथों पर अमरावती के, पास आकर
ढीठ किन्नरियाँ थिरकती चली जायेंगी
प्रिय किन्नरों के साथ, गूँजेगी सहास गिरा
स्वर्ग, मृत्युलोक और चौदहों भुवन-मध्य
'देखो यही स्वर्ग-भ्रष्ट मूढ़ बलिराज है
दीन, दयापात्र', आह, सह्य नहीं और अब
यह अपमान, आह !
(मूर्छित होकर गिरता है) [1]

ऊपर की पंक्तियों में धन-वैभव-विनाश-जन्य करुण हैं। राजा बलि स्वर्ग से भ्रष्ट होकर शोक-ग्रस्त हो जाता है।

इस काव्य-नाटक में वीर और भयानक रस के भी प्रसंग प्रस्तुत किये गये हैं। लेकिन, वे परम्परानुमोदित-रस की दृष्टि से अपुष्ट हैं।

(ख) परम्परा-मुक्त रस-निरूपण

कवि गुलाब के मुक्तक-काव्यों में मुख्यतः **कविता, चाँदनी, मेरे भारत, मेरे स्वदेश, गांधी-भारती, रूप की धूप, सीपी-रचित रेत, आयु बनी प्रस्तावना,** और **शब्दों से परे** में परम्परामुक्त रस-व्यंजना की प्रधानता है।

---

1. 'बलि-निर्वास', पृ0 49

इस कोटि की व्यंजना में रस से अधिक भाव पर ध्यान दिया गया है। इसका अर्थ यह नहीं कि उक्त मुक्तकों में रस की स्थिति का अभाव है, बल्कि कहने का तात्पर्य है कि ऐसे मुक्तकों में मनोवृत्तियों एवं समस्याओं के चित्रण के माध्यम से अनायास रस उद्‌बुद्ध हो गया है। इन मुक्तकों की रचना शास्त्रीय रस निरूपण के लिए नहीं हुई है अतः इनमें भावनाओं तथा अनुभूतियों की गहराई, बिम्बों के प्रस्तुतीकरण तथा मनोविश्लेषण पर विशेष ध्यान दिया गया है। कथन की सार्थकता के लिए आलोच्य पुस्तकों का विश्लेषण आवश्यक है।

कविता

कविता की रचनाएँ समय-समय पर उठी मानस की विभिन्न वृत्तियों की स्वर-लहरियाँ हैं। कवि सौंदर्य और प्रेम का पुजारी है। उसने प्रेम की विभिन्न मनःस्थितियों का चित्रण किया है। इन अनुभूतियों के चित्रण से अनायास रस की व्यंजना हो जाती है। यथा --

संयोग-श्रृंगार का एक चित्र द्रष्टव्य है --

मधु-स्पर्श-विमुग्ध-जीवन
अंग थर-थर, बंद लोचन
सोचता उन्मत्त हो मन
आह ! युग-युग तक मिले यह सुख, यही संसार
मैं तुम्हारे ही गले का हार।[1]

वियोग की घड़ी में कवि की प्रेयसी सूर की गोपियों की तरह आँसू बहाती है। उसे नींद नहीं आती क्योंकि उसका प्रियतम उससे दूर है : --

हलकी पवन बही पुरवैया
काँप उठी नयनों की नैया
नव-अषाढ़-घन-से आँगन में सारी रात झरे
सखि ! ये नयन नीरभरे
नहीं एक पल सकी पलक लग
रात बिता दी तारों-सी जग
निर्जन कक्ष, विरह-कातर मन, रोम-रोम सिहरे

---

1. 'कविता', पृ0 8।

सखि ! ये नयन नीरभरे।[1]

'प्रेम में विफलता मिलने पर कवि दार्शनिकों की-सी बात करने लगा है। संसार को वह असार समझता है, दुःख और मृत्यु को अटल, जीवन को क्षुद्र, क्षण-भंगुर और अभावों से पूर्ण।'[2] ऐसी स्थिति में शांत-रस की व्यंजना हो जाती है ---

उनके जीने-मरने से यह
मुझको भी सच्चा ज्ञान हुआ
यह जग असार, यह जग अनित्य,
इस नश्वरता का भान हुआ।[3]

इस तरह **कविता** मुक्तक-काव्य में विभिन्न रसों की अभिव्यंजना हुई है।

चाँदनी

'चाँदनी' एक प्रेम-प्रधान काव्य है। कवि ने चाँदनी को नारी मानकर मानवीकरण के द्वारा उसके विभिन्न रूपों का चित्रण किया है। इसीसे यहाँ चाँदनी कहीं पनहारिन बनी हुई है, कहीं ग्वालिन, कहीं परी, कहीं गायिका और कहीं कवयित्री। चाँदनी के शरीर के साथ हृदय की सुधि भी कवि ने ली है। उसे सप्राण मानने से उसके अन्तर के प्रणय-व्यापार और मानस-क्रीड़ाओं का चित्रण भी यहाँ-वहाँ बिखरा पड़ा है।'[4]

इसलिये यहाँ संयोग-वियोग के मार्मिक चित्र भी मिल जाते हैं। यथा --

(क) सिर्फ अनुभावों के द्वारा संयोग का चित्रण नीचे के उदाहरणों में द्रष्टव्य है

(1) पुलकित देह-लता झकझोरी
पी पपिहा-ध्वनि, चढ़ी न त्यौरी
मुड़ पहना दी प्रिय को गोरी
कोमल पतली-पतली बाँहें धुनी रुई-सी
चाँदनी छुईमुई-सी।[5]

---

1. 'कविता', पृ00 96
2. 'नयी कविता : नये कवि', विश्वम्भर 'मानव', पृ0 103
3. 'कविता', पृ0 81
4. 'नयी कविता : नये कवि', विश्वम्भर 'मानव', पृ0 105
5. 'चाँदनी', गुलाब, पृ0 34

(2) पलकें उठी, मिले युग लोचन
झुके अधर, थर-थर काँपा तन
कूक उठी पिक, गूँजा मधुवन
शाखा तनिक हिली।
चाँदनी वन के बीच खिली
प्रथम मिलन-परिणय-मधु-पूरित
हुई बिदा जब प्रात मंद-स्मित
अरुण कपोलों पर थी अंकित
प्रेम भेंट पहिली
चाँदनी वन के बीच खिली।[1]

(ख) वियोग-श्रृंगार के दो चित्र निम्न उदाहरणों में द्रष्टव्य हैं ---

(1) फूटी कर से छुटकर गागर
विफल बह रहा रस का सागर
तट से दूर गये नट-नागर
विरहिन राधा सी रो रोकर वह सिर पटक रही।[2]

(2) अधर कंपित, नयन छलछल
करुण हिमदल-सजल अंचल
दूतिका-सी फिर विजन में
तिमिर-अंग-विभूति-सी मल
प्रेम में जोगिन बनी प्रिय की वियोगिन बावरी
विरह-विकल विभावरी।[3]

(ग) **चाँदनी** का, नायिका के 'मान' का भी चित्रण कवि ने किया है। यथा ---

रश्मि रेशमी घूँघट काढ़े
मूर्तित नभ-गवाक्ष के आड़े
कातर भुज-बंधन में गाढ़े

---

1. 'चाँदनी', पृ0 40
2. 'चाँदनी', पृ0 26
3. वही, पृ0 57

मुड़ती-सी प्रतिकार कर उठी नई-नई चाँदनी
चाँद से रूठ गई चाँदनी।[1]

इस प्रकार उपमा, प्रतीकों एवं बिम्बों के माध्यम से 'चाँदनी' में श्रृंगार-रस की अभिव्यंजना हुई है।

गांधी-भारती

गांधी-भारती एक अनुभूति-प्रधान काव्य है। महात्मा गांधी के बलिदान से उत्प्रेरित होकर कवि ने इस काव्य की रचना की है। इसमें करुण-रस का चित्रण हुआ है --

बन्धु-विनाश-जन्य करुण :

बुद्ध गये, ईसा फिर, गाँधी से था यह विश्वास हमें
टूट जायँगे हिंसा-बन्धन निश्चय ही तेरे इस बार।
वह भी नहीं, त्राण फिर तेरा कहाँ ? देख हत्-आस हमें
सिसक रहा है शिशु-सा मुँह पर दिये हाथ सारा संसार।[2]

इसमें कवि के हृदय का शोक भी अभिलक्षित हो जाता है।

मेरे भारत, मेरे स्वदेश

इस मुक्तक-काव्य में देश-प्रेम-सम्बन्धी गीत एवं वीररस के 108 दोहे संकलित हैं। इस काव्य में वीररस की प्रधानता है। यथा ---

(क) समर-मरण, फिर देश-हित, बोला वीर 'न सोच
एक बार ही दे सका, प्राण, यही संकोच।'[3]
(ख) धौंसे की धमकार सुन, रुका न वीर निमेष
या तो लूँगा शत्रु-पुर या सुरपुर निःशेष।[4]

रौद्र

निम्न दोहे में रौद्र-रस को देखा जा सकता है ---

भुजा-भुजंग, कृपाण-भ्रू, माँग रुधिर-तलवार

---

1. 'चाँदनी', पृ0 37
2. 'गांधी-भारती', गुलाब, पृ0 16
3. 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश, गुलाब', पृ0 21 (दोहा0 सं00 25)
4. वही, पृ0 28 (दोहा सं0 57)

चली वधू पति-मरण सुन, दुर्गा-सी हुंकार।'[1]

रूप की धूप

इस मुक्तक-काव्य में श्रृंगार-रस की प्रधानता है। इसमें करुण एवं भक्ति-भावना के भी गीत मिलते हैं। यथा ---

संयोग-श्रृंगार

(1) प्यार का फूल यह, खिले न खिले
विश्व की यवनिका, हिले न हिले
आज जी भरके देख लेने दो
कल मधुर रात यह मिले न मिले।[2]

(2) ज्योति-सी उमड़ चली लगती है
स्वर्णमय गली-गली लगती है
श्याम-घन-केश हटा लो मुख से
रूप की धूप भली लगती है।[3]

(3) आँखों में अँटता नहीं, प्रिये तुम्हारा रूप
रोम-रोम में लूँ रमा ज्यों जाड़े की धूप।[4]

वियोग-श्रृंगार के चित्र :

(1) जा रही तुम वियोग-वेला में
दूर से देखता अकेला मैं
ज्यों बिछुड़ पिता और माता से
रो रहा वत्स एक मेला में।[5]

---

1. 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश पृ0 23 (दोहा सं0 35)
2. 'रूप की धूप', पृ0 70
3. वही, पृ0 44
4. 'रूप की धूप', पृ0 142
5. वही, पृ0 74

(2) दो घड़ी के अजान मिलने का
हाय कितना कठोर था परिणाम !
चिर-विरह की व्यथा लिये जीवन
अब अँगारों पे लोटता प्रति-याम![1]

(3) अब आँसू कैसे थमें, मिलकर दिया बिछोह
दृग में काँटे बो गई, वही कँटीली भौंह।[2]

(4) कैसे मन माने ! सतत, पग-ध्वनि पड़ती कान
दर्शन को तरसा करें, बस पड़ोस में प्राण ![3]

(5) देह सूखा काँटा हुई, पीले पड़े कपोल
बौराई मधुमास में, सुनकर पिक के बोल
नींद न आती रात को, दिवस न लगती भूख
एक सलिल को धान-सी, गई विरह में सूख।[4]

बेढब जी की मृत्यु के पश्चात् लिखे गये निम्न मुक्तकों में करुण-रस की अभिव्यंजना हुई है। यथा ---

हिन्दी के लिए जूझनेवाले न रहे
कवियों की गिरा पूजनेवाले न रहे
साहित्य-सभा मौन हुई काशी की
वीणा की तरह गूँजनेवाले न रहे
जो हास्य सुनाये थे सभी झूठे थे !
रुचते ही नहीं व्यंग्य जो अनूठे थे
क्यों आज रुलाते हैं हमें बेढब जी !
ऐसे तो कभी आप नहीं रूठे थे।[5]

---

1. 'रूप की धूप', पृ0 132
2. वही, पृ0 145
3. वही, पृ0 144
4. 'रूप की धूप', पृ0 146
5. वही, पृ0 127

आलोच्य मुक्तक-काव्य के 'बदरीनाथ के पथ पर' और 'हरिद्वार की गंगा के किनारे' जैसे मुक्तकों में लिखी कविताओं में कवि की भक्ति-भावना दृष्टिगोचर होती है।

सीपी-रचित रेत

आलोच्य काव्य में श्रृंगार रस की प्रधानता है। यथा --

वियोग-श्रृंगार

सोया-सोया देख रहा में खिड़की के बाहर अपलक
जहाँ बिछी है रात चाँदनी, हिम-सी श्वेत हुलासमयी।
पंख लगे होते तो उड़कर आज पहुँच जाता तुम तक ;
हाय ! तड़पती क्यों ये दो आंखें ही बन पाँखें न गयीं ?[1]

आयु बनी प्रस्तावना

इस मुक्तक-काव्य में श्रृंगार की प्रधानता है। एक-दो कविताओं में भक्ति-भावना भी निहित है। यथा ---

वियोग-श्रृंगार

जलते मरु-सा जीवन जलता
आस न फलती, जोर न चलता
पल-पल, पागल प्राण मचलता
झम-झम कज्जल स्नेह-घटा बन बरस पड़े वह मेंह चाहिए
मुझे तुम्हारा स्नेह चाहिए।[2]

भक्ति-भावना का चित्र निम्न पंक्तियों में द्रष्टव्य है।

तुम उदार, करुणा के सागर
सब गुण-आगर, हे नटनागर !
भर दो मन की रीती गागर
चरण-शरण मैं, नाथ ! तुम्हारे
प्रतिपल, प्रतिक्षण साथ तुम्हारे।[3]

---

1. 'सीपी-रचित रेत', पृ0 44
2. 'आयु बनी प्रस्तावना', पृ0 42
3. वही, पृ 42

निम्न पंक्तियों में कवि 'माँ भारती' से प्रार्थना करता है ---

करुणामयि, शतरूपिणि, धन्या
अंतर-छाया-ज्योति अनन्या
भव-मय-नाशिनी, हृदय-हुलासिनि, मंगल-राग भरो
जीवन सफल करो।[1]

शब्दों से परे

इस मुक्तक-काव्य में शांत-रस की प्रधानता है। इसमें कहीं-कहीं श्रृंगार के भी चित्र मिल जाते हैं। यथा ---

शांत-रस

अरे, वह कौन आयी अप्रतिम सौंदर्य-श्रीवाली !
जवानी फूँककर जिसकी, चिता ने राख कर डाली !
मुकुल से दुधमुँहों को तोड़ता, कैसा निठुर माली !
तरुण वह कौन आया ज्यों पवन में झूमती डाली !
सतत सौ काफले आते
युवा, शिशु, वृद्ध मदमाते
यहाँ पर देखते ही देखते
सब क्षार हो जाते
झरे जो फूल फलकर बात उनकी तो वृथा-सी है
यहाँ खिलते सुमन को तोड़ लेने की प्रथा सी है।[2]

संयोग-श्रृंगार

उस दिन संध्या के झुटपुटे में
मैं तुम्हारे मन के कितने समीप आ गया था
जब चंपा के फूलों से कवरी सजाये
तुम मेरे पास आयी थी !
तुम्हारी आँखें कुछ कहने को झुक-सी रही थीं

1.'आयु बनी प्रस्तावना', पृ0 9
2. 'शब्दों से परे', पृ0 26

और साँसे अंटक-अँटककर रुक-सी रही थीं
उनींदी पलकों की कोरों में केसर के डोरे लहराते थे
सुगंध के बादल उड़-उड़कर मेरे ओंठों से टकराते थे।

व्यक्ति बनकर आ और **बूँदें : जो मोती बन गयीं,** इन दोनों मुक्तक-काव्यों में रस-निरूपण की स्थिति नहीं दिखायी देती है, कारण यह है कि ये काव्य विचार-प्रधान हैं, भाव-प्रधान नहीं। इन्हें 'विचार-कविता' की पृष्ठभूमि में रखा जा सकता है।

2. मानवेतर आलम्बन और उद्दीपन

मुक्तक-काव्यों में भावपक्ष के अन्तर्गत रस की विविधता तथा भावों को उत्पन्न करनेवाले आलम्बनों एवं उद्दीपन का वर्णन हो चुका है। यहाँ संक्षेप में मानवेतर आलम्बनों और उद्दीपनों की भूमिकाओं का संकेत करना है। गुलाब के मुक्तकों में मानवेतर आलम्बनों (प्रकृति) और बाह्य उद्दीपनों (प्रकृति) की प्रचुरता है।

(क) आलम्बन-रूप में प्रकृति

प्रकृति को स्वतंत्र मानकर उसका वर्णन गुलाब के मुक्तकों में विशेष मिलता है। **चाँदनी** के गीतों में चाँदनी का आलम्बन-रूप में चित्रण मिलता है। यथा ---

मेघों के सित अंचल में खिल
हिमकर स्वर्ण-दीप-सा झिलमिल
जलते शलभ-नख्त-शिशु तिल-तिल
जुगनू बन उड़ रही विजन-पथ में अंगार-कणी
ज्योति-सी खिली रात चाँदनी।[1]

अथवा ---

शशि विटप पर मोर बाँका
उड़ी सित तारक-वलाका
सजल धरणी, कुमुद झरते

---

1. 'शब्दों से परे', पृ0 43
2. 'चाँदनी', पृ0 19

मास पावस का, न राका
श्याम मेघों में चमककर हो गई थिर दामिनी
आज राका-यामिनी।[1]

वर्षा का आलम्बनगत चित्रण **कविता** मुक्तक काव्य से द्रष्टव्य है ---

विजन को बना विमल उद्यान
जगाती जगती का उल्लास
पहन हरियाली का परिधान
आ गई वर्षा ऋतु सविलाश
तरंगों पर नदियों की बैठ
धनावलियों पर हो आसीन
चपल-चपला की लेकर चाल
चली करने को विश्व नवीन।[2]

आयु बनी प्रस्तावना से भी बरसात का एक आलम्बनगत चित्र प्रस्तुत है --

पहली झमक, विपिन की नस-नस हरी हुई है
बौछार दूसरी में, सरिता भरी हुई है
पत्ती न नीम-तरु की, नीलम-परी हुई है
वन-वन मयूर-पिक की, अंताक्षरी हुई है
हर साँस में हवा की, गिरते हजार तारे
बरसात की बहारें, बरसात की फुहारें।[3]

नूपुरबँधे चरण मुक्तक-काव्य से संध्या का आलम्बनगत चित्रण नीचे दिया जा रहा है ---

नूपुर-बँधे चरण संध्या के, नूपुर-बँधे चरण
सागर की लहरों पर थिरक-थिरककर
नाच रही है किरण-बालिका थर-थर

---

1. 'चाँदनी', पृ0
2. 'कविता', गुलाब, पृ0 62
3. 'आयु बनी प्रस्तवाना', गुलाब, पृ0 54

पिछल रहीं जलपर चंचल पगतलियाँ
मुक्त पवन में उड़ता अंचल फर-फर
श्याम अलक,पलकें मद-लोहित, मुख-छवि पीत-वरण।[1]

सीपी-रचित रेत से आँधी का आलम्बनगत चित्रण द्रष्टव्य है --

नीले, पीले, लाल बैगनी, फूले हुए बादलों से
बदल रहा नभ का रँग प्रतिक्षण, लो बादामी आँधी ने
डब्बे-सा ढँक लिया धरा को, दिशि-दिशि भीत बालकों-से
भाग रहे हैं मेघ, हाय ! वे राजवसन किसने छीने ?[2]

रूप की धूप

मुक्तक-काव्य में कश्मीर का आलंबन-गत चित्रण बहुत ही उत्कृष्ट है। उसमें प्रयुक्त उर्दू के शब्द कविता में चार-चाँद लगा देते हैं --

हर कहीं अमृतमयी धारा है
आप विधि ने जिसे सँवारा है
स्वर्ग का एक खंड है कश्मीर
ज्योतिमय मुकुट यह हमारा है
एक तस्वीर ख़्वाब की-सी है
एक प्याली शराब की-सी है
चाँद का रूप, रंग केसर का
पंखड़ी ज्यों गुलाब की-सी है।[3]

आलोच्य काव्य से ही गंगा का आलम्बनगत चित्रण प्रस्तुत है --

बल खाती हुई घूमती आई गंगा
गौरी के चरण चूमती आई गंगा
पीयूष धवल चाँद के आनन का चुरा
नागिन की तरह झूमती आई गंगा।[4]

---

1. 'नूपुरबँधे चरण', पृ0 9
2. 'सीपी-रचित रेत', पृ0 48
3. 'रूप की धूप', पृ0 122
4. 'रूप की धूप' पृ0 106

शब्दों से परे मुक्तक काव्य से चाँद का आलम्बन-गत चित्र द्रष्टव्य है ---

तभी चाँद पूर्णिमा का बाँका
उठा इठलाता हुआ दाँये अमलतास में
और वहीं पर से मुस्कराता हुआ मुझ पर
मधु के उड़ेलने लगा ज्यों घट भर-भर,
सोने के थाल जैसा गोल और पीला
शीतल आलोकभरा,
पत्तों के बीच धरा,
लगता था कितना द्युतिपूरित, फबीला।[1]

(ख) उद्दीपन रूप में प्रकृति

प्रकृति का उद्दीपन-गत चित्रण गुलाब के विभिन्न मुक्तकों में मिलता है। यथा ---

(1) 'रति' को उद्दीपन करनेवाली प्रकृति के चित्रण निम्न उदाहरणों में द्रष्टव्य हैं --

कुहुकी कोयल काली-काली
मैं मधु-घट भर लायी, आली !
उठ, कवि ! ले सपनों की प्याली
रे, आज ढलेगी मनमानी
मैं कवि के भावों की रानी।[2]

'रति' को ही उद्दीप्त करनेवाला एक दूसरा चित्र प्रस्तुत है --

ज्योंही उठी काली घटा
मन का अँधेरा-सा कटा
बिजली चमकने लग गयीं
सोयी उमंगें जग गयीं।[3]

(2) वियोग की रति-भावना को उद्दीप्त करनेवाली स्थिति का चित्र --

---

1. 'शब्दों से परे', पृ0 47
2. 'कविता', पृ00 68
3. 'नूपुरबँधे चरण', पृ0 114

रुक-रुक, झमक-झमककर बौछार हो रही है
बिजली चमक-चमककर उस पार हो रही है
जो हार थी गले का, वह भार हो रही है
यह तीर-सी झड़ी ही तलवार हो रही है
मैं देखता गगन को बाहें विकल पसारे
बरसात की बहारें, बरसात की फुहारें।[1]

मुक्तक काव्यों का कला-पक्ष

महाकवि गुलाब के प्रबंध-काव्यों के कला-पक्ष की तरह ही इनके मुक्तक-काव्यों का कला-पक्ष अत्यन्त ही प्रौढ़ एवं विशिष्ट है। किसी भी प्रबंध-काव्य के कला-पक्ष और मुक्तक-काव्य के कला-पक्ष में न्यूनाधिक रूप से अन्तर होगा ही। ऐसा ही अन्तर आलोच्य कवि के प्रबंधकाव्यों के कला-पक्ष और मुक्तक-काव्यों के कला-पक्ष में द्रष्टव्य है। अपने मुक्तकों में कवि गुलाब ने अनेकानेक प्रयोग किये हैं। आरम्भिक मुक्तकों में छायावादी कलात्मक शिल्प है और उत्तरार्द्ध के मुक्तकों में वैचारिकता तथा दार्शनिकता के पुट आ जाने से भाषा और शैली में गद्यात्मकता आ गयी है।

(क) भाषा

भाषा की विशेषताओं की दृष्टि से गुलाब के मुक्तक-काव्यों में भिन्न-भिन्न प्रयोग मिलते हैं --

(1) संस्कृत गर्भित खड़ी बोली का प्रयोग **चाँदनी, बलि-निर्वास, मेरे भारत, मेरे स्वदेश, नूपुरबँधे चरण** और **'आयु बनी प्रस्तावना'** में हुआ है --

चाँदनी --

'गूँथ सरसिज विकच तारे
किरण कुंचित कच सँवारे
समझ ऊषाकाल आई
व्योम-गंगा के किनारे
स्वर्ण-निर्मित इन्दु-घट ले क्षीण-कटि निशि-कामिनी
आज राकायामिनी।[2]

---

1. 'आयु बनी प्रस्तावना', पृ0 55
2. 'चाँदनी', पृ0 4

बलि निर्वास -- स्वर्ग से सहस्रों लोक दूर हेम-शिखरों पर
ऋषि-लोक पावन बसा है महाशून्य में
अंधतम अर्णव में दीपित नक्षत्र-तुल्य
ज्योति-लघु, जहाँ दिन-रात धूम-कुंज तले
खेलते हैं मृगज अवध्य हरी दूब पर,
गर्भित मृगात्मजायें फाड़े सुविशाल दृग
इंगुदी से चिक्वन शिला के खंड सूँघती-सी
देखतीं निदाघ-क्रीड़ा हरिणी-कुमारों की
सालस चबाती दर्भाकुर हविष-पूत।[1]

मेरे भारत, मेरे स्वदेश
तू चिर-प्रशांत, तू चिर-अजेय
सुर-मुनि-वंदित, स्थित, अप्रमेय
हे सगुण ब्रह्म, वेदादि-गेय !
हे चिर-अनादि, हे चिर-अशेष !
मेरे भारत, मेरे स्वदेश।[2]

नूपुरबँधे चरण
मैंने देखा एक अपरिचित
पीत-वदन, कृश-अंग म्लान-स्मित
भटक रहा था चरण कंटकित।[3]

आयु बनी प्रस्तावना
फूले फेनिल जलनिधि-सा मन
कल्लोलित, हिल्लोलित यौवन
शारद-हासिनि, हे नभवासिनी, स्वर-आभरण धरो
जीवन सफल करो।[4]

---

1. 'बलि-निर्वास', पृ0 24
2. 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश', पृ0 1
3. 'नूपुर बँधे चरण', पृ0 46
4. 'आयु बनी प्रस्तावना', पृ0 1

(2) तत्सम शब्दों की बहुलता कवि गुलाब के प्रायः सभी मुक्तकों में पायी जाती है। गुलाब के मुक्तक-काव्यों से तत्सम शब्दों के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं ---

कविता --विकच, क्षितिज, अवनी, अंबर, वाणी (पृ0 1), सत्य, शिव, कमनीय, प्राण, प्रतिभा, स्वर्ग (पृ0 3), अभिलाषा, प्रत्याशा, अविनश्वर, विहग, स्पर्श, विमुग्ध, उन्मत्त, लोचन (पृ0 8), कुसुम, प्रतिध्वनि, प्रतिपल (पृ0 9), किसलय, तारक-तंद्रिल, विह्वल, दृग-पुलिन (पृ0 14), इत्यादि।

चाँदनी -- इन्दु, इन्दीवर, नख-नखत, नभ, इन्दिरा, विश्व-वन्दित, सित, ज्योति-रूप, राका, यामिनी, तरु-कुंज, मुग्ध, तुहिन-मकरन्द (पृ0 3), सरसिज, विकच, कुंचित, कच, व्योम-गंगा, क्षीण-कटि, निशि-कामिनी, शशि, विटप, दामिनी (पृ0 4), माणिक-छवि-द्युति, शैल-श्रृंग, अखिल, सम्मोहन, महोल्लास, नभ-वासिनी (पृ0 4), अप्सरा, कच, अधर, अरुणोदय, कुंचित भ्रू, विस्मय, चिबुक, ग्रीवा, वक्षस्थली, चितवन, उर्मि-चरण (पृ017), शुक्लाभिसारिका धरणी, स्फटिक, वन-प्रसून, स्वर्गाभा, कूल, पीत, रज-केसर-मंडित, पीयूष (पृ0 17) इत्यादि।

बलि-निर्वास -- मृणाल, अलक, मधुप, मांसल, स्मित, जलनिधि, जलद-वधू, नूपुर (पृ0 1), कोटि-कोटि, मरुतदेव, शतक्रतु, आलिंगन, त्रिवली, प्रलय, वज्र, आवर्त, जलधिसुता (पृ0 2), विषण्ण, धूमिल, अस्तोन्मुख, द्रुत जीर्ण-गात, भव-तम-रजनी (पृ0 14) इत्यादि।

गांधी-भारती -- ज्वार, असि, स्पंदन, शतफण, (पृ0 5), महाशून्य, प्रतिपद, पाटल-पुष्प, सप्त सिंधु, अशेष, सुमन-देह-कृशकंपित, तड़ित-ज्योति, (पृ0 7) इत्यादि।

मेरे भारत, मेरे स्वदेश -- आर्य-धरित्री, अनादि, चिर, (पृ0 1) हिम-शुभ्र, श्रृगाल, दिनेश, मातृभूमि, (पृ0 2) अगस्त्य-सुत, सप्त सिंधुओं, खगोल, मेखला, ध्वनि, प्रज्वलित (पृ0 8)।

रूप की धूप -- विभास, व्यवसाय, सिद्धि, अंशुमाली (पृ0 3), प्रतिध्वनि, अवशिष्ट (पृ0 4), चिति, निखिल, सृष्टि, अपवर्ग, दृष्टिपात्, अनाविल, अमृत, सुरा (पृ0 7), कंचन, अकिंचन, किरण, बूँद, वंदना (पृ0 8), कुटीर, धूलि, धूसरित, (पृ0 1), शर-वृष्टि, पंक-ग्रसित, वेदना, गुरुतर, निःशस्त्र, शक्ति, अनावृष्टि, अनुरक्ति, प्रतिवार (पृ0 11)।

नूपुरबँधे चरण -- नूपुर, मुक्त, मद-लोहित (पृ0 9), स्वर्णिम, वारुणी, तम-गुहा, धरा-अंचल, तम-शिशु (पृ0 10), गिरि-शिखर, वक्ष, प्रताड़ित, दंशित, कुटिल (पृ0 24)।

सीपी-रचित रेत -- संध्या-दिगंत, कृत्रिम, रत्न-जड़ित, समृद्धि, रागमरंद, (पृ0 1), निगूढ़, सुषमा, उन्मीलन, स्वर्गीय, आभा, कीर्ति, स्वरसंसृति, स्वीय, अस्तित्व (पृ0 4), दिव-श्रम, कपोल, बिंबित, मंदस्मित, उन्मद, सुसुप्त, श्वेत (पृ0 45), मृदुल, अनाघ्रात, अवगुंठित, चंद्रिका, (पृ0 47)।

आयु बनी प्रस्तावना -- तृण, तरु, रजत अक्षर (पृ0 1) निमिष, रजनी, अंतर, सूर्य-शिला, विद्युत, अतनु (पृ0 3-9), लावण्य-पाश, ज्योत्स्ना (पृ0 17) प्रतीक्षा, क्षत-विक्षत, दीक्षा, बेसुध, तृषा, मूक, अभिशाप (पृ0 21)।

शब्दों से परे -- अस्तित्व, क्षीण, हास, मृत्यु-शैया (पृ0 1), व्यक्त, सीमा, गगन, परिधि, परित्यक्त, नियति, प्रकृति, अगति (पृ0 2), अभिव्यंजना, रवि-रश्मि, अभिलेख (पृ0 6), स्वप्नाविल, चतुर्दिक (पृ0 19), तिमिर, सोम, द्रवित, भग्नपोत, सलिल जलेंद्र, गजेंद्र (पृ0 41)।

व्यक्ति बनकर आ -- सूक्ष्म, नर्तकी, गहन, शत (पृ0 1), चिर-अटल, स्रोत, व्याप्त, ग्रहण, अभिव्यक्ति, कृष्ण, (पृ0 2,3) भक्त, कृपा-दृष्टि, सहर्ष, मस्तक, मन्दिर, कलश, व्यर्थ, महत्ता, पुष्प (पृ0 11), अश्व, केतन (पृ0 55) क्षमा, मरुथल (पृ0 54)।

बूँदें : जो मोती बन गयीं

ऋतंवरा, आकाश, व्याकुल, प्रवासी (पृ0 15), निरभ्र, आनन, नीलिमा (पृ0 33) व्यवधान, भिन्न, अनुभूति, खिन्न (पृ0 37) इत्यादि।

(सामासिक शब्दों से निर्मित पंक्तियों के उदाहरण विशेषकर 'चांदनी', 'गांधी-भारती' 'बलि-निर्वास', और 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश' में मिलते हैं। जैसे --

(1) सित घन-फेनोंच्छ्वसित हास-मय
उर्मि-निलय मधु-मलय-लास-मय
तारक शत बुद्बुद्-विलास-मय
रुद्ध-ज्वार दिशि-कूल डुबाती लो फिर लौट पड़ी
ज्योत्स्ना रजत-सिंधु-सी उमड़ी।[1]

---

1. 'चांदनी' , पृ0 12

(2) शत दशब्दियों से पद-मर्दित, संज्ञा-हत, शत खण्ड-विभक्त
जन-जीवन-विच्छिन्न, विकल भारत-भू सोई थी निश्चेष्ट,
चिर-प्रतिरोध-विहीन, कल्पनाएँ अपंख थीं, प्राण अशक्त,
रूप-विरूप, कृती अकृती, जैसे फिर यह भी था न यथेष्ट।[1]

(3) ज्वालामुखी-स्फोट से अनंत द्वीप-पुंज जैसे
गलित कनक में सुमेरु-पार्श्व-वर्तिनी
डूब गयी महारक्त-प्रलय-समुद्र-मध्य
देव ! मय-सहित समस्त दैत्य-वाहिनी।[2]

(4) जननी जीवन-दायिनी
जगत-प्रकाशिनि, शारद-हासिनी, जन-उर-शांति-प्रदायिनी
किरण-मंडिता, उपल-खंडिता, पाप-कलाप-नशायिनी
गिरि-उत्संगा, क्रीड़ित-गंगा, रज-धूसर-काषायिनी
देश-वर्ण-शत, रचित पर्ण-वत्, मधु-ऋतु-शैया-शायिनी
अरुण-वंदिता, छवि-अनिंदिता, मंद-मंद स्मिति-ध्यायिनी।[3]

कविता की भाषा मधुर और सरल है। 'इस कृति में भाषा की सरलता मन को मुग्ध करती है। यों परिष्कृत और मधुर हिन्दी के साथ फारसी-अरबी के दुश्वार, आतिश, इज़हार, अरमान, दरकार, शबनम तूफान जैसे शब्दों का प्रयोग भी गुलाब ने बिना हिचक के किया है।'[4] **रूप की धूप** में उर्दू मिश्रित खड़ी बोली की पंक्तियाँ मन को बरबस आकृष्ट कर लेती हैं ---

'रात है, बयावान है, तुम हो
चाँद है, आसमान है, तुम हो

---

1. 'गांधी-भारती', पृ0 5
2. 'बलि-निर्वास', पृ0 55
3. 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश', पृ0 49
4. 'नयी कविता : नये कवि', विश्वम्भर मानव, पृ0 104

कल जो होगा सो देखा जायेगा
आज तो दिल जवान है, तुम हो'[1]

आयु बनी प्रस्तावना के गीत सरल, सहज प्रवाहपूर्ण भाषा में लिखे गये हैं। **बूँदें : जो मोती बन गयीं** और **व्यक्ति बनकर आ** की भाषा गद्य के निकट आ गयी है। 'प्रस्तुत संग्रह में अपनी दूसरी पुस्तक, **व्यक्ति बनकर आ** की तरह, काव्य की भाषा और लय को गद्य की भाषा और लय के निकट लाने का मेरा विनम्र प्रयास है।'[2]

विविध शब्द-प्रयोग (विदेशज)

कवि गुलाब ने **कविता, रूप की धूप** और **शब्दों से परे** मुक्तक-काव्य में कहीं-कहीं अरबी फारसी के शब्दों का भी प्रयोग किया है। ऐसे शब्दों की संख्या **कविता** एवं **शब्दों से परे** में कम है, लेकिन **रूप की धूप** की रुबाइयों में अरबी-फारसी के शब्दों की भरमार है। यथा ---

कविता -- तूफान, किश्ती (पृ0 35), इज़हार (पृ0 39), दुश्वार (पृ0 47), अरमान (पृ0 41), दरकार (पृ0 10) और तकदीर (पृ0 89)।

'रूप की धूप' --ग़नीमत (पृ0 30), तख़्त सुलेमानी (पृ0 91) ग़र्क, साक़ी (पृ0 94), ख्वाब, शराब (पृ0 122), बाग़, चिनारों (पृ0 124) आवाज़, ताजमहल, मुमताज, खुमारी (पृ0 125), सलाखों, कवाब (पृ0 123) क़यामत, फ़िजा, बेकरारी (पृ0 164), बयावान, मेहरवान, इश्क, बेज़बान, हसरतों, खुदाई, इम्तहान (पृ0 135)।

शब्दों से परे -- अलगरज (पृ0 14), काफले (पृ0 26), कफन, शहनाइयाँ (पृ0 27), कारवाँ (पृ0 58), शतरंज, वजीर, (पृ0 60) पैमानों (पृ0 76)।

संगीत

कविवर गुलाब के मुक्तक-काव्यों में भाषा-संगीत की प्रचुरता है। भाषा-संगीत के कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं ---

(क) विकच पँखुरियों-से मेरे स्वर
दूर क्षितिज में फैल फैलकर
छा लें दश-दिशि, अवनी, अंबर
ढँक ले गृह, तरु, मग, पराग बन, तुम प्रिय पग धर दो

---

1. 'रूप की धूप' , पृ0 135
2. 'बूदें : जो मोती बन गयीं' -- गुलाब, (अपनी ओर से), पृ0 छ

वाणी का वर दो।[1]

(ख) मेघों के सित अंचल में खिल
हिमकर स्वर्ण-दीप-सा झिलमिल
जलते शलभ-नखत-शिशु तिल तिल
जुगनू बन उड़ रही विजन-पथ में अंगार-कणी
ज्योति-सी खिली रात चाँदनी।[2]

(ग) गुन-गुन गाती धीमे-धीमे
मधुर स्वप्न दुहराती जी में
बैठी शून्य विजन-घाटी में
गूँथ रही माला
चाँदनी पर्वत की बाला।[3]

(घ) घर जाओ सपनों की रानी !
मैं पंथी, नगरी अनजानी,
प्रेम सदा दुःखांत कहानी,
भूल न यह जाना।[4]

(ड.) खिलखिल कर हँसती हो जब तुम, कहीं झनझना उठी सितार पार्श्व-कक्ष में, मुझको होता भान, किसीके कर द्वारा, या कल-कल करती बहती है दूर कहीं घाटी के पार लघु-लघु उपलों से टकराती, बल खाती, निर्झर-धारा।[5]

(च) रूप में जो मिठास है, मैं हूँ
फूल में जो विकास है, मैं हूँ

---

1. 'कविता', पृ0 2
2. 'चाँदनी', पृ0 19
3. वही, पृ0 20
4. 'नूपुरबँधे चरण' , पृ0 45
5. 'सीपी रचित रेत', पृ0 17

अमृत मुझसे, सुरा, सुरा मुझसे
सृष्टि में जो प्रकाश है, मैं हूँ।[1]

(छ) प्रेम की प्रथम चेतना है रूप
मर्म की मूर्त वेदना है रूप
व्यक्त मुस्कान-सी विधाता की
सृष्टि की अमर प्रेरणा है रूप[2]

मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ

कवि गुलाब के मुक्तक-काव्यों में मुहावरे एवं लोकोक्तियों के प्रयोग मिलते हैं ---

कविता

1. 'मैं ख़ुशी से आज फूला' (पृ0 8)
2. 'दिल ही दिल की यह लगी आग' (पृ0 84)
3. 'जी में जलती जब आग घोर' (पृ0 84)

चांदनी

1. 'चार दिन का वास है यह' (पृ0 2)
2. 'चन्द्रकान्त यह नहीं ! चांदनी ! तू किस पर फूली' (पृ0 45)
3. 'चांदनी केवल चार दिनों की' (पृ0 51)

बलि-निर्वास (काव्य-नाटक)

1. 'पहले चुबंन से नीली-पीली हो' (पृ0 7)
2. 'आते हैं रणकुशल दैत्यगण जिनसे लोहा लेने को' (पृ0 10)
3. 'दीपक दिखाया हो किसी ने दीप्त भानु को' (पृ0 26)
4. 'बिना तुम्हारे उजड़ गयी यह सुषमा आनन-फानन' (पृ0 35)
5. 'कंजकली को आँख दिखाते सौरभ उसका छीन' (पृ0 36)
6. 'मुँह लेते हैं फिरा आज वे पड़ते दृष्टि हठात्' (पृ0 36)
7. 'ढोल-पीट-पीट भाग्य-हीनता जताती है' (पृ0 44)
8. 'पानी फेर दो न सब किये-कराये पर' (पृ0 48)
9. 'टेक निज घुटनों को, बुद्धि जहाँ शंकित हो' (पृ0 49)

---

1. 'रूप की धूप', पृ0 7 2. 'रूप की धूप', पृ0 48

गांधी भारती

1. 'चले गये सुरधाम ? नहीं ! तो फिर कैसे हम से मुँह मोड़' (पृ0 47)
2. 'एक दूसरे का मुँह तकती, लज्जित, खोई-सी, अविकार' (पृ0 48)

मेरे भारत, मेरे स्वदेश

1. 'यह पीली आंधी निष्फल चट्टानों पर सिर मारती' (पृ0 8)
2. 'गुरु को गुड़ कह, आज वही चेला बनने आया चीनी' (पृ0 13)
3. 'जब तक सुप्त मृगेन्द्र है, गीदड़ तू ही शेर' (पृ0 15)
4. 'यह सँकरीला घाट है, 'दो असि एक न म्यान' (पृ0 16)
5. 'चढ़ा तड़ित के अश्व पर वीर जिये दिन चार।' (पृ0 16)
6. 'सौ बारी रोगी मरे भोगी मरे हज़ार
   लाख बार कायर मरे वीर एक ही बार।' (पृ0 17)
7. 'सिंहों का क्या गोत्र है, वीरों की क्या जात।' (पृ0 20)
8. 'चढ़े शत्रु के शीश पर' (पृ0 20)
9. 'आँख लगी थी पीठ पर' (पृ0 28)
10. 'आस्तीन में साँप' (पृ0 40)

रूप की धूप

1. 'आपका सनेह क्या है, डूबते को तिनका है' (पृ0 9)
2. 'पगुराती हुई महिष-मण्डली के बीच
कोई जो लिये काव्य की वीणा आ जाय।' (पृ0 15)
3. 'हम तो बस धूल में मिलने के लिये आये थे' (पृ0 15)
4. 'पलकों के पाँवड़े पसार के बैठे है।' (पृ0 38)
5. 'हमने आँखे मिलाके देख लिया' (पृ0 63)
6. 'भीत बालू की उठाते थे तुम' (पृ0 119 श्र)

नूपुर बँधे चरण

1. 'क्रुद्ध उठा दानव कर मलता मानों यह सपना था' (पृ0 26)
2. 'झाँक रहा है कौन सभीसे जिससे आँखे चार करूँ मैं' (पृ0 66)
3. 'शकुंतला चार दिनों की चाँदनी' (पृ0 99)
4. 'काटी थी कलेजे से लगाके क्रूर यामिनी' (पृ0 125)

सीपी-रचित रेत

1. 'डाल-डाल वह उड़ा और मैं पात-पात पर जा बैठा' (पृ0 1)
2. 'मेघों सी घुल जाय, स्वीय अनुभव में छाती फूल उठे' (पृ0 4)

3. 'पुरुषों-सा, मैं कोतवाल को उल्टा डाँट रहा हूँ चोर' (पृ0 35)

आयु बनी प्रस्तावना

1. 'सब धरती की धूल बटोरी, तब पाया चुटकी भर सोना' (पृ0 32)
2. 'मिल सुहागे-सा कनक में यह सहज क्षण' (पृ0 44)

शब्दों से परे

1. 'माँझी जो पक्के थे धुन के' (पृ0 8)
2. 'प्राणों की वाणी बोली थी, डाक नहीं बोली थी।' (पृ0 13)
3. 'जिसका जी चाहे, ले जाये अब यह ठोक बजाकर' (पृ0 13)
4. 'मुँह को सिये बस मौन रहते हैं' (पृ0 25)
5. 'यहाँ जो भी चला आता, पसारे हाथ आता है' (पृ0 26)
6. 'यहाँ मुँह पर दिये ताले' (पृ0 28)
7. 'न कर अब पार लक्ष्मण-लीक मेरी आयु की', (पृ0 58)
8. 'मृत्यु सभी पर अंधे की लाठी' (पृ0 74)
9. 'मेरे सपने आज मुझीको दिखा रहे हैं आँख देखो' (पृ0 78)
10. 'स्वार्थ से कीर्ति यहाँ बीस नहीं होती है' (पृ0 81)
11. 'देना है तुझे तो दे, सभी को, हाथ खोलकर' (पृ0 85)

व्यक्ति बनकर आ

1. 'तेरे पदाघात सिर-माथे पर हैं' (पृ0 13)
2. 'पत्थर पर लकीरें खींची हैं' (पृ0 28)
3. 'मैंने गले में यह ढोल पहना था' (पृ0 46)
4. 'अपने पाँवों पर खड़ा हो गया हूँ' (पृ0 59)
5. 'तेरा हाथ तो सदा मेरी पीठ पर रहता है' (पृ0 67)

बूँदें : जो मोती बन गयीं

1. 'पर इनसे आँखे चार कर सकूँ, मेरे पास इतना समय कहाँ है' (पृ0 7)
2. 'तू मुझसे मुँह मोड़कर चला गया' (पृ0 53)।

शब्दों के विभिन्न प्रयोग

ग्रामीण या आंचलिक शब्द प्रयोग -- मुक्तक-काव्य में भावों की विविधता होती है। इसलिए विभिन्न मनःस्थितियों के चित्रण के लिए कवि भाषा के अनेक प्रयोगों को ग्रहण करता है। ग्रामीण या आंचलित शब्दों का प्रयोग भी जीवन के भावों के वैविध्य-चित्रण को प्रकट करने के लिए होता है। अंचल

विशेष की ध्वनि की प्रधानता इन शब्दों में रहती है। गुलाब के कुछ मुक्तकों में ऐसे शब्द द्रष्टव्य हैं ---

नूपुरबँधे चरण : -- बुलाकी (पृ0 1), बाँटेगी धान सवाया (पृ0 13) भपकी (पृ0 16) बाट, जोह (पृ0 72), आरियाँ (पृ0 116) पहिरोपना (पृ0 118)।

शब्दों से परे --

कोई द्वार से ही, कोई गाँव के सिवान से
कोई पनघट से कोई खेत-खलिहान से।' (पृ0 5)

वर्ण या रंग

कवि आलम्बनगत प्रकृति-चित्रण एवं नायिका के सौंदर्य-वर्णन में रंगों की सूक्ष्म अभिव्यक्ति करता है। कवि गुलाब के मुक्तकों में रंग-विधान की बहुलता है। यथा ---

कविता --

पी चंपक-कपोल मधु जी भर
झूम अलक में पलक चूम कर।[1]

यहाँ कवि ने नायिका के कपोल के रंग का वर्णन किया है।

चाँदनी --

फिरती नील करील-कुंज में
गौर वदन, शशि-बिन्दु भाल पर कालिन्दी-से केश
चाँदनी तू आयी किस देश ![2]

उक्त पंक्तियों में चाँदनी का नारी-रूप में मानवीकरण है। चाँदनी-बाला नीले करील-कुंजों में घूम रही है। उसका मुख गौर और केश कालिन्दी के जल की तरह काले हैं। यह प्रकृति का आलम्बनगत चित्रण है।

नूपुरबँधे चरण ---

श्याम-अलक, पलकें मद-लोहित, मुख-छवि पीत-वरण
संध्या के नूपुरबँधे चरण।[3]

---

1. 'कविता', पृ0 16
2. 'चाँदनी', पृ0 27
3. 'नूपुरबँधे चरण', पृ0 9

यहाँ संध्या सुन्दरी के काले केश, मद-लोहित पलकों और पीले मुख का चित्रण है।

रूप की धूप ---

स्नेह तुल रहा चाँदनी में आज
चांद धुल रहा चांदनी में आज
दूधिया रंग, अंग केसर-से
रंग खुल रहा चाँदनी में आज।[1]

ऊपर के रंग-विधान में नायिका के रूप-रंग का चित्रण है।

शब्दों से परे ---
रतनारी, चंपक
गोर, फलसई त्वक,
हँसी सतरंगिनी,
श्याम अलक
कंपित उर
ज्यों मृदंग
चढ़े चंग।
रंग, रंग
:: :: ::
रंग रंग
गहरा ही गहरा
अणु-अणु में लहरा
हरित, पीत, नील, सित, सुनहरा"[2]

बूँदें : जो मोती बन गयीं :--
जी करता है इन दूधिया सवेरों से नहा लूँ
इन कजरारी रातों से लिपटकर सो जाऊँ।[3]

---

1. 'रूप की धूप', पृ0 45
2. 'शब्दों से परे', पृ0 53-54
3. 'बूँदें : जो मोती बन गयीं', पृ0 16

इन पंक्तियों में दूधिया रंग का सवेरा और कजरारी रात का चित्रण है। कवि गुलाब के अन्य मुक्तक-काव्यों में भी रंगों का विधान पर्याप्त रूप में मिलता है।'[1]

गंध की संवेदना

कवि गुलाब के मुक्तक-काव्यों में प्रकृति-चित्रण एवं प्रेमानुभूति के मादक क्षणों में गंध की संवेदना मिलती है। **चाँदनी** के गीतों में प्रकृति-चित्रण के अन्तर्गत कवि ने गंध की संवेदना पहचानी है। यहाँ चाँदनी रात में भ्रमर रजनीगंधा की सुगंध से अभिभूत है। ---

कुछ मतवाले भ्रमर उड़ चले
रजनीगंधा की सुगंध ले।'[2]

सीपी-रचित रेत --

गंधभरी उन्मद साँसें चल रहीं मूक रेखाओं-सी
क्षण-क्षण उठते-गिरते हिम-से श्वेत वक्ष पर बायाँ हाथ।'[3]

यहाँ कवि ने नायिका की साँस में गंध की संवेदना पहचानी है।

शब्दों से परे ---

इस मुक्तक-काव्य में कवि ने प्रेयसी से मिलन के मादक क्षणों में गंध की संवेदना को प्रस्तुत किया है ---

तुम्हारी आँखें कुछ कहने को झुक-सी रही थीं
और साँसे अँटक कर रुक-सी रही थीं
उनींदी पलकों की कोरों में केसर के डोरे लहराते थे
सुगंध के बादल उड़-उड़कर
मेरे ओंठों से टकराते थे।'[4]

---

1. यहाँ सभी काव्यों से रंग-योजना का उदाहरण विस्तारभय के कारण नहीं दिया जा रहा है।
2. 'चाँदनी', पृ0 16
3. 'सीपी-रचित रेत', पृ0 45
4. 'शब्दों से परे', पृ0 43

बूँदें : जो मोती बन गयीं :---

(1) 'यों तो सभी रातें भी कहाँ व्यतीत एक तरह होती हैं
कुछ काजल-सी काली और कुछ कस्तूरी-सी महमह होती हैं।'[1]

यहाँ कवि को विशेष क्षण में रात भी कस्तूरी की गंध से युक्त प्रतीत होती है।

(2) रजनीगंधा-सी महकती हुई साँसें
गुलाब की कली-से अरुणाभ अधर
वसंत-सा गदराया तुम्हारा रूप
कितना अद्भुत है।'[2]

(3) अधरों का स्वाद
साँसों की सुगंध
चितवनों का बाँकपन।'[3]

ऊपर के दोनों उदाहरणों में कवि अपनी प्रेमिका की साँसों की सुगंध से बेसुध है।

नाद-व्यंजना अथवा अनुरणनात्मकता

कवि गुलाब के प्रबंधों की भांति मुक्तकों में भी नाद-व्यंजना के भिन्न-भिन्न उदाहरण मिलते हैं। यथा --

(1) शब्दों की पुनरावृत्ति के द्वारा ध्वनि-चित्र निम्नलिखित पंक्तियों में उत्पन्न किया गया है --

नाच उठें कण-कण छवि में भर
ताल-ताल पर थिरक-थिरककर
मंत्रमुग्ध, जड़, चेतन, थर-थर।'[4]

---

1. 'बूँदे : जो मोती बन गयीं', पृ0 4
2. 'बूँदे : जो मोती बन गयीं', पृ0 39
3. वही, पृ0 39
4. 'कविता', पृ0 4

(2) मेरी पायल की छूम-छनन
गुंजित कर देती जगउपवन।[1]

चांदनी में ध्वन्यर्थ-व्यंजना के सुन्दर उदाहरण मिलते हैं --

(क) तृषित पपीही सी-पी पी पी, उर से लगी पुकारती
तारों की सज आरती।[2]

यहाँ वर्णों की आवृत्ति से नाद उत्पन्न किया गया है।

(ख) गुनगुन गाती धीमे-धीमे
मधुर स्वप्न दुहराती जी मे।[3]

नूपुरबँधे चरण से शब्द-नाद के दो उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत हैं --

(1) फिरती फुदकती टिटहरी
मैना, मयूरी, गिलहरी
टुट-टुट कहीं, टी-टी कहीं
पी-हू कहीं, पी-पी कहीं
ढोलक कहीं, बाजे कहीं
झूले कहीं, झाँझें कहीं।[4]

(2) थे मृदंग गुंजित, वीणा की सम पर झम से होती
किणण किंकिणी, रुनझुन-रुनझुन पायल झमक रही थी।'[5]

गांधी-भारती से अनुरणनात्मकता का एक उदाहरण द्रष्टव्य है --

'तड़-तड़ टूट गई हथकड़ियाँ, उमड़ी दृग-यमुना की धार
चरण स्पर्श करने को, सिंहासन हिंसक का डोल उठा।'[6]

---

1. 'कविता', पृ0 66
2. 'चांदनी', पृ0 39
3. 'चांदनी', पृ00 39
4. वही, पृ0 20
5. पृ0 120
6. पृ0 10

सीपी-रचित रेत से ध्वन्यर्थ व्यंजना के दो उदहारण प्रस्तुत हैं --

(1) **या सागर के तीर श्वेत परियों-से फिर-फिर, फहर-फहर**
जहाँ थिरकती लहरें, हम दोनों के दो सुखमय परिवार।[1]

(2) **रिम-झिम, रिम-झिम बरस रही हैं घनी घटायें पावस की**
दूबों से पूरित मेरे आँगन में पहरों से आकर।[2]

शब्दों की पुनरावृत्ति के द्वारा नाद-व्यंजना का एक सुन्दर उदाहरण **आयु बनी प्रस्तावना** से द्रष्टव्य है --

'रुक-रुक झमक-झमककर बौछार हो रही है
बिजली चमक-चमककर उस पार हो रही है।[3]

व्यक्ति बन कर आ में गुरु-गंभीर भीषण रव को ध्वन्यात्मक शब्द के द्वारा पूर्त रूप देने का प्रयास किया गया है --

बिजली चमके चाहे बादल गड़गड़ाये
कहीं से भी तेरा कोई संकेत तो आये।[4]

बिम्ब-विधान

कवेवर गुलाब के मुक्तक-काव्यों में सभी प्रकार के बिम्बों (चाक्षुष बिम्ब, श्रावणिक बिम्ब, स्पर्श-बिम्ब, घ्राण-विषयक-बिम्ब रसना-बिम्ब और मिश्रित बिम्ब) की योजना है।''[5]

(1) **कविता** से चाक्षुष बिम्ब का एक उदाहरण नीचे दिया जा रहा है --

विजन में एकाकिनी अनजान

---

1. 'सीपी-रचित रेत', पृ0 7
2. वही, पृ0 46
3. पृ0 55
4. पृ0 47
5. चतुर्थ अध्याय में बिम्ब की परिभाषा और स्वरूप का विश्लेषण हो चुका है। अतः विस्तार भय से बचना ही शोधकर्ता का अभीष्ट है।

रूप-अप्सरि ! मधुरिमे छविमान !
चपल अलकों बीच करतल टेक
गा रही भूले पथिक का गान।[1]

चाक्षुष-बिम्ब का एक दूसरा उदाहरण **चाँदनी** से द्रष्टव्य है ---

मुख पर उड़ी लटें घुँघराली
झुकी चिबुक, ग्रीवा छविशाली
कंपित वक्षस्थली छिपा ली
अंचल ने लहरा।[2]

ऊपर का उदाहरण चित्रात्मक चाक्षुष-बिम्ब का है। अब सौंदर्यमूलक चाक्षुष-बिम्ब **चांदनी** से ही द्रष्टव्य है --

कच के बोझ रही धँस एड़ी
लंक लचकती तिरछी, बेंड़ी
रूप-भार से टेढ़ी-टेढ़ी
उतरी-सी किन्नरी, परी-सी, डरी-डरी-सी
चाँदनी कुसुम-छरी-सी।[3]

बलि-निर्वास से गत्यात्मक चाक्षुष बिम्ब का एक उदाहरण प्रस्तुत है --

'सुख-दुख की लहरों पर तिरती
क्षण-क्षण में उठ-उठकर गिरती।[4]

अत्यन्त ही चित्रात्मक चाक्षुक-बिम्ब का एक उदाहरण **सीपी-रचित रेत** से इस प्रकार है --

धूल भरी पलकें मलती, अलकें कपोल से खिसकाती
बारबार कटि-वसन खींचती, विस्मृत खोयी-सी निज में,

---

1. 'कविता', पृ0 49
2. 'चाँदनी', पृ0 17
3. वही, पृ0 35
4. 'बलि-निर्वास', पृ0 14

शिथिल करों से पोंछ अधर पर से रवि के चुंबन, गाती
कौन, आह ! तुम ओसकणी-सी जग के सूखे सरसिज में ?[1]

चाक्षुष बिम्ब के कुछ और उदाहरण --

(1) हो गये और अरुण वर्ण अधर तरुणी के
दीप्त आवेशभरी, ऐंठ भवन से निकली
लाज से मोड़ चिबुक, स्नेहभरी, सकुचाती
ओंठ के पास पहुँच, आप तड़ित-सी उथली।[2]

(2) बिखरी जाती थी उसकी लट
उड़ा जा रहा था अरुणिम पट
चूर्ण पड़ा था एक ओर घट
हाथों से छुटकर
छूटकर साथी-सहेलियों से
और गाँव की नवेलियों से
मौन खड़ी थी हथेलियों से
मुख को संपुट कर।[3]

(3) फिरे, सब फिरे
लहरों के बीच हम अकेले ही तिरे
कोई द्वार से ही, कोई गाँव के सिवान से
कोई पनघट से, कोई खेत-खलिहान से
जानकर फिरे कोई फिरे अनजान-से।[4]

अथवा --

मैंने यह साँप क्यों पकड़ा है !

---

1. 'सीपी-रचित रेत', पृ0 51
2. 'रूप की धूप', पृ0 90
3. 'नूपुर बँधे चरण', पृ0 39
4. 'शब्दों से परे', पृ0 5

कि जिसने उलटकर मुझकों ही सिर से पाँवों तक जकड़ा है[1]

(4) श्वेत-श्याम अश्वों से जुते आकाश के नीले रथ पर
तू कहाँ जा रहा है ?
पहियों से लकीर-सी बनाता हुआ,
तारों की धूल उड़ाता हुआ,
मुझे तेरा गरुड़-केतन नज़र आ रहा है।[2]

(5) पर मैं बेबस-सा सूरज की गठरी लादे
पग-पग पर कंधा बदलता रहा हूँ
मैं फिर भी चलता रहा हूँ।[3]

अथवा --

जब भी किसी ने प्यार से देखा है
उसने ग्रीवा नीची कर ली है,
काँपती उँगलियों की पोर से
आँचल की कोर धर ली है।[4]

(ख) स्पर्श-सम्बन्धी बिम्ब --

कवि गुलाब के अधिकांश मुक्तकों में स्पर्श सम्बन्धी बिम्ब के उदाहरण मिलते हैं।

यथा --

(1) रश्मि रेशमी घूँघट काढ़े
मूर्तित नभ-गवाक्ष के आड़े
कातर भुजबन्धन में गाढ़े

---

1. 'शब्दों से परे', पृ0 21
2. 'व्यक्ति बन कर आ', पृ0 55
3. 'बूंदे : जो मोती बन गयीं, पृ0 3
4. 'बूंदे : जो मोती बन गयीं', पृ0 55

मुड़ती-सी प्रतिकार कर उठी नई-नई चाँदनी
चाँद से रूठ गई चाँदनी।[1]

(2) गंधक के निर्झर-सी थी वह कोमल अंगोंवाली
जिसके आलिंगन में होती ऊष्ण रुधिर-नस-जाली
स्पर्श अरुण अधरों की हलका मदिरा-सा उत्तेजक
सुलगा देती आग हृदय में, श्वास-सुरभि मतवाली।[2]

(3) सिन्धु में यामिनी उतरती है
निर्वसन दामिनी उतरती है
ज्यों गगन की सघन भुजाओं में
नव उषा-कामिनी उतरती है।[3]

(4) एक संध्या वह जो तुम्हारी राहों में गुज़री है
और एक वह जो तुम्हारी बाँहों में गुज़री है
दोनों एक जैसी ही कैसे हो सकती हैं !"[4]

अथवा --

आकाश में उड़कर
शत-शत वज्रघात झेलता हुआ
तुम्हें अपनी बाँहों में भींच लूँगा।[5]

(5) ज्योंति दे अपार चाहे गहन अँधेरा कर
मेरे चारों और निज बाहुओं का घेरा कर
तार न हों नीरव उँगलियों को फेरा कर
कर रहा हूँ मैं काम तेरा, तू मेरा कर।[6]

---

1. 'चांदनी', पृ0 7
2. नूपुरबँधे चरण, पृ0 24
3. 'रूप की धूप', पृ0 102
4. 'बूँदें : जो मोती बन गयीं', पृ0 4
5. वही, पृ0 26

(ग) घ्राण-विषयक बिम्ब

इस तरह के बिम्बों के उदाहरण **चाँदनी** और **रूप की धूप** मुक्तक-काव्य से प्रस्तुत किये जा रहे हैं --

(1) **कुछ मतवाले भ्रमर उड़ चले**
रजनीगंधा की सुगंध ले।[1]

(2) अंग पुलकमय, चितवन मृदु-मृदु
मेघों में अवगुंठित नव वधु
बाँट रही कण-कण जीवन-मधु
गंध-अंध दिशिवात, डोलती मुग्ध मधुप-अवली
चाँदनी खिले फूल-सी खिली।[2]

(3) काँप कर मूँद लिये नेत्र पथिक ने अपने
साँस की गंध गई साँस सिहर से भरती
चेतना-चंद्र घिरा श्याम अलक-मेघों से
आँख के बीच झुकी आँख मधुप-सी डरती।[3]

(घ) श्रावणिक बिम्ब --

नाद-व्यंजना के समस्त उदाहरण श्रावणिक बिम्ब के उदाहरण हैं। विस्तार भय के कारण उदाहरणों की पुनरावृत्ति नहीं की जा रही हैं।

(ड.) रसना-विषयक बिम्ब

गुलाब के मुक्तकों में स्पष्टतः रसना-विषयक बिम्ब के उदाहरण नहीं मिलते हैं ; लेकिन मिश्र बिम्ब के उदाहरणों में रसना-विषयक बिम्ब के संकेत मिल जाते हैं। यथा ---

(1) **अधरों का स्वाद**
साँसों की सुगंध
चितवनों का बाँकपन।'[4]

---

1. 'शब्दों से परे', पृ0 83
2. 'चाँदनी', पृ0 15
3. 'चाँदनी', पृ0 50
4. 'रूप की धूप', पृ0 86

(च) मिश्रित-बिम्ब

मिश्रित बिम्ब के कुछ उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं ---

(1) मधुर गंध की लपटे उठतीं घुली-मिली साँसों से
अधर पी रहे थे अधरों को झुक-झुककर प्यासों-से
मृदुल मोम की पुतली-सी वह आलिंगन में घुलती
कितना सुख संग्रह कर पाती कंपित भुजपाशों से।[1]

यहाँ ऊपर की एक पंक्ति में घ्राण-विषयक बिम्ब का उदाहरण है, और नीचे की दो पंक्तियों में स्पर्श-सम्बन्धी बिम्ब है।

(2) कहीं सरो के घने बाग़ और कहीं
महकती हुई झीलें बुलाती थीं ;
हंसों और सारसों की टोलियाँ
पर फड़फड़ाकर उड़ जाती थीं।[2]

यहाँ दूसरी पंक्ति में घ्राण-विषयक बिम्ब है एवं अन्तिम पंक्ति में नाद-बिम्ब है। अतः यह मिश्र बिम्ब का उदाहरण है।

अलंकार-योजना

कविवर गुलाब के प्रबंध-काव्यों की तरह मुक्तक-काव्यों में भी भारतीय एवं पाश्चात्य दोनों ही प्रकार की अलंकार-योजना दिखायी पड़ती है। इन मुक्तक-काव्यों में प्राचीन अलंकारों को छोड़कर लाक्षणिक चमत्कार के द्वारा भाषा को अभिनव अर्थ प्रदान किया गया है। फिर भी भारतीय अलंकार इन मुक्तक-काव्यों में न्यूनाधिक रूप से मिल ही जाते हैं। यथा ---

कविता -- इस मुक्तक-काव्य में विशेष रूप से रूपक और उपमा अलंकार के उदाहरण मिलते हैं। जैसे ---

रूपक

(क) 'कुसुम-बाण लेकर वसंत पल में दौड़ा आया
कोयल ने गाया।'[3]

---

1. 'बूँदें : जो मोती बन गयीं', पृ0 39
2. 'नूपुरबँधे चरण', पृ0 . 26
3. 'बूँदें : जो मोती बन गयीं', पृ0 3

(ख) 'चरण-कमल धर शैल-शृंग पर
उतरो सुंदरि ! जैसे निर्झर।'[2]

उपमा

स्वप्न-सा फैला गगनतल
नींद-सी संध्या रही ढल
पुतलियों-से मेघ जिसमें मौन चित्रित हो रहे हैं
आज तन-मन खो रहे हैं।[3]

वीप्सा

नाच उठें कण-कण छवि में भर
ताल-ताल पर थिरक-थिरककर।[4]

अपह्नुति-अलंकार

तारे क्या हैं ये ज्वालाकण मेरी आहों से बरसे हैं
ये भी मुझसे ही सरसे हैं।[5]

वृत्त्यनुप्रास

'कवि कलित-कल्पना के स्तर पर
देता मुझको गीतों में भर।[6]

यहाँ एक व्यंजन 'क' की अनेक बार आवृत्ति हुई। अत : वृत्त्यनुप्रास है।

चांदनी

चाँदनी की सभी कविताओं में मानवीकरण की योजना है। प्राचीन अलंकारों की दृष्टि से इसमें उपमा और रूपक की प्रधानता है। यथा ---

उपमा

(क) 'शत भावोद्वेलित उर कोमल

---

1. 'कविता', पृ0 26
2. वही, पृ0 84
3. वही, पृ0 13
4. वही, पृ0 4
5. 'कविता', पृ0 32
6. वही, पृ0 37

चकित मृगी-सी चितवन चंचल
कोयों में खोया कौतूहल
शैशव में सोकर यौवन में जगी हुई-सी
चाँदनी छुईमूई-सी। [1]

(ख) उतरी-सी किन्नरी, परी सी, डरी-डरी-सी
चाँदनी कुसुम-छरी सी। [2]

रूपक-अलंकार

किरण-कुंचित कच सँवारे
गूँथ सरसिज विकच तारे
समझ ऊषा-काल आयी
व्योम-गंगा के किनारे
स्वर्ण-निर्मित इन्दु-घट ले क्षीण-कटि निशि-कामिनी
आज राका-यामिनी। [3]

निम्न पंक्तियों में एक ही साथ रूपक, उत्प्रेक्षा, और उपमा अलंकार की योजना है --

किरण-वृन्तों पर सुनहरी
कुन्द सित घन-पंक्ति फहरी
नखत-मणियाँ ओस-कणियाँ
पवन पिंग पराग-लहरी
हँस रही ध्रुव के हिमावृत कुंज में मानो दुपहरी
पीत रवि-छवि शीत चन्द्र-प्रकाश-सी
चाँदनी हिम-हास सी। [4]

प्रतीप
चल चरण के मनहरण नूपुर बजे
बंक ग्रीवा देखकर सरसिज लजे।[5]

1- चांदनी, पृ0 34
2- वही, 35
3- 'चाँदनी' , पृ0 4
4- 'चाँदनी' , पृ0 8
5- वही, पृ0 31

इसमें प्रसिद्ध उपमान 'सरसिज' का अनादर किया गया है। अतः प्रतीप अलंकार है।

नीचे की पंक्तियों में रूपक और रूपकातिशयोक्ति अलंकार की छटा दर्शनीय है --

मलय-अंचल तरुवलय में फँस रहा
पीठ पर उड़ नाग काला डँस रहा [1]

ऊपर की दूसरी पंक्ति में उपमेय (केश) का निवारण कर केवल उपमान (काला नाग) का कथन है। अतः रूपकातिशयोक्ति अलंकार है।

बलि-निर्वास (काव्य-नाटक)

इस काव्य-नाटक में उपमा, उत्प्रेक्षा और रूपक-अलंकार की प्रधानता मिलती है।

उपमा

(क) भू नभ से शत अर्बुद सेना बढ़ी आ रही सागर-सी

(ख) दशों दिशायें ध्वनि से पूरित कंपित पीपलपत्तों-सी[2]

उत्प्रेक्षा

सप्त वर्ण अश्वों से खिँचते, स्वर्ण-किरण-दीपित रथ पर
द्वादश-आत्मा भानु खड़े हैं मानों आज प्रलय-पथ पर[3]

रूपक

मधुकर यह मधुवन क्यों भूले
नंदन भी कुम्हलाये इसकी छाया जो छू ले
पाटल-अधर, नासिका-चंपा, कच-तमाल-कूले।[4]
मुक्तावलि-मिस पंक्तिवद्ध सित बैठे हैं बगुले

1- चाँदनी, पृ0 31
2- 'बलि-निर्वास, पृ0 10
3- वही, पृ0 11
4- वही, पृ0 35

मेरे भारत, मेरे स्वदेश :-

यमक अलंकार --

रण-रव सुन बोली प्रिया, ग्रीवा फेर कृपाण
ऐसी लट का क्या करू (कि), लटका प्रिय का ध्यान !¹

यहाँ 'लटका' शब्द की आवृत्ति में यमक अलंकार है। प्रथम 'लटका' का अर्थ 'केश का' है और दूसरो का अर्थ आकर्षित होना है।

अपह्नुति-अलंकार

रण को सज, बोली प्रिया, प्रिय ! मत करें विचार
लीक न यह सिंदूर की, शीश टँगी तलवार। ²

रूप की धूप--

रूपक-अलंकार

किरण-कर से कुमुद-उर पर लिखा इतिहास हूँ मैं
लहर-तूली-रचित जलचित्र का आभास हूँ मैं। ³

उपमा

हर दिशा द्वार जुड़ा पाता हूँ
साथ पलभर न छुड़ा पाता हूँ
भाग्य पीछे जयन्त के शर-सा
मैं जिधर उड़ा-उड़ा जाता हूँ। ⁴

यथासंख्य

1- 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश, पृ0 34 2- 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश, पृ0 23
3- 'रूप की धूप, पृ0 8 4- वही, पृ0 20

नेत्र विष, अमृत हैं, शराब भी हैं
मधुप है, चाँद हैं, गुलाब भी हैं
कौन इनसे न मर, जिये, झूमे
मौन हैं, प्रश्न हैं, जवाब भी हैं। [1]

यहाँ प्रथम चरण में जिस क्रम से विष, अमृत और शराव का कथन है, प्रत्येक का द्वितीय और तृतीय चरण में अन्वय किया गया है। विष-मधुप-मर (विष का वर्ण मधुप की तरह काला है और काम है मारना) ; अमृत-चाँद-जिये (अमृत का रंग चाँद की तरह सफेद है और काम जिलाना; शराव-गुलाव-झूमें (शराव का रंग गुलाव की तरह लाल है, काम नशे में करना)। इस प्रकार संख्यानुसार अन्वय करने पर इस कविता का चमत्कार बढ़ जाता है। अतः यथासंख्य अलंकार है।

विरोधाभास-अलंकार

दृष्टि तिरछी है और सीधी भी
स्नेह से बिंधी भी, अबींधी भी
सलज, अधीर, मौन भी मुखरित
जग रही और कुछ उनींदी भी। [2]

असंगति-अलंकार

'बोलना किसी से, देख लेना किसी और को
हृदय किसी का छीन, देना किसी और को
आपकी कला थी किन्तु काल बनी प्राण की
नाव में बिठा के मुझे खेना किसी और को।' [3]

अथवा
गिरी लाज, पलकें उठीं, चली भौंह कर घात
उनके मुँह पर आ गयी, मेरे मन की बात।'

1- 'रूप की धूप', पृ0 31
2- वही, पृ0 64
3- वही, पृ0 76
4- रूप की धूप , पृ0 140

उल्लेख-अलंकार

न तुम्हारा न हमारा है रूप
फूल है, ओस है, पारा है रूप
साँझ की धूप, चमक बिजली की
टूटता हुआ सितारा है रूप।[1]

नूपुरबँधे चरण :-

उपमा

खिली कचनार-सी बाँहें
न मन की मिल सकी थाहें
उफनते दूध-सा यौवन
विकसते फूल-सी चाहें। [2]

रूपक

सागर की लहरों पर थिरक-थिरक कर
नाच रही है किरण-बालिका थर-थर[3]

उत्प्रेक्षा

मखमल की कालीनों पर बिखरी थी मौक्तिक-माला
हरे धान की बाली पर ज्यों पड़ा हुआ हो पाला[4]

वृत्त्यनुप्रास

1- 'रूप की धूप', पृ0 46
2- 'नुपूरबँधे चरण', पृ0 83।
3- वही, पृ0 9
4- 'नूपुरबँधे चरण', पृ0 22

मेरी कविता कोकिल की काकली
मैं कुंजों में करता कल्लोल रहा हूँ।[1]

यहाँ एक 'क' व्यंजन की अनेक बार आवृत्ति हुई है।

सीपी-रचित रेत :-

इस मुक्तक काव्य में उपमा, रूपक और उत्प्रेक्षा अलंकार की प्रधानता है। यथा --

उपमा

कच्ची धूप-सदृश कोमल तन, चिकनी काली अलकों में
दीपशिखा-सी वंदन-रेखा, गौर भाल पर विंदु अरुण[2]

उत्प्रेक्षा

तुम इतनी मधुमय हो मानों उमड़ चली मधु-सरिता ही
गोरी सिकता की बाहें फैलाकर, सागर से मिलने[3]

रूपक

पृथ्वी रंगमंच है जिसका, सब प्रकार से पूर्ण, महान
अपनी अलख लेखनी से जगपति ने जिसको स्वयं लिखा
काल-पृष्ठ पर, उस दुखान्त नाटक का मैं नायक गतिमान
भेजा जिसको विधि-निर्देशक ने सब अग्रिम कृत्य सिखा।[4]

1- 'नूपुर बँधे चरण', पृ0 75
2- 'सीपी-रचित रेत' , पृ0 28
3- वही, पृ0 25
4- वही, पृ0 33

अपह्नुति अलंकार

नयन नहीं दो चन्द्रकान्त मणियाँ हैं शशि में होने से 1
जिनकी हिम-किरणें निशि-दिन शत-शत निर्झर-धाराओं-सी
समा रही हैं मेरे मानस-मरु में कोने-कोने से
बिछा सघन हरियाली उस पर, तम-पथ पर ताराओं-सी

आयु बनी प्रस्तावना

इस मुक्तक-काव्य में निम्नलिखित अलंकारों की योजना है ---

उपमा

गुलाबी सीप-सा आनन
खिले कचनार जैसा तन
सकुचते प्राण, पलकों में
अदेखी प्रीति के चुबंन। [2]

विरोधाभास-अलंकार

मैं जीत-जीतकर हार गया, जग हार-हारकर जीत गया
आधा जीवन तो बीत गया। [3]

रूपक-अलंकार

अश्रु-पुलिन पर स्नेह-सुमन चुनता मैं
प्राणों की घाटी में पहुँच गया हूँ। [4]

वृत्यनुप्रास

1- 'सीपी-रचित रेत' , पृ0 12
2- 'आयु बनी प्रस्तावना' , पृ0 70
3- वही, पृ0 46
4- वही, पृ0 25

पीड़ाकुल पलकें, प्राणों में प्रतिक्षण तीव्र व्यथा का दंशन।[1]

शब्दों से परे --
इस मुक्तक - काव्य में निम्नलिखित अलंकार पाये जाते हैं ---

उपमा

चंदन-सा तन-प्राण
घिसता रहा। [2]

वृत्त्यनुप्रास :-

गौरव, गति, गंध, गान
रिसता रहा। [3]

वीप्सा

कुछ भी नहीं किया
केवल दिया, दिया, दिया। [4]

यहाँ "दिया, दिया, दिया" की आवृत्ति में विप्सा अलंकार है।

विरोधाभास

कैसे डूब-डूब कर भी यहाँ तिरता रहा मैं सदा
मेरा यह जीवन मेरे लिये भी पहेली है।[5]

1- वही, पृ0 7
2- 'शब्दों से परे' , पृ0 3
3- वही, पृ0 3
4- वही
5- वही, पृ0 86

व्यक्ति बनकर आ :-

इस मुक्तक-काव्य में शास्त्रीय अलंकारों की योजना नहीं के बराबर है। कारण यह है कि यह काव्य छायावादोत्तर 'नयी कविता' के भाव-शिल्प से पूर्णतः प्रभावित है। फिर भी एक दो अलंकार मिल जाते हैं ---

उपमा

जाने कैसा वीरान है यह डेरा
साँय-साँय करती हवायें और
मुँह फाड़े अजगर-सा अँधेरा। [1]

बूँदें : जो मोती बन गयीं

इसमें निम्नलिखित अलंकारों की प्रधानता है --

रूपक

मिलने को आतुर चंपई भुज-लताएँ
कजरारे नयनों के श्याम भ्रमर। [2]

उपमा

(1) तुम्हारे साथ बिताये हुए क्षणों की स्मृतियाँ
शोकेस मैं टँगी रंगीन तितलियों-सी
मेरी चेतना में जड़ गयी हैं।' [3]

(2) कच्चे दूध-सी उन चितवनों में
केसर की सुगंध कब लहरायी थी,
पता नहीं।' [4]

1- 'व्यक्ति बन कर आ' , पृ0 47 2- वही, पृ0 31
3- 'बूँदें : जो मोती बन गयीं' , पृ0 32 4- वही, पृ0 33

विरोधाभास

प्रेम कभी मरता नहीं है
वह जितना डूबता है, उतना उभरता है
जितना टूटता है, उतना जुड़ता है
जितना बिखरता है, उतना सँवरता है।[1]

पाश्चात्य अलंकार

पश्चिमी काव्यालंकारों (क) मानवीकरण, (ख) ध्वन्यर्थ-व्यंजना (ग) विशेषण-विपर्यय, तीनों अलंकारों के बहुत सारे उदाहरण कविवर गुलाब के मुक्तक-काव्यों में मिलते हैं। यथा --

(क) मानवीकरण [2]

गुलाब जी के मुक्तक-काव्यों में मानवीकरण के उदाहरण अन्य अलंकारों की तुलना में बहुत अधिक हैं। **चाँदनी** के अधिकांश गीतों में मानवीकरण की योजना है। 'इसी से यहाँ चाँदनी कहीं पनहारिन बनी हुई है, कहीं ग्वालिन, कहीं परी, कहीं गायिका और कहीं कवयित्री।' [3]

चाँदनी का मानवीकरण निम्न उदाहरणों में देखा जा सकता है ---

(क) अंग रँगे तारों की झलकें
नत चितवन, निद्रालस पलकें
पगतल-चुंबित श्यामल अलकें
आधी रात, विचरती जूही-वन में बाला कोई
चाँदनी खिली दूध की धोई। [4]

1- बूँदें जो मोती बन गयीं, पृ0 44
2- गुलाब जी के मुक्तकों में मानवीकरण के इतने उदाहरण मिलते हैं कि उनके उल्लेख से अनावश्यक विस्तार का भय है। इसलिए कुछेक मुक्तकों से ही उदाहरण दिये जा रहे हैं
3- 'नयी कविता : नये कवि', विश्वम्भर मानव, पृ0 105
4- 'चाँदनी' , पृ0 9

(ख) अलकों में मुक्ताहल भरके
भाल-मध्य शशि-बिंदी धरके
हँसी सिँगार सोलहों करके
नभ पर खड़ी-खड़ी
आज तो पूनो मचल पड़ी।[1]

(ग) सह न सकी तारों का जलना
लघु कुसुमों का देख मचलना
कर में लिये पवन का पलना
धरती पर उतरी
चाँदनी चन्द्र लोक की परी। [2]

(घ) चाँदनी कविता लिखती उन्मन
कापी-सदृश खुली गिरि-घाटी
कर में रजत-निर्झरी-साँटी
लिखलिख मिटा रही है पाटी
दोलित-वक्ष मधुर भावों में रही स्वयं कविता बन। [3]

कविता में वर्षा का नारी के रूप में मानवीकरण किया गया है --
विजन को बना विमल उद्यान
जगाती जगती का उल्लास
पहन हरियाली का परिधान
आ गई वर्षाऋतु सविलास। [4]

नूपुरबँधे चरण में कवि ने उषा का मानवीकरण किया है --
कौन तुम, पूर्व क्षितिज के पार ?
प्रति प्रभात आती हो, रूपसि ! कर षोड़स श्रृंगार [5]

शब्दों से परे मुक्तक-काव्य में चाँद का मानवीकरण देखा जा सकता है --

---

1- 'चाँदनी' , पृ0 10
2- वही, पृ0 16
3- वही, पृ0 23
4- 'कविता' , पृ0 62
5- 'नूपुर बँधे चरण' , पृ0 67

तभी चाँद पूर्णिमा का बाँका
उठा इठलाता हुआ दाँये अमलतास में
और वहीं पर से मुस्काता हुआ मुझ पर
मधु के उड़ेलने लगा ज्यों घट भर-भर [1]

बूँदे : जो मोती बन गयीं से हवा और चाँद का मानवीकरण ---
आवारा हवाएँ खड़खड़ाएँगी
खलनायक चाँद कभी कभी टोकेगा। [2]

(ख) **ध्वन्यर्थ-व्यंजना** : - शब्दों के नाद द्वारा ही अर्थ की व्यंजना को ध्वन्यर्थ-व्यंजना कहते हैं। गुलाव जी के मुक्तकों में इसकें वहुत उदाहरण मौजूद हैं।' [3]

(ख) **विशेषण-विपर्ययः** कविवर गुलाव के मुक्तक-काव्यों से इसके निम्नलिखित उदाहरण मिलते हैं ---

(1) सिहर रहीं सुकुमार लताएँ
कौन विकलता को पहिचाने। [4]

सिहरना व्यक्ति का विशेषण है, लताओं का नहीं, अतः, विशेषण-विपर्यय है।

(2) यह निर्दोष, गुलाबी कज्जल आँखों का ममतामय रंग [5]

यहाँ आँखों को निर्दोष कहा गया है।

(3) देख कुमारी को विस्मित थी चेतनता दृग मलती। [6]

विस्मित होना व्यक्ति का गुण है चेतनता का नहीं। यहाँ चेतना के लिए विस्मित विशेषण का प्रयोग हुआ है। अतः विशेषण-विपर्यय है।

(4) जब सुनहली चेतना के ज्वार में उड़ती-हुई-सी
व्योम को छूने चलोगी। [7]

1- 'शब्दों से परे' , पृ0 47 2- 'वूँदें : जो मोती वन गयीं', पृ0 6
3- इस शोध-प्रबंध के प्रस्तुत अध्याय में ही नाद-व्यंजना के बहुत उदाहरण दिये गये हैं।
4- 'कविता' , पृ0 71 5- 'सीपी-रचित रेत' , पृ0 28
6- 'नूपुर बँधे चरण' , पृ0 29 7- 'आयु बनी प्रस्तावना' , पृ0 39

यहाँ 'चेतना' के लिए 'सुनहली' विशेषण का प्रयोग हुआ है। चेतना का कोई रंग नहीं होता।

(5) दूधिया हँसी, अंग केसर से
रंग खुल रहा चाँदनी में आज। [1]

यहाँ 'हँसी' के लिए 'दूधिया' विशेषण का प्रयोग हुआ है।

(6) जो तुम्हारे प्राण का अनुराग सब मेरे लिये है
जो सुगंधित चेतना की आग सब मेरे लिये है। [2]

यहाँ 'चेतना' के लिए 'सुगंधित' विशेषण का प्रयोग हुआ है।

(7) हारती गयी पर न हारी है
हार में भी सदैव प्यारी है
भाँवरें सैकड़ों भरीं फिर भी
रूप की दृष्टि चिर-कुँमारी है। [3]

यहाँ 'रूप की दृष्टि' के लिए 'कुँवारी' विशेषण का प्रयोग हुआ है।

(8) रात है आज भग्न हारों की
काँपते दीप, रुँधे ज्वारों की
भूमि पर सिसक रही कलियों की
व्योम पर तड़प रहे तारों की। [4]

यहाँ 'सिसकना' और 'तड़पना' विशेषण का प्रयोग क्रमशः 'कलियों' और 'तारों' के लिए हुआ है।

(9) तुम जिसे रौंद बढ़ गयी आगे
हाय वह एक कुँवारा मन था। [5]

(10) वह चंदनगंधी दूधिया हँसी [6]

1-'रूप की धूप' , पृ0 45। 2- 'रूप की धूप' , पृ0 54
3- वही, पृ0 62 4- 'रूप की धूप' , पृ0 69
5- वही, पृ0 71 6- 'वृँदें : जो मोती बन गयी' , पृ0 32

(11) वह कुँआरी कामना जो मैं आँखों में आँज कर आयी थी
थी मुझे लौटा दे ;
मेरी रातों को फिर वही दूधिया चाँदनी
और मेरे सवेरों को वही चटकती धूप दे दे। [1]

छन्द-विधान

कविवर गुलाब के मुक्तक-काव्यों में प्रयुक्त छन्दों को निम्न वर्गों में विभक्त किया जा सकता है ---

(क) शास्त्रीय छन्द
(ख) अंग्रेजी साहित्य के छन्द
(ग) अरबी-फारसी के छन्द
(घ) मौलिक छन्द

(क) शास्त्रीय छन्द

गुलाब के मुक्तक-काव्यों में शास्त्रीय छन्दों का प्रयोग कम हुआ है। फिर भी उनके प्रिय शास्त्रीय छन्द का उल्लेख करना आवश्यक है ---

दोहा -- इसका प्रयोग कवि ने 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश' तथा रूप की धूप में किया है।

इसके प्रत्येक चरण में बारह मात्राओं का प्रयोग किया गया है। यथा ---

(1) **मरे न कविता रसमयी, मरे न सत्य विचार**
रण में मरे न शूरमा, उठ-उठ करे हँकार। [2]

(2) **'सौ बारी रोगी मरे, भोगी मरे हज़ार**
लाख बार कायर मरे, वीर एक ही बार। [3]

(ख) अंग्रेजी के छन्द

गांधी-भारती तथा **सीपी-रचित रेत** में कवि ने अंग्रेजी के सॉनेट छन्द का प्रयोग किया है। इसे हिन्दी में चतुर्दशपदी भी कहा जाता है। चतुर्दशपदी

1- वही, पृ0 19 2- 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश' , पृ0 10
3- वही, पृ0 17

चौदह पंक्तियों में लिखा जाता है। इसके लिए छन्द का प्रतिबन्ध नहीं होता। एक सॉनेट में एक भाव या विचार का ही सांगोपांग वर्णन होता है। सामान्यतः सॉनेट के दो भाग होते हैं। प्रथम आठ पंक्तियों का एक भाग जिसमें विचार विकसित होकर द्वितीय छः पंक्तियों वाले भाग में प्रौढ़ता को प्राप्त करता हैं। प्रारम्भ में चार-चार पंक्तियों के तीन चौके होते हैं और अन्त में दो तुकान्त पंक्तियाँ होती हैं जिनमें पूरे सॉनेट का निचोड़ आ जाता है। इसका उदाहरण प्रस्तुत है ---

तुमने जीवन दिया हमें, हम तुम्हें मृत्यु दे बैठे आप।
यह विडम्बना ! हाय न जाने किन जन्मों के पाप उगे
एक साथ ही आज हमारे, दग्ध हृदय ले यह अनुताप
शांत हो सकेगा युग-युग तक, चाहे लोचन-अश्रु चुगें।
आह ! दयालू पिता, क्षमामय तुम, पर स्वर्गो का शासक
हमें करेगा क्षमा ! जाति का देख कलंक-पूर्ण यह कृत्य।
अपने ही कर खड्ग उठा बन जायँ स्वीय तनु के भक्षक
यदि ऐसे ही उठ कर दे विच्छिन्न शीश स्वामी का भृत्य
मानवता का त्राण कहाँ फिर ! पुत्र जनेगी जननी कौन
झेल प्रसव की पीड़ा दुस्सह ! कौन करेगा व्रत-पालन
सुत के हित ! पर नहीं, देखता हूँ मैं रक्तसना भी मौन
रहा पुकार तुम्हारा, 'ईश्वरः क्षमा करो इनका बचपन
ज्ञात नहीं है इन्हे कि क्या ये पाप कर रहें हैं अनजान।
इन्हें बुद्धि दो, सत्य दिखा दो, सन्मति दो इनको, भगवान ![1]

(ग) अरबी-फारसी के छन्द

अरवी-फारसी के छन्दों में कवि ने रुबाई और ग़ज़ल का प्रयोग किया है।

रुबाई

इस छन्द का प्रयोग **रूप की धूप** नामक मुक्तक-काव्यों के संग्रह में हुआ है। फारसी में रुबाई नामक छन्द चार मिसरों (चरणों) का होता है। इस छन्द में नीति के महत्त्वपूर्ण उपदेश नपे-तुले, थोड़े से शब्दों में, सुन्दर, आकर्षक,

---

1- 'गांधी-भारती' , पृ0 13

प्रभावशाली तथा प्रायः रूढ़ोक्तिपूर्ण (मुहावरेदार) भाषा में कहे जाते हैं। अरबी और फारसी साहित्य में रुबाइयों का बड़ा प्रचार रहा है जिनमें उमर खय्याम की रुबाइयाँ प्रसिद्ध हैं। **रूप की धूप** से रुबाई का एक उदाहरण द्रष्टव्य है ---

चाँदनी की कहीं सरकार नहीं होती है
फूल के हाथ में, तलवार नहीं होती है
जीत होती न कभी युद्ध के मैदानों में
प्यार की हार कभी हार नहीं होती है। [1]

गज़ल

कवि ने **सौ गुलाब खिले** , **पँखुरियाँ गुलाब की** और **कुछ और गुलाब** नामक ग़ज़ल-संग्रहों में उर्दू की ग़ज़ल की विधा का प्रयोग उर्दू, फारसी के छंदों में किया है। इसमें कवि ने अपनी ओर से रसान्विति और बिम्बात्मकता रखने का प्रयास किया है। उदाहरण के लिए एक-दो शेर-प्रस्तुत हैं ---

(1) **अब क्यों भला किसी को हमारी तलाश हो**
गागर के लिए क्यों कोई पनघट उदास हो।[2]

(2) **कहीं चोट सीने में गहरी लगी है !**
पलक आज उनकी भी नम देखते हैं ![3]

(घ) मौलिक छन्द

गुलाब के मुक्तकों का शिल्प छायावादी है। छायावाद के महत्त्वपूर्ण कवियों की तरह गुलाब ने भी छन्दों के बन्धन को स्वीकार नहीं किया है। **रूप की धूप** संग्रह में 'दोहा-शतदल' कवि का बिलकुल अभिनव प्रयोग है। इसमें विभिन्न अनुभवों और विचारों को नये प्रकार से अभिव्यक्त किया गया है। इस छन्द के प्रयोग द्वारा कवि ने अपनी मौलिकता का परिचय दिया है ---

गिरे, उठे, उठ-उठ गिरे, मरे, जी गये प्राण

1- 'रूप की धूप' , पृ0 6 2- 'पखुरियाँ गुलाब की', पृ0 12
3- 'सौ गुलाब खिले' , पृ0 19

सीधी बरछी सी बिँधी, उर तिरछी मुसकान। [1]

शब्दों से परे, व्यक्ति बन बनकर आ और बूँदें: जो मोती बन गयीं मुक्तक-संग्रह में कवि ने अतुकान्त छन्दों का भी प्रयोग किया है। यथा ---

(1) विदा हे प्राणों के सखा !
जीवन के सहचर !
आत्मा के बंधु !
अब कभी हमारी भेंट नहीं होगी !
काल की अंनत डोर में,
हमने मिलकर जो गाँठ लगायी थी
वह खुल गयी है [2]

(2) मुझे इसका दुख क्यों हो
कि मैंने अपनी प्रतिभा के अनुरूप
प्रसिद्धि नहीं पायी !
यह क्या कम है
कि तूने अपने प्रेम का दुर्लभ वरदान मुझे दिया,
मुझमें कुछ कर गुजरने की धुन जगायी।[3]

(3) अधरों का स्वाद,
साँसों की सुगन्ध,
चितवनों का बाँकपन,
चाहा तो यह था कि तुम्हारी प्रत्येक भंगिमा को
कोई नवीन आयाम दे दूँ,
प्रेम की हर अनुभूति को
कोई नया नाम दे दूँ। [4]

पर भाषा की एक सीमा होती है
आँसू की जो बूँद धरती पर जा गिरी

1- 'रूप की धूप' , पृ0 141 2- 'शब्दों से परे' , पृ0 30
3- 'व्यक्ति बनकर आ', पृ0 78 4- 'बूँदें: जो मोती बन गयीं' पृ0 3

वह पानी बनकर बह गयी
जो शब्दों की सीपी में पहुँच सकी
केवल वही मोती है

गुलाव के अन्य मुक्तकों का छन्द-विधान छायावादी है। गुलाब जी छन्दों के प्रति आग्रही भी हैं और अनासक्त भी। कुछ शास्त्रीय छन्दों का प्रयोग करके इन्होंने अपने छन्द-विधान की सामर्थ्य का अच्छा परिचय दिया है। मुक्त या अतुकान्त छन्दों का प्रयोग करके इन्होंने नवीन काव्य-चेतना से भी सान्निध्य स्थापित किया है। ऐसे स्थानों पर भी एक प्रकार की लयात्मकता दिखायी पड़ती है और कविता में प्रवाह मिलता है। निष्कर्षतः--छंद की दृष्टि से श्री गुलाब ने दोहा, रुबाई, साँनेट, गीत, मुक्तछंद सभी को स्वीकार किया है।' [1]

'नयी कविताः नये कवि', पृ0 114, विश्वम्भर मानव।

षष्ठ अध्याय

कवि गुलाब के प्रबंध-काव्यों के स्वरूप तथा स्थापत्य का वैशिष्ट्य

कवि गुलाब के प्रबंधकाव्यों के स्वरूप तथा स्थापत्य का वैशिष्ट्य

1- स्वरूप-विवेचन

प्रबंध-रचनाएँ युगों की देन होती हैं। उनमें रचनाकार की साधना, जातीय जीवन की विशेषताएँ और मानवता की प्रगति अभिव्यंजित होती है। प्रत्येक युग में प्रायः जीवन के आदर्श स्थापित होते रहते हैं। कभी वीर-पूजा का आदर्श प्रधानता पाता है, कभी भक्ति-साधना की महत्ता सर्वोपरि होती है और कभी राष्ट्र-सेवा का स्वर प्रमुख होता है। इन भिन्न-भिन्न युग-सापेक्ष आदर्शों के अतिरिक्त कुछ शाश्वत सत्य तथा चिरन्तन मूल्य भी होते हैं जो प्रत्येक युग में मानव-जीवन को परिलक्षित करते रहते हैं। सफल प्रबंधकार इन्हीं चिरन्तन जीवन-मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में ही युगीन जीवन-आदर्शों की प्रतिष्ठा करता है। वस्तुतः, 'महान् कलाकार अपने युग का पूर्ण प्रतिनिधि, सम्पूर्ण व्याख्याता होता है। उसकी वाणी में युग के सारे संघर्ष, सारा रागविराग, समस्त प्रश्न और सन्देह, मूर्तिमान होकर बोलते या ध्वनित होते हैं।' [1]

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रबंधकाव्य (व्यापक अर्थ में) प्रगतिशील रचना है। इस सन्दर्भ में दिनकर का महाकाव्य के सम्बंध में कहा गया कथन विशेष उल्लेखनीय है --

'विश्व के महाकाव्य मनुष्यता की प्रगति के मार्ग में मील के पत्थरों के समान होते हैं। वे व्यंजित करते हैं कि मनुष्य किस युग में कहाँ तक प्रगति कर सका है।' [2] इस संदर्भ में गुलाब जी के प्रबंधों के स्वरूप और स्थापत्य

1- डॉ0 देवराज, 'साहित्य का प्रयोजन' (साहित्यक निबंध, सम्पादक डॉ0 धर्मेन्द्र)

2- अर्धनारीश्वर : श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' , पृ0 46

की विकासगामी प्रवृत्ति भी काल-सापेक्ष है। जिस तरह वीर-गाथा-काल के प्रबंधों (पृथ्वीराज-रासो आदि) से भक्तिकाल के प्रबंध (रामचरित-मानस, पद्मावत आदि) कई अर्थों में अपनी भिन्नता रखते हैं और इन भिन्नताओं का मूल्यांकन उनके रचना-काल के संदर्भ में ही किया जा सकता है, इसी तरह द्विवेदीकालीन प्रबंधों से लेकर कामायनी तक के प्रबंधों के स्वरूप और स्थापत्य भी अपने युग की प्रवृत्ति के विकास-इतिहास को प्रस्तुत करते हैं। ठीक उसी तरह गुलाब जी के प्रबंध भी अपनी नवीन विशेषताएँ लेकर आलोच्य हैं। गुलाब जी के प्रबंधों के स्वरूप को प्रभावित करनेवाले कारणों में निम्नलिखित प्रमुख हैं ---

(क) राष्ट्रीय जागरण

राष्ट्रीय जागरण के कारण विचारों में जो उग्रता एवं आक्रोश से पूर्ण राष्ट्रीयता आयी, उससे प्रभावित प्रबंधों में आधुनिक चेतना से प्रेरित पात्रों का सृजन हुआ। ऐसे प्रबंधों में मुख्यतः ऐतिहासिक पात्रों के माध्यम से नवीन जागरण की पृष्ठभूमि तैयार की गयी। कहने का आशय यह है कि आधुनिक जन-जीवन को प्रेरित करने के लिए इतिहास के वीर पुरुषों की कथा आधुनिक परिवेश में लिखी गई। गुलाब का **आलोक-वृत्त** प्रबंधकाव्य उसी पृष्ठभूमि की देन है। राष्ट्रीय जागरण की वह प्रेरक भूमि आज भी उर्वर है। आजादी के बाद से लेकर अत्याधुनिक प्रवृत्ति में राष्ट्रीय भावना किसी-न-किसी रूप में बनी हुई है।

(ख) बौद्धिक जागरण

बौद्धिक जागरण को मुख्यतः विज्ञान के सापेक्ष देखा जा सकता है। आज का युग विज्ञान का है और आज विज्ञान अपने उत्कर्ष पर है। यही कारण है कि आज के लोगों में भावुकता से अधिक विचार-विश्लेषण की प्रवृत्ति मिलती है, भक्ति से अधिक तार्किकता है और समर्पण और अंधविश्वास की जगह वैज्ञानिकता एवं उपादेयता की अनिवार्यता महसूस की जाती है। इसीलिए आज धार्मिक आस्थाओं के आलंबन अवतार आदि ईश्वर के लीला-नायकों को अधिक विश्वसनीय बनाने के लिए उन्हें मानवीय धरातल पर अंकित करना पड़ता है। यही कारण है कि **रामायण** तथा **रामचरितमानस** की अहल्या और राम, गुलाब की **अहल्या** की अहल्या और राम से भिन्न हैं। इस प्रबंधकाव्य

में उनके में उनके व्यक्तित्व और कार्य-व्यापारों में आधुनिक युग की प्रत्यक्ष या परोक्ष छाप है। **अहल्या** के चरित्र में मनोवैज्ञानिक, प्रामाणिकता तथा स्वाभाविकता आदि विशेषताएँ बौद्धिक जागरण से ही प्रभावित हैं। डॉ0 श्यामनन्दन किशोर[1] ने बौद्धिक जागरण को उत्पन्न करने के कारणों में निम्नलिखित कारणों को प्रमुख माना है --

(क) पश्चिम के संसर्ग से ज्ञान-विज्ञान का प्रचार,

(ख) बुद्धिवाद के प्रचार से अंधविश्वासों का नाश, यथार्थवाद की प्रवृत्ति, स्वच्छन्दतावाद का स्वागत और

(ग) विदेशी एवं स्वदेशी भाषाओं के सम्पर्क से दृष्टि-विस्तार।

(ग) प्रगतिवाद तथा मानवतावाद का उदय

राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पैमाने पर सन् 1936 के बाद समाजवादी दृष्टिकोण को विशेष महत्त्व दिया गया। उपनिवेशवाद, राजतंत्र तथा अधिनायक-तंत्र के विरोध में प्रजातांत्रिक समाजवाद के लिए विशेष संघर्ष की भूमि तैयार होने लगी। इस संघर्ष से साहित्य भी प्रभावित हुआ। हिन्दी में जहाँ एक ओर छायावादी आदर्श-लोक की कल्पना-भूमि की जगह प्रगतिवाद की यथार्थवादी ठोस धरती की खोज की गयी वहीं दूसरी ओर स्वतंत्रता-संग्राम को नेतृत्व देनेवाले बापू के प्रति लोगों का विशेष आकर्षण बढ़ा। उनकी विचार-धारा से प्रभावित होकर प्रबंध लिखे गये। स्वयं बापू को नायक बनाकर **आलोक-वृत्त** प्रबंध की रचना हुई। प्रगतिवादी विचारधारा तथा बापू की उदारवादी वैष्णवी भावना से प्रभावित होकर समानता, अछूतोद्धार, नारी-जागरण, उपेक्षितों की प्राण-प्रतिष्ठा, जनमत की महत्ता, तथा सत्य, अहिंसा प्रभृति प्रवृत्तियों को लेकर ही इस खण्डकाव्य (**आलोक-वृत्त**) की रचना हुई।

मानवतावाद तथा प्रगतिवाद की पृष्ठभूमि के प्रेरक तत्त्वों से शिल्पित गुलाब के प्रबंधों में पुरातन प्रबंध-स्वरूप की जगह अधुनातन प्रयोगोन्मुखता का आग्रह है। इसे गुलाब के प्रबंधकाव्यों के स्वरूप-वैशिष्ट्य की उपलब्धि कहा जा सकता है।

(घ) पाश्चात्य साहित्य का प्रभाव

अनेक प्रबंधकारों पर पाश्चात्य विचार-धारा और यूरोप के आधुनिक

1- 'आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों का शिल्प-विधान' , पृ0 111-112

प्रबंधकाव्यों का प्रभाव पड़ा है। इसी कारण, छन्द, शैली, कथानक, एवं उपादान की नवीनता आधुनिक प्रबंधकाव्यों में अपनायी गयी है। गुलाब जी के प्रबंधों में **उषा** ऐसा ही प्रबंध है।

निष्कर्षतः, उपर्युक्त कारणों के विश्लेषण से गुलाब के प्रबंधकाव्यों के स्वरूप की निम्नलिखित विशेषताएँ सामने आती हैं ---

1. पौराणिक तथा ऐतिहासिक कथानक की आधुनिक व्याख्या।

2. अंग्रेजी प्रबंधकाव्यों की नयी तकनीक के अनुकरण का आग्रह।

3. रूढ़िवादिता, अंधविश्वास तथा आध्यात्मिक (अलौकिक) आस्थाओं की जगह प्रगतिशीलता, वैज्ञानिकता, तथा स्वाभाविक मानवीय संवेदनाओं की खोज।

4. चरित्र-योजना में नारी-पात्रों तथा राजनीतिक नेताओं के शीलांकन का प्रयास।

5. प्रबंध के कलात्मक एवं भावात्मक दोनों पहलुओं में शास्त्रीयता से मुक्त होने का आग्रह।

6. भाषा, शैली तथा छन्द-योजना की नवीनता।

2. स्थापत्य-वैशिष्ट्य

गुलाब जी के प्रबंधकाव्य के स्वरूप-विवेचन से यह स्पष्ट हो गया है कि उनमें कथानक, चरित्र, घटनाओं के चुनाव, अभिव्यंजनाशैली, जीवन-दर्शन तथा भाव-व्यंजना आदि को नया वातावरण एवं नयी शिल्प-विधि देने का प्रयास किया गया है। अब देखना यह है कि आलोच्य प्रबंधकार ने स्थापत्य-उपकरणों में कौन-सा वैशिष्ट्य सम्मिलित किया है।

किसी भी प्रबंध के स्थापत्य के प्रमुख तीन तत्त्व होते हैं --

(क) वस्तु

(ख) चरित्र, और

(ग) अभिव्यंजना कौशल (सर्ग-विभाजन, संवाद, प्रकृति-चित्रण, भाषा, छन्द)।

इन्हीं तीनों तत्त्वों के सम्मिलित रूप को 'शिल्प' [1] भी कहा जाता है।

अब इन तत्त्वों को अलग-अलग विश्लेषित कर इनके शिल्प-वैशिष्ट्य का

1- 'कवि की अनुभूति और उसकी भावुकता ही सब कुछ नहीं है, उसे तद्रूप अपने पाठक' तक पहुचाने की भी आवश्यकता होती है, और इसी कला की सफलता के लिए उन्हें किसी माध्यम की आवश्यकता होती है, जिसका शास्त्रीय नाम शिल्प है।' -- आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों का शिल्प-विधान डॉ0 श्यामनन्दन किशोर, पृ0 271।

विवेचन अपेक्षित है।

(क) वस्तु --किसी भी प्रबंधकाव्य के लिए वस्तु (कथावस्तु) की सर्वांगीणता अपेक्षित है। महाकाव्य के लिए कथावस्तु में इतना फैलाव अनिवार्य होता है जिसमें संपूर्ण स्पष्टीकरण सम्भव हो सके। खण्डकाव्य की कथावस्तु छोटी होकर भी अपने उद्देश्य की सिद्धि को सम्पूर्णता में प्रकट करती है। लेकिन **कामायनी** की रचना इस दृष्टि से नयी परम्परा का प्रारम्भ करती है। **कामायनी** के पहले के प्रबंधों में कथा-विस्तार आख्यानमूलक हुआ करता था। इस प्रसंग में कामायनी को एक प्रयोग ही मानना चाहिए। इसकी कथा की क्षीणता, पात्रों की कम संख्या, घटनाओं की मनोवैज्ञानिकता, द्विवेदी-कालीन प्रबंधों को ललकारती हुई सामने आयी। **कामायनी** की तरह कथा-शिल्प प्रभृति विशेषताओं की प्रतिनिधि रचनाएँ गुलाब जी के प्रबंधों के स्थापत्य-वैशिष्ट्य को अभिव्यंजित करती हैं। इनकी ऐसी रचनाओं में **उषा, अहल्या** , और **कच-देवयानी** प्रमुख हैं। इन प्रबंधकाव्यों में कथा-शिल्प की तीन विशेषताएँ महत्त्वपूर्ण हैं ---

(1) कथा-स्वल्पता

वस्तुतः गुलाब के प्रबंधों के स्थापत्य का यह प्रमुख वैशिष्ट्य है कि उनके कथानक क्षीण हो गये हैं। इस श्रेणी की प्रतिनिधि रचनाओं में **उषा अहल्या** और **कच-देवयानी** प्रमुख हैं। इन प्रबंधों की कथा-स्वल्पता का प्रमुख कारण युगानुकूल रुचि तथा युग-चेतना है। **उषा** में **उषा** के चारित्रिक उन्नयन तथा उसकी मनोदशा के क्रमिक विकास का संकेत है। उसमें स्थूल घटनाओं का अभाव है। **अहल्या** और **कच-देवयानी** में प्रधान पात्रों की मानसिकता का ही चित्रण है, स्थूल घटना का नहीं। **कच-देवयानी** चरित्र- प्रध ाान खण्डकाव्य है। **अहल्या** की अहल्या एक मनोवैज्ञानिक भाव-भूमि की पात्र है। **कच-देवयानी** की घटनाएँ बाह्य जगत से कम सम्बन्धित हैं, उनका क्रीड़ा-स्थल अन्तर्मन है।

(2) नाटकीयता

कथा-शिल्प का दूसरा वैशिष्ट्य नाटकीयता है। **कच-देवयानी,** और **अहल्या** की कथा-संघटना नाटकीय है। इन प्रबंधकाव्यों में वार्त्तालाप के

माध्यम से कथावस्तु के विकास, चरित्रांकन, मनोवृत्ति-विश्लेषण, तथा संभाषण-पटुता आदि का संकेत मिलता है।

(3) प्रतीकात्मकता

'प्रतीक' अप्रस्तुत या अप्रत्यक्ष कथन की एक सांकेतिक पद्धति है।[1] इसके द्वारा रचनाकार भाव-गोपन और भाव-प्रकाशन के सह-प्रयोग से 'द्विअर्थक' कथा प्रस्तुत करता है। उदाहरणार्थ **उषा** प्रबंधकाव्य इसी प्रतीक-योजना के कारण 'द्विअर्थक' है। उषा नारी के आत्मत्याग तथा उत्सर्ग-पूर्ण जीवन का प्रतिनिधित्व करती है।

'कामायनी' के पात्रों का नामकरण जिस प्रकार मानसिक वृत्तियों के आधार पर है, उसी प्रकार **उषा** के सभी पात्रों का नामकरण प्रकृति के आधार पर किया गया है। इस सम्बन्ध में विश्वम्भर **मानव** ने लिखा है -- 'पात्रों के नामों -- उषा, प्रभात, राजीव, मुकुल, किरण से पता चलता है कि वे प्रतीकात्मक हैं। प्रभात के आलिंगन में उषा बहुत देर तक नहीं ठहर पाती। उदित होते ही वह राजीव के जीवन में मुस्कुराती है। उसकी गोद मुकुल से भी भर जाती है जो आगे चल कर दुर्भाग्य से मुरझा जाता है। राजीव के जीवन को ठीक से खिलानेवाली किरण है। इन दोनों का संयोग होते ही प्रभात और उषा कहीं दूर समुद्र में डूब जाते हैं। उन्हें विवश होकर जीवन के मंच से हटना पड़ता है। प्रकृति और प्राणी के जीवन की यह दुहरी ट्रैजडी है। इस प्रकार कवि ने अपनी कहानी को व्यापक धरातल पर प्रतिष्ठित किया है। कल्पना की उन्मुक्त उड़ान के साथ प्रकृति के बीच अपने कथानक को प्रतिष्ठित करने के कारण **उषा** की गणना स्वच्छंदतामूलक प्रबंध-काव्यों में होगी।'[2] **कच-देवयानी** खण्डकाव्य के कच और देवयानी क्रमशः कर्त्तव्य और प्रेम के प्रतीक हैं। कच कर्त्तव्यनिष्ठ व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करता है। **आलोक-वृत्त** के गांधी पात्र मात्र नहीं रह जाते हैं, बल्कि वे आदर्श, त्याग, करुणा, सेवा, प्रेम, भक्ति और राष्ट्रीय भावना के मूर्त प्रतीक बन जाते हैं।

1- 'छायावाद का काव्य-शिल्प' : डॉ0 प्रतिभा कृष्णवल, पृ0 193
2- 'नयी कविता : नये कवि' , पृ0 109

3. चरित्र

गुलाब जी के प्रबंधकाव्यों के पात्र न देवता हैं, न राक्षस, बल्कि मानव हैं। **अहल्या** खण्डकाव्य के राम भी मानवीयता से युक्त हैं। उन्होंने राम जैसे दैवी पात्र को भी मानवता के धरातल पर प्रतिष्ठित किया है। कवि ने लांछित तथा तिरस्कृत पात्र (अहल्या) को प्रधान पात्र बनाकर अपने प्रगतिवादी दृष्टिकोण तथा मानवतावादी जीवनदृष्टि का परिचय दिया है। पात्रों के चरित्रांकन-वैशिष्ट्य की निम्नलिखित नवीनताएँ हैं ---

(क) चरित्रांकन की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि,
(ख) पात्रों का युग-चेतना के अनुसार शिल्पन,
(ग) पात्रों की प्रतीकात्मक व्याख्या,
(घ) पात्रों की वैयक्तिक विभूति की प्रतिष्ठा,
(ड) नारी-पात्रों की जागरूकता [1], और
(च) गौण पात्रों की महत्ता।

चरित्र-योजना का वैशिष्ट्य एक दूसरी दृष्टि से भी विशेष महत्त्व-पूर्ण है। गुलाब के प्रबंध-काव्यों में पात्रों की संख्या कम मिलती है। अनावश्यक पात्रों की बहुलता गुलाब जी के प्रबंधों में नहीं मिलती है ---

प्रबंध	पात्रों की संख्या	पात्रों के नाम
1- **उषा**	चार	उषा, प्रभात, राजीव और किरण
2- **कच-देवयानी**	दो	कच- और देवयानी
3- **आलोक-वृत्त**	दो	महात्मागांधी, कस्तुरबा (प्रधान पात्र)
4- **अहल्या**	छः	अहल्या, गौतम, इन्द्र, राम, दशरथ, कौशिकमुनि

(क) सर्ग-योजना

प्रबंध-काव्य के सफल निर्वाह के लिए सर्ग-योजना अनिवार्य होती है। इसका प्रमुख कार्य कथानक का विभाजन करना होता है। यह विभाजन सिर्फ सर्ग ही नहीं कहलाता है, बल्कि समय, काण्ड, पर्व, खण्ड, आदि इसके पर्याय

1- उषा, किरण, अहल्या, कस्तूरबा, देवयानी इत्यादि नारी-पात्र उल्लेखनीय हैं।

हैं। गुलाब जी के प्रबंधों में सर्ग-संख्या एक, दो, तीन आदि के क्रमानुसार मिलती है। इन्होंने **अहल्या** में सर्ग-विभाजन' खण्ड के नाम से किया है।

(ख) मंगलाचरण का स्थापत्य-वैशिष्ट्य

गुलाब खंडेलवाल के प्रबंधों में मंगलाचरण अथवा स्तुति की काव्य-रूढ़ियाँ नहीं मिलती है। **आलोक-वृत्त** खण्डकाव्य के आरम्भ में कवि ने केवल **कल्पना** का आह्वान किया हैं। उसे स्तुति या मंगलाचरण नहीं ही कहा जा सकता।

(ग) स्थापत्य के अन्य उपकरण और उनकी विशेषताएँ

(क) सर्गान्त में छन्द-परिवर्तन के अनिवार्य नियमों का पालन इनके प्रबंधों में नहीं किया गया है। **आलोक-वृत्त** में मुक्तछन्द और **अहल्या** में नये छन्दों के प्रयोग मिलते हैं।

(ख) प्रकृति-चित्रण में मानवीय संवेदना की प्रधानता है।

(ग) गुलाब के प्रबंधों में प्रायः सभी रसों (हास्य को छोड़कर) की उपस्थिति है, लेकिन उनमें रस-निरूपण से अधिक भाव-निरूपण का ही आग्रह है।

(घ) अलंकार-योजना में पाश्चात्य अलंकारों के प्रयोग भी मिलते हैं। उनमें मानवीकरण, विशेषण-विपर्यय तथा ध्वन्यात्मक अलंकार प्रमुख हैं।

(ड) गुलाब के प्रबंधों की भाषा अत्यन्त ही परिमार्जित है। संगीत, प्रतीक और बिम्बों के प्रभाव को उत्पन्न करनेवाले शब्दों से युक्त भाषा का प्रयोग विशेष रूप से द्रष्टव्य है।

(च) रस-परिकर और रसात्मक परिणति से अधिक भावों के उपचय का आग्रह है।

(छ) नायिका की प्रधानता नायक की अपेक्षा अधिक है।

(ज) मनोवैज्ञानिकता की और झुकाव है।

(झ) कथ्य, प्रतिपाद्य, अभिव्यंजना में सूक्ष्मता के प्रति आग्रह है और हर प्रकार की इतिवृत्तात्मकता का क्रमशः अभाव मिलता है।

1- प्रस्तुत शोध-प्रबंध के 'कलापक्ष' के अंतर्गत उनका विस्तृत विवेचन किया गया है। यहाँ संक्षेप में उनके वैशिष्ट्य के संकेत दिये जा रहे हैं।

सप्तम अध्याय

गुलाब की ग़ज़लों का मूल्यांकन, प्रयोग और उपलब्धियाँ

गुलाब की ग़ज़लों का मूल्यांकन, प्रयोग और उपलब्धियाँ

(क) ग़ज़ल की परम्परा और विकास

ग़ज़ल पहले अरबी में आई, अरबी से फ़ारसी में और फ़ारसी से उर्दू में। भारत में, ग़ज़ल हैदराबाद के दकनी कवियों ने शुरू की। हैदराबाद के इन शायरों का परिचय व्यापारियों और यात्रियों के माध्यम से फ़ारस के तत्कालीन श्रेष्ठ कवियों से भी था। दकनी के कवियों को हिन्दीवाले हिन्दी का और उर्दू वाले उर्दू का कहते हैं।

दकनी के कवि 'वली' की कविता की भाषा में फ़ारसी और दिल्ली की बोल-चाल की भाषा का प्रभाव दिखायी पड़ने लगा। फिर तो मीर ने इस भाषा को काव्य का समर्थ माध्यम बना लिया। इसके बाद मोमिन, ग़ालिब आदि ने ग़ज़ल को ऊँचाइयाँ दी। फिर दाग और अमीर मीनाई का जमाना आया। दाग को उर्दू समाज मे काफी ख्याति मिली। इधर के कवियों में जिगर, फ़िराक़, और फ़ैज ग़ज़ल की परम्परा को समृद्ध और विकसित करते रहे।

ग़ालिब ने अपनी ग़ज़ल को हिन्दी ग़ज़ल भी कहा है। उनके हिन्दी शब्द का अर्थ है जबान-ए-हिन्द की ग़ज़ल। इस अर्थ में आधुनिक प्रयोग की हिन्दी ग़ज़ल कदापि नहीं है। ग़ज़ल की भाषा फारस से प्रभावित होते हुए भी एक नई भाषा का जन्म दे रही थी, जिसका नाम अब उर्दू है। [1]

हिन्दी ग़ज़ल

हिन्दी में सर्वप्रथम भारतेन्दु ने 'रसा' नाम से ग़ज़ले लिखी हैं। पर ये ग़ज़ले उर्दू माहौल से अलग नहीं हैं। सनेही और **रामेनरेश** त्रिपाठी ने हिन्दी में ग़ज़ले प्रस्तुत की हैं। इन ग़ज़लों का भाव और स्वभाव हिन्दी कविता से अलग नहीं हैं। जयशंकर प्रसाद, और निराला ने भी ग़ज़लें लिखीं, पर इनका आदर उनकी अन्य कविताओं के मुकाबले नहीं किया गया। नई पीढ़ी में अनेक लोगों ने ग़ज़ल को हिन्दी में साधने का प्रयास किया है और करते जा रहे हैं, किन्तु

स्वर्गीय दुष्यन्त कुमार और कविवर गुलाब ही शीर्ष शिखर पर हैं। इन्होंने ही हिन्दी-ग़ज़लों को सही अर्थ में विकसित किया है।

(ख) गुलाब की ग़ज़लें

कविवर गुलाब हिन्दी-ग़ज़ल के सम्राट् हैं। गुलाब ने पहली बार हिन्दी को वे ग़ज़लें प्रदान की हैं जो उर्दू की श्रेष्ठतम ग़ज़लों में समकक्ष सगर्व रखी जा सकती हैं कथ्य की दृष्टि से ग़ज़ल की सुपरिचित भूमि पर रहकर भी कवि ने हिन्दी के स्वीकृत सौंदर्य-बोध को कभी धूमिल नहीं होने दिया है। ग़ज़ल की पंरपरित मदिरता में गुलाब का ताज़ा सुरभि-संचार इन ग़ज़लों को हिन्दी का बनाता हैं। संयम और सुरुचि की वृत्तरेखा के भीतर इनमें मार्मिक अनुभूतियों की उपलब्धि की गई है।

इनमें अभिव्यंजना का वह निष्कंप संतुलन है, जो उर्दू के क्षेत्र में अतिक्रमण किये बिना ही इन्हें ग़ज़ल के रूप में विश्वसनीय बनाता है। विदग्धता तो इतनी है कि अनेक शेर अपनी-अपनी ग़ज़लों से स्वतंत्र होकर काव्य-रसिकों की वाणी का श्रृंगार बन गये हैं।

इन ग़ज़लों में काव्य के व्यंजन के साथ-साथ संगीत का स्वर भी ह'[1] अपनी ग़ज़लों के सन्दर्भ में गुलाब जी का कथन विशेष रूप से उल्लेखनीय है --

'ग़ज़लों के इस प्रयोग को मैं अपने जीवन का एक विशिष्ट मोड़ मानता हूँ। भाषा, भाव, और अभिव्यंजना की दृष्टि से नवीन और सभी परम्पराओं से मुक्त होते हुए भी ये ग़ज़लें जीवन की मार्मिक अनुभूतियों पर आधारित हैं और काव्य की चिरंतन भावभूमि से जुड़ी हैं।

उर्दू साहित्य की विशाल ग़ज़ल-परम्परा से मुहावरेदानी, कथन-भंगिमा आदि बहुत सी विशिष्टताओं को ग्रहण करते हुए इन ग़ज़लों में मैंने अपनी ओर से रसान्विति, बिंबात्मकता आदि के रूप में उसे कुछ देने का भी प्रयास किया है।

काव्य की विविध विधाओं में गीत और ग़ज़ल, संगीत की दृष्टि से, विशेष उपयुक्त मानी गई हैं। इन ग़ज़लों के द्वारा हिन्दी के काव्य-प्रेमी ग़ज़ल की विशिष्टता का रसास्वादन कर सकें तथा उसकी गेयता का आनन्द उठा सकें, यही मेरी कामना है।'[2]

---

1. 'सौ गुलाब खिले', प्राचार्य विश्वनाथ सिंह - आवरण पृष्ठ पर
2- 'सौ गुलाब खिले' , गुलाब, (ये ग़ज़ले [illegible]0 ग

यह ज्ञातव्य है कि कवि गुलाब ने काव्य की अनेक विधाओं में रचना की है-- गीत, गेय गीत, मुक्तछंद, प्रबन्धकाव्य, गीतिनाट्य, सॉनेट, कतअ और रुबाई और अब ग़ज़ल। अपनी ग़ज़लों में गुलाब ने अपनी रचना का पुराना संसार और सम्भार बदल दिया है और इस प्रकार वे सामान्य पाठक के नजदीक आ गये हैं।

गुलाब की ग़ज़लों में प्रेम की अनेक स्थितियों की पकड़ है। संयोग, वियोग और फिर इनके अनेक भावों और रूपों के परिचय के लिए बस इतना संकेत पर्याप्त है ----

उतरती आ रही हैं प्राण में परछाइयाँ किसकी !
हवा में गूँजती हैं प्यार की शहनाइयाँ किसकी !
ये किसकी याद ने रातों उन्हें बेसुध बनाया है
तड़प कर रह गयी हैं शीशे में अँगड़ाइयाँ किसकी !
लिए जीने की मजबूरी खड़े हैं तीर पर हम-तुम
गले मिल जा रही हैं लहरों में परछाइयाँ किसकी !
हुए देखे बहुत दिन फिर भी अक्सर याद आती है
वो भोली-भोली सूरत और वे अच्छाइयाँ किसकी !
कोई जैसे मुझे अब दूर से आवाज़ देता है
बुलाती हैं गुलाब आँखों की अब अमराइयाँ किसकी ![1]

कवि गुलाब ने ग़ज़ल को अपने प्रयोग का नया क्षेत्र बनाया है। इस नये क्षेत्र में वे खाली हाथ नहीं आये। सर्वप्रथम जून 1972 'साप्तहिक हिन्दुस्तान' में 'तीन हिन्दी ग़ज़लें' शीर्षक से गुलाब की ग़ज़ले प्रकाशित हुईं। इस तरह वे हिन्दी ग़ज़ल में दुष्यन्त कुमार के समसामयिक ही नहीं, पूर्व के हैं। दुष्यन्त कुमार की ग़ज़लें समसामयिक और प्रगतिशील हैं। वे मानव-जीवन के संघर्ष और विडम्बनाओं का चित्र प्रस्तुत करती हैं जबकि गुलाब की ग़ज़लों के विषय प्रेम, सौंदर्य, और प्रकृति आदि भावमूलक विविधताएँ हैं।

(ग) गुलाब की ग़ज़लों के संग्रह

कविवर गुलाब के ग़ज़ल-संग्रह निम्नलिखित हैं --

(1) **सौ गुलाब खिले** (1973), (2) **पँखुरियाँ गुलाब की** (1978), (3) **कुछ और गुलाब** (1979) और (4) **हर सुबह एक ताज़ा गुलाब**

1- 'सौ गुलाब खिले' , त्रिलोचन शास्त्री पृ0 24

(शीघ्र ही प्रकाश्य)

(1) सौ गुलाब खिले : --- सौ गुलाब खिले कविवर गुलाब की 109 ग़ज़लों का संग्रह है। गौरव की बात यह है कि ग़ज़लें हिन्दी की हैं। प्रस्तुत ग़ज़ल-संग्रह ने कवि गुलाब के साहित्यिक जीवन के विशिष्ट मोड़ को प्रदर्शित किया है। इस ग़ज़ल-संग्रह के सम्बन्ध में कवि का कथन इस प्रकार है 'भाषा, भाव और अभिव्यंजना की दृष्टि से नवीन और सभी परम्पराओं से मुक्त होते हुए भी ये ग़ज़लें जीवन की मार्मिक अनुभूतियों पर आधारित हैं और काव्य की चिरंतन भाव-भूमि से जुड़ी हैं।' [1]

सौ गुलाब खिले में प्रेम की अनेक स्थितियों का चित्रण है। संयोग, वियोग और इनके अनेक भावों और रूपों की झाँकी प्रस्तुत की गई है। इन ग़ज़लों को मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान किया गया है, इसलिए यहाँ प्रेम की टीस, प्रेमी से मिलने की तीव्र आकांक्षा, विछुड़ने का ग़म और तत्सम्बन्धी मन-स्थितियों का चित्रण मिलता है। इन ग़ज़लों में उर्दू और रीतिकालीन कवियों की तरह हुस्न और इश्क की हाय-तोबा नहीं है। यहाँ यथार्थ की भावभूमि पर आदमी का संघर्ष और उसके सुख-दुःख के क्षणों को बड़े स्वाभाविक रूप में प्रस्तुत किया गया हैं। इसलिए कवि गुलाब की ग़ज़लों में हृदय की पीड़ा ख़ूब मिलती है। उदाहरण के लिए इनकी ग़ज़लों के कुछ शेरों की ओर संकेत किया जा सकता है ---

हरदम किसी की याद में जलते रहे हैं हम
करवट ही ज़िन्दगी में बदलते रहे हैं हम।[2]

या --
'जो जीवन में दुख की घटा बन गई है
वही काव्य में प्रेरणा बन गई हैं।[3]

कवि तो अपनी प्रिया के लिए पूर्ण रूपेण समर्पित है प्ररन्तु प्रेमिका के समक्ष उसका कोई अस्तित्व नहीं है --

दिल के लुट जाने का ग़म कुछ भी नहीं !
आप ही सबकुछ हैं, हम कुछ भी नहीं ![4]

1- 'सौ गुलाब खिले' , (ये गजलें), पृ0 ग 2- वही, पृ0 91
3- वही, पृ0 85 4-'सौ गुलाब खिले', पृ0 37

कवि प्रेम का पुजारी है, वह प्रेम के महत्त्व को जानता है --

मंत्र तो बस है ढाई अक्षर का
जिसपे चाहो बशीकरण कर लो।[1]

इसीलिए अपनी प्रेयसी के द्वारा भुला दिये जाने पर भी वह उसके प्रति अगाध प्रेम सँजोये है --

कभी जो याद आये, पूछ लेना
लिये मुट्ठी में दिल अब भी वहीं हूँ।[2]

कवि के हृदय में अपनी प्रेयसी के प्रति एकनिष्ठता और अनन्यता है --

तुम्हारे रूप को आँखों में भर लिया हमने
किसी से और अब आँखे मिला नहीं सकते।[3]

प्रिया के विरह में उसे अपूर्व सुख मिलता है। वह सदैव विरह में ही निमग्न रहना चाहता है। जिन्दगी और मौत की उसे जरा भी परवाह नहीं है --

न मौत के लिए आये न जिन्दगी के लिए
तड़पने आये हैं दुनिया में दो घड़ी के लिए।[4]

वह केवल प्यार से संतुष्ट नहीं हो पाता है। वह तो रूप का दीवाना है, हृदय में रूप की कभी न मिटने वाली प्यास सँजोये है।

तेरा प्यार मिल भी जाये
तेरा रूप मिल न पाता
जो हज़ार बार मिलते
यही इंतज़ार होता।[5]

कवि को मिलन की घड़ी में भी वियोग का दुःख बना रहता है ---

मिलने की हर ख़ुशी में बिछड़ने का ग़म हुआ। [6]
एहसान उनका ख़ूब हुआ फिर भी कम हुआ

कवि ने मानव-जीवन में प्यार को महत्त्व दिया है। निम्नलिखित पंक्तियाँ इन्ही विचारों को प्रदर्शित करती हैं --

---

1- 'सौ गुलाब खिले', पृ0 4
2- वही, पृ0 42
3- वही, पृ0 40
4- वही, पृ0 56
5- 'सौ गुलाब खिले' , पृ0 86
6- वही पृ0 92

ज़िन्दगी दर्द का दाह है
प्यार छाहों भरी राह है।

ऐसी ही पंक्तियों में ज़िन्दगी और प्यार की परिभाषा मिलती है जहाँ कवि का जीवन-दर्शन साकार होता है।

निष्कर्षतः, कवि गुलाब ने इन ग़ज़लों के माध्यम से हिन्दी-काव्य को नई दिशा और एक नया आयाम दिया है।

(2) पँखुरियाँ गुजाब की [1] :-

'**पँखुरियाँ गुलाब की**' कविवर गुलाब की ग़ज़लों का द्वितीय संग्रह है। यह 111 ग़ज़लों का संकलन है, जिसे 'सौ गुलाब खिले' की अगली कड़ी कहेंगे। प्रस्तुत ग़ज़लों में कवि ने संख्या का ही नहीं, गुणों का भी विस्तार किया है। इनमें आत्माभिव्यक्ति ही नही, आत्मसमर्पण भी है। इस सन्दर्भ में कवि ने स्वयं लिखा है -- 'हिन्दी और उर्दू , साहित्य और संगीत तथा सामान्य सहृदय और साहित्य-मर्मज्ञ के बीच की खाई को पाटने का प्रयास मैंने **सौ गुलाब खिले** में किया था, प्रस्तुत रचना द्वारा लौकिक और आध्यात्मक प्रेम को एक साथ अभिव्यक्त करने की चेष्टा की गयी है।' [2] इससे स्पष्ट होता है कि कवि ने लौकिक और आध्यात्मिक प्रेम को एक साथ अभिव्यक्त किया है ---

मिली है आपकी खुशबू तो हर तरफ से हमें
भले ही बीच में परदे पड़े हैं झीने-से।[3]

अथवा --
हम खोज में उनकी रहते हैं, वे हम से किनारा करते हैं
फूलों में हँसा करते हैं कभी पत्तों में इशारा करते हैं।[4]

अथवा --
गंध बनकर हवा में बिखर जायँ हम
ओस बनकर पँखुरियों से झर जायँ हम

1- रचनाकाल (1974-77) 1978 प्रकाशनः काल
2- 'पँखुरियाँ गुलाब की' , दो शब्द, गुलाब खंडेलवाल, पृ0 1।
3- वही, पृ0 3
4- वही, पृ0 103

तू न देखे हमें बाग़ में भी तो क्या !
तेरा आँगन तो ख़ुशबू से भर जायँ हम।[1]

कवि का प्रिय असीम हो गया है, उसको प्रकृति के कण-कण में उस प्रिय (ईश्वर) की आहट मिलती है ---

तेरी ख़ुशबू से है तर बाग़ का पत्ता-पत्ता
क्यों न फिर हमको हरेक फूल पे प्यार आ जाये। [2]

कवि अपनी प्रिया की कृपा का आकांक्षी है --

हमारा प्यार जी उठता, घड़ी मरने की टल जाती
जो तुम नज़रों से छू देते तो यह दुनिया बदल जाती। [3]

कवि को अपनी प्रियतमा की बेरुख़ी से काफी दर्द, टीस और ग़म मिला है, लेकिन उसे उसीकी चाह है ---

ग़म बहुत, दर्द बहुत, टीस बहुत, आह बहुत
फिर भी दिल को है उसी बेरहम की चाह बहुत।[4]

कवि हर हालत में अपनी प्रेमिका को ख़ुश देखना चाहता है उसकी ख़ुशी के लिए वह मरण को भी वरण करने के लिए तैयार है ---

सिर्फ आँचल के पकड़ लेने से नाराज थे आप
अब तो ख़ुश हैं कि ये दुनिया ही छोड़ दी हमने।[5]

वह प्यार की बाजी लगाने के लिए भी उत्सुक है क्योंकि इस बाजी में वह हर प्रकार से अपनी जीत ही पाता है ---

या जीतके उसको अपना बना, या हारके बन जा तू उसका
हर हाल में तेरी जीत ही है, यह प्यार की बाजी ठान तो ले।[6]

कवि अपनी प्रेयसी के दिल में थोड़ी सी जगह को ही जीवन-रूपी मँझधार का सहारा मानता है ---

---

1- 'पखुरिंया गुलाब की' पृ0 1
2- 'पँखुरियाँ गुलाब की' , गुलाब, पृ0 37
3- वही, पृ0 15
4- वही, पृ0 72
5- वही, पृ0 11

नाव इस तरह भँवर के न लगाती फेरे
दिल में माँझी के अगर प्यार भी थोड़ा होता।[1]

कवि अपनी प्रियतमा की ख़ुशी के लिए दर्द और ग़म को झेलने के लिए तैयार है --

दर्द कुछ और सही, दिल पे सितम और सही
आपको इसमें ख़ुशी है तो ये ग़म और सही।[2]

उसे विश्वास है कि उसकी प्रेयसी को भी उसके दिल की चाहत और दर्द का अवश्य पता होगा ---

नहीं इस दर्द का उनको पता हो, हो नहीं सकता
कोई दिल की लगी से अनछुआ हो, हो नहीं सकता।[3]

कवि का प्रेम आस्था और विश्वास से युक्त है। उसे यह विश्वास है कि उसका प्यार सच्चा है तो उसे मंज़िल अवश्य मिलेगी ---

प्यार सच्चा है तो मंज़िल दूर क्या
खुद ही पाँवों से लगेगी एक दिन।[4]

अथवा --
असर कुछ प्यार में है तो लिपट जायेगा सीने से
मिटें हम और कोई देखता हो, हो नहीं सकता।[5]

कवि का जीवन सुख और दुःख से भरा है —
ज़िन्दगी हमको पिलाती है जहर के प्याले
और पायल भी बजाती है हर क़दम के साथ।[6]

निष्कर्षतः, ये ग़ज़लें बहु-आयामी हैं। इनमें आत्माभिव्यक्ति और आत्मसमर्पण के साथ-साथ, **'सौ गुलाब खिले'** की समस्त विशेषताओं को कायम रखते हुए, चेतना के नये छोरों का छूने को प्रयास किया गया है।

1- 'पँखुरियाँ गुलाब की', पृ0 2 2- 'पँखुरियाँ गुलाब की', गुलाब, पृ0 8
3- वही, पृ0 63 4- वही, पृ0 74
5- वही, पृ0 76
6- वही, पृ0 74

(3) कुछ और गुलाब[1] :-

कुछ और गुलाब कविवर गुलाब की ग़ज़लों का तीसरा संग्रह है। इस संग्रह में 86 ग़ज़लों में कवि ने जीवन की विभिन्न अनुभूतियों को अभिव्यक्त किया है। इस सन्दर्भ में कवि ने स्वयं लिखा है -- 'मैंने अनुभव किया है कि ग़ज़ल की विधा जीवन की सभी प्रकार की अनुभूतियों को व्यक्त करने में सक्षम है और इसलिए सन् 1970 से लेकर अबतक की बदलती हुई अनुभूतियों को मैं इसमें वाणी दे सका हूँ।' [2] प्रेम की विभिन्न स्थितियों का चित्रण इन ग़ज़लों में मिलता है। इनमें विरह, मिलन, प्रतीक्षा, उपेक्षा, तड़प, आध्यात्मिकता, प्रेम का महत्त्व, आशा, निराशा, और जीवन की क्षणभंगुरता इत्यादि विभिन्न मनोभावों को प्रस्तुत किया गया है। इसीलिए शायद कवि ने लिखा है --

हमने ग़ज़लों में है रख दिया
ज़िन्दगी भर का लबूबो-लबाब। [3]

कवि की ग़ज़लों की भाव-भूमि सामाजिक है। उसकी ग़ज़लें यथार्थ की दुनिया से जुड़ी हैं। सम्भवतः इसीलिए कि उसने अपने हृदय की पीड़ा और उपेक्षा को निश्छल भाव से व्यक्त किया है। उसे जीवन में क्षण भर के लिए प्यार मिला था, लेकिन आज --

दो घडी मुँह से लगाकर किसीने फेंक दिया
एक टूटे हुये प्याले की तरह हम हैं आज।[4]

कवि प्रेम की राह में पाँव बढ़ा चुका है, वह हर तरह की कठिनाईयों को झेलने के लिए तैयार है ---

जब नाव ले के निकले, तूफान का डर कैसा
कुछ और तेज धारा हो भी अगर तो क्या है।[5]

1- पँखुरियाँ गुलाब की' , पृ0 79
2- रचनाकाल , (1970-79) प्रकाशनकाल (1979)
3. कुछ और गुलाब, कवि की ओर से, पृ0 3
4. वही, पृ0 16
5. कुछ और गुलाब, कवि की ओर से, पृ0 18

कवि का जीवन दुःख और ग़म से भरा है। उसके लिए दर्द ही जीवन की परिभाषा बन गया है ---

जिन्दगी सच है, मिली दर्द की लज्जत के लिए
कोई यह भी तो कहे, दर्द का हासिल क्या है।[1]

कवि ने बड़ी ही विवशता में ग़म का सहारा लिया है, लेकिन उसे भय है कि कहीं यह ग़म भी उसका साथ न छोड़ दे। ग़म से भी आग्रह करता है --

ऐ ग़म ! न छोड़ना हमें इस जिन्दगी के साथ
पकड़ा है तेरा हाथ बड़ी बेबसी के साथ।[2]

इसलिए उसे तड़पने की पुरानी आदत है, उसे आँसू और ग़म में भी ख़ुशी है ---

आँखों भरी-भरी मेरी, कुछ और नहीं है
आँसू में है ख़ुशी मेरी, कुछ और नहीं है।[3]

किन्तु, कवि को तड़प के असर पर विश्वास है। उसने सुना है कि बेबस की आह से पत्थर भी पिघल जाते हैं ---

देखेंगे हम भी अपने तड़पने का असर आज
पत्थर पिघल गये, सुना, बेबस की आह से।[4]

वह प्यार में वियोग और आँसू के महत्त्व को समझता है। उसके लिए वियोग-जनित आँसू अमृत की बूँदों की तरह हैं ---

दिल प्यार की आँच में तपता जब, मोती है चमकता आँखों में
इस बूँद को अमरित की भी, कोई कहता है जो पानी, क्या कहिये ![5]

इन ग़ज़लों में कवि की विवशता भी अभिव्यक्त हुई है --

जो चाहे समझ लीजिए, मरजी है आपकी
गाना है बेबसी मेरी कुछ और नहीं है।[6]

1- 'कुछ और गुलाब', पृ0 24
2- वही, पृ0 42
3- कुछ और गुलाब, पृ0 48
4- कुछ और गुलाब, पृ0 51
5- वही, पृ0 38
6- वही, पृ0 33

ये प्रेम की ग़ज़लें कवि के लिए ताजमहल हैं तथा इसमें उसकी ज़िन्दगी ही अभिव्यक्त हुई है --

एक ताजमहल प्यार का यह भी है दोस्तो !
हाँ, इसमें ज़िन्दगी मेरी, कुछ और नहीं है।[1]

कवि अपनी प्रेमिका के सान्निध्य के लिए लालायित है ---

फिर मुझे नरगिसी आँखों की महक पाने दो
फिर बुलाते हैं छलकते हुए पैमाने दो।[2]

रीतिकालीन कवि घनानन्द की तरह गुलाब को भी संयोग में वियोग की खटक बनी रहती है ---

क्या पता फिर कभी हम मिल भी सकेंगे कि नहीं
आज की रात तो आँखों में गुज़र जाने दो। [3]

कवि अपनी प्रिया के क़दमों में ही मरना चाहता है --

जान ले ले, मगर शर्त है
तेरे क़दमों में निकले ये दम।[4]

कविवर गुलाब ने कहीं-कहीं इन ग़ज़लों में प्रेम के स्वरूप को भी प्रकट किया है। प्रेम में दोनों तरफ आग है, लेकिन परवाना जलता है और शमा जलाती है --

आग-परवाने के दिल में जो, शमा में भी वही,
यह है जलने के लिए, वह है जलाने के लिए।[5]

छायावाद की शीर्ष कवयित्री महादेवी की तरह कवि संयोग की अपेक्षा वियोग को ही श्रेष्ठ मानता है। उसे तड़पने में ही काफी आनन्द मिलता है ---

माना की हम गले से गले मिल रहे हैं आज
यादों में तड़पने का मजा और ही कुछ है।[6]

1- 'कुछ और गुलाब', पृ0 51 2- वही, पृ0 51
3- 'कुछ और गुलाब' , पृ0 30 4- वही, पृ0 30
5- वही, पृ0 40 6- वही, पृ0 491- 'कुछ और गुलाब'

, पृ0 30

कवि ने कहीं-कहीं लौकिक और आध्यात्मिक प्रेम को भी एक साथ अभिव्यक्त करने की चेष्टा की है। ऐसे अंश कबीर की याद दिलाते हैं, जिनकी कृतियों में ऐसी छाया मिलती है। ग़ज़लों के माध्यम से यह प्रयास सराहनीय है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित ग़ज़लें द्रष्टव्य हैं --

(1) **हरक़दम, हर मोड़ पर हो साथ-साथ**
सामने फिर भी न आना, ख़ूब है।[1]

(2) **यों ही नहीं अपना सर कोई हर पत्थर से टकराता है**
शायद, उसने हर पत्थर में आपका चेहरा देखा होगा।[2]

(3) **चरणों में बिछी उनके पँखुरियाँ गुलाब की**
कुछ आख़िरी घड़ी में सँवर जाँय तो अच्छा।[3]

और अंत में कवि कहीं मानव जीवन की क्षणभंगुरता और नश्वरता की भी चर्चा करने लगता है ---

बस कि मेहमान सुबह-शाम के हैं
हम मुसाफिर सराय आम के हैं।[4]

अथवा --
सैकड़ों छेद हैं इसमें, मालिक !
अब ये प्याला ही दूसरा देना।[5]

1- 'कुछ और गुलाब' , पृ0 59
2- वही, पृ0 44 3- वही, पृ0 60
4- वही, पृ0 21 6- वही, पृ0 49
7- वही, पृ0 34

अष्टम अध्याय
उपसंहार एवं शोध-निष्कर्ष

व्यक्तित्व और काव्य-दर्शन :-

प्रस्तुत शोध-प्रबंध में गुलाब खंडेलवाल के व्यक्तित्व और कृतित्व के विश्लेषण से इतना स्पष्ट हो गया है कि इनका व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों उदात्त मूल्यों से संबद्ध हैं। आलोचना-साहित्य के आधुनिक निकष पर यह स्वाभाविक हो गया है कि किसी भी रचनाकार की कृतियों का मूल्यांकन अनिवार्यतः कृतिकार के व्यक्तित्व-विश्लेषण की गंभीर तथा मौलिक गवेषणा की अपेक्षा रखता है। क्योंकि, 'कवि का जीवन-वृत्त उसके व्यक्तित्व-निर्माण का बाह्य उपादान है और जीवन-दर्शन अभ्यन्तर उपादान। काव्य में कवि का सम्पूर्ण व्यक्तित्व अभिव्यक्त होता है।' [1] इस सन्दर्भ में सर आर्थर क्वीलर कूच का कथन भी उल्लेखनीय हो जाता है --' द वर्क आफ सो ऐण्ड सो इज गुड विकाउज इट इज द परफेक्ट एक्सप्रेशन आफ हिज पर्सनैलिटी।' [2] अतः किसी कवि के मूल्यांकन के लिए उसकी कृतियों की समीक्षा अनिवार्य होती है और इसी तरह उसकी रचनाओं के मूल्यांकन के लिए कवि का मूल्यांकन भी आवश्यक हो जाता है। इस सिद्धांत को ध्यान में रखकर कवि गुलाब के व्यक्तित्व-विश्लेषण और कृतित्व-विश्लेषण को एक दूसरे के पूरक रूप में प्रस्तुत किया गया है। द्रष्टव्य है कि आलोच्य कवि व्यक्तित्व की बहुत ही विशिष्ट गुणवत्ताओं के साथ पैदा नहीं हुए, पर कवि की साधारणता काल-क्रम से उनके व्यक्तित्व-निर्माण की विशिष्टता में बदल गयी। सचमुच, गुलाब जी का व्यक्तित्व एक आदर्श प्रतीक हो जाता है, यह जानने के लिए कि अपने प्रच्छन्न गुण-बीजों को, प्रतिभा, शिक्षा, सम्पर्क, अध्ययन, मनन, चिन्तन, श्रम और साधना से कोई भी व्यक्ति पल्लवित कर शीर्ष स्तर पर किस प्रकार पहुँच सकता है। अतः कवि गुलाब पात्र और प्रतीक दोनों रूपों में प्रेरणाप्रद तथा प्रभावी सिद्ध होते हैं। इनके व्यक्तित्व-निर्माण में अनुवंशिकता, पारिवारिक अनुकूलता, प्रतिकूलता, राजनीतिक और धार्मिक प्रभाव के साथ-साथ इनकी निजी संवेगात्मकता, साहसिकता, संवेदनशीलता, कल्पनाशीलता, चिन्तनशीलता, आशावादिता, आदि मनोवैज्ञानिक प्रभावों की अप्रतिम भूमिका निहित है। यही कारण है कि इनका

1- मैथिलीशरण गुप्त' : व्यक्ति और काव्य -- डॉ0 कमालकान्त पाठक पृ0 1
2- 'समीक्षाशास्त्र' -- डॉ0 दशरथ ओझा, पृ0 31

व्यक्तित्व चरित्र की तरह उजागर है, अनुकरणीय है। 'चरित्र बाहर से ग्रहीत एक आदर्श है जिसके लिए व्यक्ति अपने सभी अधिकारों की तिलांजलि देता है।'[1] गुलाब जी के जीवन-सूत्रों को अविच्छिन्न रूप में प्रस्तुत कर उनके व्यक्तित्व के अन्तर्बाह्य पक्षों के विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि उनके व्यक्तित्व में उत्तरोत्तर विकास हुआ है। कवि की विविध मार्मिक परिस्थितियों और उनके अपने संस्कार ने उन्हें वस्तु-सत्य और भाव-सत्य से जोड़ा है।

भौतिक सम्पन्नता और पारिवारिक अनुकूलता में बालक गुलाब की बाल्यावस्था व्यतीत हुई। धन-धान्य की बहुलता ने उनके परिवार को श्रम और साधना से विमुख नहीं किया (जो प्रायः हो जाया करता है) और इसका प्रभाव गुलाब जी पर भी पड़ा। गुलाब की तरह रंग और रूप में विशिष्ट, तीक्ष्ण बुद्धि का बालक किसीको भी अपनी ओर आकृष्ट करने की क्षमता रखता था। गया और काशी में क्रमशः शिक्षा-ग्रहण कर गुलाब जी स्नातक बने। वयःसन्धि की अवस्था से ही गुलाब जी की अभिरुचि काव्य-सृजन की ओर रही। अत्यन्त ही भावुक, सहृदय, स्वप्नदर्शी और कल्पनाशील युवक गुलाब को सौभाग्य से असाधारण रूपवती युवती कृष्णादेवी पत्नी के रूप में मिली। युवक गुलाब का वांछित सपना पूरा हुआ। दाम्पत्य जीवन गुलाब की ख़ुशबू से भर गया।

वात्सल्य सुख, कौटुम्बिक सुव्यवस्था और आर्थिक सम्पन्नता ने कवि-प्रतिभा-सम्पन्न युवक को काव्य-रचना का अनुकूल अवसर प्रदान किया। देखते ही देखते गुलाब जी की शरत-प्रभात-सी स्पृहणीय रूप की धूप, संगीत-सी श्रुति-मधुर सरस वाणी, और निश्छल आचरण, ने सब को मोह लिया। भारतीय जीवन-मूल्यों के पोषक, छल-छद्म की राजनीति से तटस्थ, महत्त्वाकांक्षाओं की तरह ऊँचे विचारों से युक्त तथा गंगाजल जैसे निर्मल व्यवहार के धनी गुलाब जी विख्यात हो गये। निरहंकारी, प्रसन्नचित्त, उदार, ईमानदार, व्यवहारकुशल, शील-स्नेह से भरे, मितभाषी गुलाब जी अपने जीवन, चरित्र और व्यक्तित्व के सभी रूपों में विशिष्ट हैं। उनके ऐसे ही व्यक्तित्व के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकला है कि वे विचारवादी नहीं, आचारवादी हैं, पात्र नहीं प्रतीक हैं। उनकी वाग्विदग्धता, शिष्टाचार की अनौपचारिकता, मन, वाणी, और आचरण की पवित्रता, सत्य की दृढ़ता, अहिंसा की निर्भीकता, परदुःखकातरता और प्रवृत्ति की वैष्णवता ने उन्हें न सिर्फ स्वजनों-परिजनों के बीच ही लोकप्रिय बनाया

1- 'समीक्षाशास्त्र' -- डॉ0 दशरथ ओझा, पृ0 35।

है, अपितु कविगुरु बेढब जी (जिन्हें स्वयं गुलाब जी ने अपना काव्यगुरु माना है,) मैथिलीशरण गुप्त, निराला, पंत, महादेवी वर्मा, हरिवंशराय बच्चन, केदारनाथ मिश्र 'प्रभात' जैसे प्रख्यात कवि और आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, पं0 नन्ददुलारे वाजपेयी तथा पं0 विश्वनाथ प्रसाद मिश्र जैसे प्रख्यात आलोचकों को भी आकृष्ट किया है। उनके सम्पर्क में आनेवाले लोग निरन्तर अभिभूत होते रहे हैं और स्वयं विशिष्ट लोगों के सम्पर्क में जाकर गुलाब जी ने उन्हें ही प्रभावित किया है। इस तरह गुलाब जी का व्यक्तित्व उनके कृतित्व की तरह ही विकासोन्मुख रहा है।

गुलाबजी के आभ्यन्तरिक व्यक्तित्व के प्रेरक तत्त्वों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि इन्होंने अपने व्यक्तित्व की अन्तःवृत्तियों का प्रकाशन अपनी रचनाओं में किया है। ज्ञातव्य है कि छायावाद की मृत काव्य-परम्परा के संवाहक शीर्ष कवि के रूप में गुलाब जी प्रतिष्ठित हैं, किंतु इनके काव्य-सृजन के पूरे चार दशकों में इनके विविध काव्य-प्रयोग, भाव-प्रयोग, विचार-वैविध्य, तथा जीवन-दर्शन की विकासोन्मुखता श्लाघ्य है। छायावादी कवि के रूप में काव्य-सृजन प्रारम्भ कर गुलाब जी ने यह सिद्ध कर दिया कि वे अपनी कृतियों में निरन्तर प्रासंगिक रहे हैं। काल-सापेक्षता उनकी कृतियों की और कालानुसरण की क्षमता उनके व्यक्तित्व की सर्वाधिक विशेषता रही है।

वैयक्तिक मनोभूमि से छायावादी काव्य-शिल्प को कसौटी मानकर गुलाबजी ने काव्य-सृजन प्रारम्भ किया और तदुपरान्त सामाजिक, राजनीतिक (विशेषकर समसामयिक) और युगीन प्रभावों को आत्मसात् कर अपनी काव्य-साधना को चरमोत्कर्ष तक पहुँचा दिया। फलस्वरूप इनकी प्रारम्भिक रचनाओं में रूप-रंग, आमोद-प्रमोद, यौवन, प्रेम और प्रकृति की मादक अभिव्यक्ति हुई है। भावगत उक्त विशेषताएँ इनके प्रारम्भिक काव्य-संग्रहों **कविता** और **चाँदनी** में निहित हैं। वस्तुतः युवक कवि की भावप्रवणता में वांछित कल्पना की साकार मूर्ति कृष्णादेवी के सम्पर्क ने कवि के भावों को और भी उद्दीप्त कर दिया। सच है, गुलाबजी की वांसती निशा में जब कृष्णा आयी, तो गुलाब की लाल पंखड़ियों में चांदनी सिमट गयी।

काल बहुत क्रूर होता है। जीवन-पुष्प में तीक्ष्ण काँटों की तरह आपदाएँ चुभती हैं। पहली पुत्री शकुंतला की मृत्यु (मात्र साढ़े तीन वर्षो की आयु में) ने कवि-हृदय को असह्य वेदना से भर दिया, जिस तरह सरोज की मृत्यु ने महाकवि निराला को। स्वयं गुलाब जी ने स्वीकार किया है कि उनकी जीवन-यात्रा और काव्य-यात्रा में

शकुंतला की स्मृति मील के पत्थर की तरह है।

गुलाब जी की सामाजिक पृष्ठभूमि बहुत ही उत्प्रेरक रही है। उन्होंने प्राचीन और नवीन जीवन-मूल्यों को अपनी कृतियों में आत्मसात् किया है। छूत-अछूत, जाति-भेद, भाषा-भेद, धर्मान्धता, आदि संकीर्णताओं से अलग हटकर गुलाब जी ने स्वस्थ-सुन्दर, समृद्ध और प्रगतिशील आदर्शों को काव्य की भाव और विचार-सम्पदा का आधार बनाया। समाज में व्याप्त विकृतियों एवं प्रेम तथा वैवाहिक समस्याओं को कवि ने लोकमंगल के धरातल पर परखने की कोशिश की है। **उषा** जैसे काल्पनिक महाकाव्य में प्रेम और विवाह की स्वीकृत मान्यताओं तथा तत्सम्बन्धी उलझनों का चित्रण समसामयिक चेतना के परिप्रेक्ष्य में किया गया है। अन्तर्जातीय विवाह अथवा प्रेमविवाह की विफलता से उत्पन्न असंगतियों और विकृतियों के जो संघर्ष या दुष्परिणाम हमारे समाज मे आये दिन देखने को मिलते हैं , कवि गुलाब उनसे पूर्ण परिचित हैं। **उषा** महाकाव्य की नायिका उषा का प्रभात से विवाह-पूर्व प्रेम, राजीव से शादी के कारण विलगाव और पुनः उषा, प्रभात और राजीव के प्रेम-त्रिकोण से उत्पन्न संघर्षपूर्ण अवसाद का मार्मिक चित्रण, इस प्रसंग में कवि गुलाब की इस सामाजिक जागरूकता का प्रमाण है। **कामायनी** और **उर्वशी** की तरह **उषा** का काव्य-वैभव हृदयग्राही है। 'इस महाकाव्य की चरम उपलब्धि उषा के चरित्र में नारी का आत्मत्याग तथा जीवन-उत्सर्गपूर्ण मानवीय स्वरूप का विकास है, जिसे देखकर बरबस 'श्रद्धा' की मूर्ति मन में जग उठती है। काव्य-सौष्ठव तथा भाव-गरिमा की दृष्टि से **कामायनी** की याद आती है।'[1]

कच-देवयानी एक खण्डकाव्य है। इसका कथानक पौराणिक है, तथापि इसमें गुलाब जी ने कतिपय मौलिक और स्वाभाविक उद्भावनाओं का निरूपण किया है। युवक और युवती के रूप में कच और देवयानी का आकर्षण जहाँ एक ओर अस्वाभाविक नहीं प्रतीत होता, वहीं दूसरी ओर गुरु-पुत्री हो जाने का व्यवधान सहसा आलोच्य काव्य को पौराणिक सत्य से जोड़ देता है। देवयानी के अभिशाप और पश्चाताप आदि की अभिव्यक्ति, गुलाब जी ने मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि में की है। कर्त्तव्य और भावना के संघर्ष में क्रमशः कच और देवयानी का प्रतीक-प्रस्तुतीकरण इस काव्य की महती उपलब्धि है। प्रेम वलिदान खोजता है और कर्त्तव्य की कठोर शिला पर भावना सर्प की तरह फण पटक कर शिथिल हो जाती है।

1- उषा, प्राक्कथन, महाकवि सुमित्रानन्दन पंत, पृ0 क-ख।

अहल्या भी एक पौराणिक खण्ड-काव्य ही है। किन्तु कवि गुलाब ने अहल्या, गौतम और इन्द्र तीनों को स्वाभाविक परिवेश में प्रस्तुत किया है। इस प्रख्यात कथानक में कवि की कुछ अपनी विशिष्ट कल्पनाएँ हैं। रूप और यौवन से सम्पन्न अहल्या कृशकाय तथा साधनारत गौतम की पत्नी है। तपस्वी की ओर से अहल्या की सहज उपेक्षा अस्वाभाविक नहीं है। प्रतीक्षारता और कामना-दहित अहल्या संध्या में श्रम-श्लथ पति गौतम से वह नहीं पाती है जिसका नाम है काम-तृप्ति। ऐसी परिस्थिति में देवराज इन्द्र के साथ वह सब कुछ घटित हो जाता है जो सहधर्मिणी के लिए वर्जित हैं। फिर अहल्या का अभिशापित होना, गौतम का क्रोध आदि प्रसंग परिचित हैं। अहल्या का शिलीभूत हो जानेवाला प्रसंग दूसरे रूप में आया है। शिलीभूत को इन्होंने अभिशापित, उपेक्षित तथा परित्यक्ता अहल्या की विवशता, निरुपायता और जड़वत् होनेवाली स्थिति से लिया है। गुलाब की अहल्या राम की चरणधूलि से नहीं, अपितु उनके सद्वचन और प्रेम से पुनः प्रतिष्ठित होती है।

कवि गुलाब छायावादी कवियों की तरह ही निश्चित राजनीतिक विचारधारा से प्रभावित नहीं हैं। पर, कोई भी कवि अपनी समसामयिक राजनीति से पूर्णतः अप्रभावित नहीं रह सकता। इसीलिए राजनीति के प्रचारक नहीं होते हुए भी गुलाब जी स्वस्थ राजनीति के समर्थक अवश्य हैं। इन्होंने स्वतन्त्रता के संघर्षो को देखा और स्वतन्त्रता के बाद की परिस्थितियों को झेला भी है। **आलोक-वृत्त** और **गांधी-भारती** काव्यों में कवि की राजनीतिक चेतना का परिचय मिलता है। गांधी की हत्या, समाजवाद और साम्यवाद के अभ्युदय, चीन के आक्रमण आदि आन्तरिक और बाह्य संघर्षो ने कवि गुलाब में राजनीतिक जागरूकता पैदा की है। गांधी के प्रभावों को अपनी जीवन-यात्राके पाथेय रूप में गुलाब जी मानते हैं। **आलोक-वृत्त** गांधी के जीवन-संघर्षो की मार्मिक गाथा है।

गांधी-भारती में गांधी की निर्मम हत्या का विषादपूर्ण चित्रण है।

कोई भी कवि विभिन्न भाव-बोधों से उद्वेलित होता है। पहले ही कहा जा चुका है कि मैथिली शरण गुप्त और सुमित्रानन्दन पंत की तरह गुलाब जी अपने काव्यों में विविध प्रयोगों के साथ-साथ विभिन्न प्रवृत्तियों की और उन्मुख रहे हैं। सच तो यह है कि काव्य-शिल्प की विविधता इनके काव्यों की अतिरिक्त विशेषता है। सर्वप्रथम **रूप की धूप** काव्य में इन्होंने रुबाइयों के माध्यम से प्रेम, सौन्दर्य और प्रकृति की विभिन्न स्थितियों का चित्रण किया है। उक्त काव्य में ही दोहा-शतदल का प्रयोग मिलता है। कुछ दोहों में बिहारी के दोहों की तरह

चमत्कृत करनेवाले विशिष्ट अनुभावों और विंबों का चित्रण है। **रूप की धूप** एक पृष्ठभूमि है अथवा प्राक्भूमिका है गुलावजी की ग़ज़लों के लिए। यह ठीक है कि कुछ हिन्दी-कवियों ने (भारतेन्दु, सनेही, रामनरेश त्रिपाठी, जयशंकर प्रसाद, निराला) हिन्दी में ग़ज़लें लिखीं, पर न तो उनकी ग़ज़लें उर्दू तेवर से अलग हैं और न ही उन ग़ज़लों का महत्त्व उनकी अन्य कविताओं के मुकाबले का है। स्व0 दुष्यन्त कुमार ने इस दिशा में निश्चय ही प्रशंसनीय प्रयत्न किया है। उनके असामयिक निधन से हिंदी-ग़ज़लों की अपूरणीय क्षति हुई है। गुलाव जी ने **सौ गुलाब खिले, पँखुरियाँ गुलाब की** तथा **कुछ और गुलाब** इन तीनों संग्रहों के माध्यम से हिन्दी-ग़ज़लों को बहुआयामी बना लिया। इन्होंने ही हिन्दी-ग़ज़लों को सही अर्थ में विकसित किया है। कवि ने हिन्दी के स्वीकृत सौन्दर्य-वोध को बिना धूमिल किये अपनी ग़ज़लों को कथ्य की दृष्टि से सुपरिचित भूमि पर रखा।

अत्याधुनिक काव्य-संग्रहों में **नूपुरबँधे चरण, सीपी-रचित रेत, आयु बनी प्रस्तावना, शब्दों से परे, व्यक्ति बन कर आ** तथा **बूँदें जो मोती बन गयीं** उल्लेखनीय हैं। **कविता** और **चाँदनी** की तरह कवि गुलाब ने नूपुरबँधे चरण में पुनः किशोर मन की रोमांटिक कल्पनाओं से पूर्ण भावों को व्यक्त किया है, पर अंतिम दोनों काव्यों की तुलना में इसमें प्रेम की प्रौढ़तम अनुभूतियाँ हैं।

सीपी-रचित रेत में फिर कवि सौंदर्य और प्रेम का गायक बन जाता है। **'आयु बनी प्रस्तावना** के गीतों में मेरे भोगे हुए क्षण ग़ज़लों की तरह प्रतीकों की वर्तुलता में नहीं, सीधी रेखाओं में चित्रित हुए हैं।'[1] इस काव्य के अधिकांश गीत प्रेम-प्रधान हैं।

शब्दों से परे में जीवन-सत्य तथा गहन दार्शनिकता की अभिव्यंजना है। संघर्षमय जीवन से उत्पन्न निराशा, पश्चाताप, संत्राश, जग की अनित्यता, मृत्यु-बोध आदि अनुभूतियों का यथार्थवादी चित्रण इस काव्य में हुआ है। कवि के विरक्त मन की पहचान इसकी कविताओं में मिलती है। दूसरी ओर, निर्गुण तत्त्व, अरूप, अशब्द, अनिर्वचनीय तथा अज आदि जो सर्वशक्तिमान निराकार ब्रह्म की संज्ञाएँ हैं, उनके प्रति कवि की आस्था का भी बोध कुछ कविताओं

---

1. **आयु बनी प्रस्तावना**, आमुख -- गुलाब, पृ0 6।

में हुआ है। वस्तुतः कवि ने जिस मनोभूमि पर जीवन-सत्य की रागात्मक उपलब्धि की है, उसकी विवृति शब्दों से पूर्णतः नहीं हो सकती है, क्योंकि वहाँ शब्द नहीं , निःशब्द के ही माध्यम से पहुँचना होता है। **शब्दों से परे** में उसी उदात्त मनोभूमि की एक झलक है।

इसी काव्य से कवि गुलाब का आध्यात्मिक चिन्तन-बोध उनके जीवन-दर्शन में दिशान्तर लाता है। **व्यक्ति बनकर आ** काव्य ऐसे ही भावों की विकसित जीवन-दृष्टि है। जीवन की सामान्य ऐन्द्रिय संवेदनाओं के प्रवाह में कभी-कभी अनायास तत्त्व-दर्शन के जो क्षण आ जाते हैं, उनकी भाषा शब्दों से परे होती है। लेकिन अशब्द अरूप की अनुभूति है, अभिव्यक्ति नहीं। इसी लिए-**व्यक्ति बन कर आ** कवि का स्वाभाविक आग्रह है।

बूँदें : जो मोती बन गयीं कविवर गुलाब की सद्यःप्रकाशित रचना है। प्रेम की विभिन्न मनोदशाओं में कवि के अन्तर्मन में जो भाव-विन्दु उगते हैं, उनमें से कुछ ही मुक्तावस्था को उपलब्ध हो पाते हैं। प्रस्तुत संकलन ऐसी ही बूँदों का है, जो मोती बन गयी हैं -- प्राणों की मधुर प्रेम की पीर, जो शब्दों की सीपी में प्रवेश करके सहज ही शुभ्रा और भास्वर हो उठती हैं : होहिं कबित मुकुतामनि चारू। प्रेम के परिणत स्वरूप की उज्ज्वलता इन मोतियों में अपने अनेक-अनेक आयामों को उद्‌भासित करती है।

गद्य को कवियों की कसौटी कहा गया है। गुलाब की गद्य-रचनाओं में **राज राजेश्वर अशोक** और **भूल** दो नाटक हैं। प्रथम ऐतिहासिक नाटक है जिसमें अशोक के हृदय-परिवर्तन का मनोवैज्ञानिक चित्रण है। 'भूल' एक हास्य-प्रधान सामाजिक नाटक है। कवि एक सफल नाटककार भी है, उक्त दोनों कृतियों से इसका बोध होता है।

इस तरह कवि गुलाब के कृतित्व-विश्लेषण से कुछ महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकलते हैं --

(1) गुलाब जी प्रेम और सौंदर्य के कवि हैं।
(2) ये मानवतावादी दृष्टिकोण से पूर्ण हैं।
(3) ये गांधीवाद से प्रभावित हैं।
(4) इन्होंने साम्यवाद के प्रभावों को भी ग्रहण किया है।
(5) समन्वयवादी कवि के रूप में साम्यवाद की प्रगतिशीलता और गांधीवाद की आध्यात्मिकता दोनों को इन्होंने ग्रहण किया है।
(6) कवि गुलाब में राष्ट्रीय भावना का बाहुल्य है।
(7) इनके काव्य सर्वथा प्रासंगिक हैं।
(8) आलोच्य कवि अपने जीवन और काव्य, दोनों में स्थापित मूल्यों के

पोषण में अभिरुचि रखते हैं, पर ग्राह्य नवीन मूल्यों को भी स्वीकारते हैं।

(9) जीवन और जगत में महा-अस्तित्व के प्रति सर्तक हैं और इसलिए **शब्दों से परे** तथा **व्यक्ति बनकर आ** काव्यों में उसका विश्लेषण हुआ हैं।

(10) कवि गुलाब जी का व्यक्तित्व आदर्श, प्रतीक और उत्प्रेरक है तो उनका काव्य-दर्शन प्रगतिशील, सार्थक, प्रासंगिक, विविध-आयामी और उदात्त है।

काव्य-निकष

कवि गुलाब छायावादी परम्परा के लब्धप्रतिष्ठ कवि हैं। उनके प्रारम्भिक काव्य (विशेषकर **कविता** और **चाँदनी**) भाव-पक्ष और कला-पक्ष दोनों दृष्टियों से मुख्यतः छायावादी काव्य की कोटि में परिगणित होंगे। **उषा** में **कामायनी** महाकाव्य जैसा शिल्प-विधान है और गौणतः **कच-देवयानी** और **अहल्या** में भी उसी शिल्प का निर्वाह हुआ है। कवि गुलाब के काव्यों की अतिरिक्त विशेषता इस अर्थ में है कि ये मुख्यतः प्रयोगधर्मी रहे हैं -- 'मेरा प्रारम्भ से ही यह प्रयास रहा है कि वादों के झमेले से दूर रहकर, हिन्दीकाव्य को नयी-नयी विधाओं से सजाऊँ और उसमें स्वस्थ स्वच्छंदतावाद की स्थापना करूँ।'[1] इस दृष्टि से गुलाब जी की रचनाओं को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है -- (क) विकासोन्मुख (ख) प्रयोगोन्मुख।

विकासोन्मुख श्रेणी में इनके तीन प्रबंधकाव्य हैं -- **कच-देवयानी, अहल्या** और **आलोक-वृत्त**। ये तीनों खण्डकाव्य हैं किंतु लक्षण-बद्ध नहीं। इनमें शास्त्रीय लक्षणों के लिए आग्रह है, पर युगानुकूल भावों की नवीनता और मौलिकता का मोह भी है। पौराणिक और ऐतिहासिक कथानकों और पात्रों को कवि ने आधुनिक युग की स्वाभाविकता के निकष पर परखा है।

उषा प्रयोगोन्मुख महाकाव्य है। इसमें प्रयोगशील नवीनता का आग्रह इतना बढ़ा हुआ है कि परम्परागत लक्षणों का लगभग निषेध-सा हो गया है। इसके प्रमुख दो कारण हैं -- **कामायनी** की लोकप्रियता की प्रेरणा और यूरोप के आधुनिक प्रबंध-काव्यों के प्रभाव।'[2] इनके मुक्तक-काव्यों और ग़ज़ल-संग्रहों में नये-नये प्रयोग मिलते हैं। प्रबंध-रचनाओं की विशिष्टताओं में निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण हैं --

---

1- नूपुरबँधे चरण, दो शब्द, गुलाब (पृष्ठ का उल्लेख नहीं है)

2- हिन्दी में उर्वशी (दिनकर), तुलसीदास (निराला), कनुप्रिया (धर्मवीर भारती), द्रौपदी (नरेन्द्र शर्मा), आदि इसी कोटि की प्रबंध-रचनाएँ हैं।

(क) कथानक का वैविध्य (पौराणिक, ऐतिहासिक और काल्पनिक)
(ख) कथा-स्वल्पता

अभिव्यंजना-कौशल :-

(ग) मनोवैज्ञानिकता
(घ) नाटकीयता
(ड) प्रतीकात्मकता
(च) चरित्र-योजना की नवीनता, आदि।

(क) गुलाब जी की प्रबंध-रचनाओ में **उषा** में जहाँ 12 सर्ग हैं, **आलोक-वृत्त** में 13 सर्ग हैं तो दूसरी और **कच-देवयानी** में दो सर्ग और **अहल्या** में दो खण्ड हैं।

(ख) मंगलाचरण की काव्य-रूढियों का कवि गुलाब ने सर्वथा परित्याग किया है। सिर्फ **आलोक-वृत्त** खण्ड-काव्य में कवि ने अपनी कल्पना का स्मरण किया है जिसे मंगलाचरण नहीं कहा जा सकता। मंगलाचरण की दृष्टि से यह कवि का नया प्रयोग है।

(ग) प्रकृति-चित्रण में सस्कृत काव्यों के लक्षणों को ध्यान में नहीं रखा गया है, बल्कि उसे मानव की सहचरी के रूप में देखते हुए उसके नैसर्गिक सौंदर्य और प्रभाव का चित्रण किया गया है।

(घ) रस-निरूपण की नवीनता :-- रस-निरूपण में भी गुलाब ने नवीनता दिखायी है। ज्ञातव्य है कि आधुनिक कवि रस-निरूपण की अपेक्षा भाव-निरूपण पर ही विशेष ध्यान देता है। कहना तो यह सही होगा कि अत्याधुनिक कवि भाव-निरूपण से भी अधिक विचार-निरूपण की ओर उन्मुख हो गया है। गुलाबजी के प्रबंध-काव्यों में शास्त्रीय अर्थ में रस-निरूपण की प्रवृत्ति कम है। तथापि **उषा, अहल्या,** तथा **कच-देवयानी** में संयोग तथा वियोग-श्रृंगार एवं करुण रस का भरपूर चित्रण हुआ है। **आलोक-वृत्त** में रस से अधिक भावोद्रेक की स्थिति है।

(ड) अलंकार की दृष्टि से गुलाब जी के प्रबंध-काव्यों में भारतीय एवं पाश्चात्य अलंकारों के प्रयोग हुए हैं। परम्परानुमोदित अलंकारों के प्रयोग में भी लाक्षणिक चमत्कार के द्वारा अभिनव अर्थ प्रदान किये गये हैं। पाश्चात्य अलंकारों में मानवीकरण, विशेषण-विपर्यय तथा ध्वन्यर्थ-व्यंजना के विशेष प्रयोग हुए हैं।

(च) इन प्रबंधों में वर्ण या रंग का वर्णन, गंध की संवेदना, नाद-व्यंजना, तथा बिम्बों के कलात्मक प्रयोग मिलते हैं।

(छ) गुलाब जी ने अपनी प्रबंध-रचनाओं में छंदों के अधिकांश प्रयोग छायावादी कवियों की तरह किये हैं, शास्त्रीय प्रयोग कम हुए है।

(ज) इनकी प्रबंध-रचनाओं में भाषा शैली के अनेकानेक प्रयोग मिलते हैं -- संस्कृतनिष्ठ, प्रवाहपूर्ण, प्रसाद-गुणसम्पन्न, लाक्षणिक, प्रांजल तथा प्रसंग-गर्भत्व से सम्पन्न।

गुलाब जी के मुक्तक-काव्यों में भी प्रयोग-वैविध्य है। **कविता** और **चाँदनी** प्रधानतः प्रेम-प्रधान प्रतीक-काव्य हैं। इनमें प्रकृति का मानवीकरण-रूप अनेक मुद्राओं में (रसात्मक और चाक्षुष-बिम्वों से पूर्ण) वर्णित हुआ है। इनमें छायावादी कवियों की तरह गीति-काव्य के सफल प्रयोग मिलते हैं। **रूप की धूप** के दोहे तथा रुबाइयाँ, **गांधी-भारती** तथा **सीपी-रचित रेत** के सॉनेट, **नूपुरबँधे चरण** के सम्वोध-गीत कवि गुलाव की प्रयोगधर्मिता के उदाहरण हैं। ग़ज़लों के तीन संग्रहों (**सौ गुलाब खिले, पँखुरियाँ गुलाब की** और **कुछ और गुलाब**) में गुलाब जी ग़ज़ल-सम्राट् के रूप में प्रस्तुत होते हैं। 'ग़ज़लों के इस प्रयोग को मैं अपने जीवन का एक विशिष्ट मोड़ मानता हूँ। भाषा, भाव और अभिव्यंजना की दृष्टि से नवीन और सभी परम्पराओं सें मुक्त होते हुए भी ये ग़ज़लें जीवन की मार्मिक अनुभूतियों पर आधारित हैं। उर्दू-साहित्य की विशाल ग़जल-परम्परा से मुहावरेदानी, कथन-भंगिमा आदि बहुत ही विशिष्टताओं को ग्रहण करते हुए इन ग़ज़लों में मैंने अपनी ओर से रसान्विति, बिम्वात्मकता आदि के रूप में उसे कुछ देने का भी प्रयास किया है।' [1]

ग़ज़लों के बाद **शब्दों से परे** और **व्यक्ति बन कर आ** काव्यों में कवि की दूसरी प्रयोग-भूमिका प्रकट हुई है। अगोचर और आध्यात्मिक चिन्तन-विश्लेषण के लिए गुलाब जी ने छायावादोत्तर नयी कविता का शिल्प ग्रहण किया है। कवि की भावानुभूति वैचारिकता में बदल गयी है और इसीलिए प्रयोगवादी कवियों की तरह बौद्धिकता, अनुभवों की अभिव्यक्ति की भाषा, वैचारिक कविता की तरह हो गयी है। **व्यक्ति बन कर आ** काव्य में भाव एवं शिल्प का विरल संतुलन है। अपने कृतित्व में प्रयोग के नये क्षितिजों के सन्धान के अभ्यासी गुलाब जी ने इस संकलन की कविताओं को छन्द की गतानुगतिकता से स्वच्छन्द करके कथ्य की आन्तरिक लय पर आधारित रखा है। भाषा गद्य के निकट होने पर भी अपनी विशिष्ट भावगत लय के कारण काव्यात्मक है। यही वातें **बूंदें: जो मोती बन गयीं** काव्य के सन्दर्भ में कही

1- 'सौ गुलाब खिले' -ये ग़ज़लें , गुलाव, प

जा सकती हैं। गुलाब जी की इन कविताओं में संवेदना का नवनवोन्मेष, बिंबविधान की मौलिकता का आश्रय लेकर, नूतन काव्य-शिल्प में व्यक्त हुआ है। छन्द अपनी आकृति से स्वच्छन्द होकर अरूप हो गये हैं और कथ्य की आन्तरिक लय से ही अनुशासित हैं। काव्य-भाषा गद्य की सहजता के समीप आ गयी है।[1]

अतः शोध-निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि महाकवि गुलाब की विविध-आयामी कालजयी कृतियों की परम्परा में गीत, प्रगीत, दोहे, रुबाई, सॉनेट, ग़ज़ल, तुकान्त, अतुकान्त, खण्ड-काव्य, महाकाव्य, नाटक आदि की मनोरम प्रयोग-विधियों की इस नवीनतम कड़ी में कवि की चार दशकों की सुदीर्घ भाव-साधना परिणत हुई है।

'कैशोर स्वच्छन्दतावादी सौन्दर्य-भावना 'अविचारित रमणीय' से आरम्भ होकर गुलाब जी की साहित्य-यात्रा अनेक सोपानों से गुजरती हुई जीवन के समग्र दर्शन के 'विचारित सुस्थ' की ओर उत्क्रमण कर रही है। लेकिन सुन्दर से सत्य और सत्य से शिव का यह आरोह शुष्क चिंतनपरक न होकर सरस एवं काव्यात्मक है।'[2]

ऐसे महाकवि के व्यक्तित्व और कृतित्व का मूल्यांकन करते हुए प्रस्तुत शोध-कर्त्ता विनम्र गौरव का अनुभव करता है। सौभाग्य से गुलाब जी आज भी अपनी काव्य-साधना में अहर्निश लगे हुए हैं। उनकी कई कृतियाँ शीघ्र ही प्रकाश्य हैं। ईश्वर उन्हें दीर्घायु बनायें।

---

1. 'बूँदें: जो मोती बन गयीं : प्राचार्य विश्वनाथसिंह-आवरणपृष्ठ पर
2. 'शब्दों से परे' : प्राचार्य विश्वनाथसिंह-आवरणपृष्ठ पर

परिशिष्ट

(1) गुलाब खंडेलवाल का साक्षात्कार
(2) गुलाबजी को लिखे गये विभिन्न साहित्यकारों के पत्र
(3) गुलाबजी के विभिन्न काव्यों की मूर्धन्य साहित्यकारों द्वारा प्रशस्तियाँ
(4) आधार एवं सहायक ग्रंथों की सूची

परिशिष्ट - 1
कविवर गुलाब का साक्षात्कार

कवि के व्यक्तिगत एवं साहित्यिक जीवन के अन्तराल में प्रवेश पाने के लिए शोधकर्त्ता ने स्वयं कवि के निकट बैठकर कुछ जिज्ञासा व्यक्त की है, जिसका समाधान कवि-वाणी द्वारा प्रस्तुत है ---

प्रश्न : -- आपके व्यक्तित्व को सबसे अधिक प्रभावित किसने किया ?

उत्तर -- मुझे सबसे अधिक बेढब जी और कामता सिंह 'काम' ने प्रभावित किया है।

प्रश्न : -- आपके जीवन का उद्देश्य क्या है ?

उत्तर -- मेरा उदेश्य साहित्य-सृजन है।

प्रश्न : -- आपको साहित्य-सृजन के अतिरिक्त किस चीज का शौक है ?

उत्तर -- मुझे पढ़ने और भ्रमण करने का शौक है।

प्रश्न : -- कवियों में आप अपना मानक किसको मानते हैं ?

उत्तर -- कालिदास, तुलसीदास, रवीन्द्र नाथ टैगोर और शेक्सपियर को।

प्रश्न : -- आपके काव्य-गुरु कौन हैं ?

उत्तर -- बेढब जी

प्रश्न : -- आपको जीवन में सबसे बड़ा दुःख कब हुआ ?

उत्तर -- अपनी पुत्री शकुंतला की मृत्यु और गांधी जी की हत्या से मैं बहुत दुःखी हुआ।

प्रश्न : -- सबसे अधिक सुख का अनुभव कब हुआ ?

उत्तर -- जब कवि पंत की लिखी हुई 'उषा' की भूमिका मिली

प्रश्न : -- आपने छायावाद की किन-किन प्रवृत्तियों को स्वीकार किया है ?

उत्तर -- मैंने छायावाद का भाषा-शिल्प और अभिव्यक्ति की सूक्ष्मता को ग्रहण किया है। कुछ प्रारम्भिक रचनाओं में भाव और कला दोनों दृष्टियों से छायावादी प्रभाव रहे हैं।

प्रश्न : -- छायावादोत्तर प्रवृत्तियों में कई आन्दोलन आये, क्या आप पर उन

प्रवत्तियों का प्रभाव पड़ा ?

उत्तर -- मैं छायावादोत्तर किसी प्रवृत्ति से बँध कर नहीं चल सका। मेरे छायावादोत्तर मुक्तक-काव्यों में आप प्रयोगवाद या नयी कविता का प्रभाव ढूँढ सकते हैं, लेकिन मैने उन्हें ध्यान में रखकर कविता नहीं लिखी।

प्रश्न : -- आपकी ग़ज़लों के कई संग्रह प्रकाशित हुए हैं। आप ग़ज़लों में

किसका प्रभाव मानते हैं ?

उत्तर -- मैंने अपनी ग़ज़लों में मीर की संवेदना, ग़ालिब की तर्जेबयानी, तुलसी की मर्यादाशीलता तथा कबीर की रहस्यमयता को रखा है।

परिशिष्ट - 2
गुलाब जी के नाम लिखे गये साहित्यकारों के पत्र

कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने जितने सारे पत्र दिखाये, उनमें कुछ व्यक्तिगत पत्रों को मैंने छोड़ दिया है। वे पत्र जो साहित्यकारों द्वारा लिखे गये हैं, उनकी मूल प्रति की नकल यहाँ दी जा रही है। गुलाब जी ने बताया कि बहुत सारे पत्र खो भी गये हैं। जो उपलब्ध हैं वे निम्न हैं ---

(1) कवि मैथिलीशरण गुप्त का पत्र

(क)

श्री राम

चिरगाँव

10-3-1950

प्रिय गुलाब जी,

'चाँदनी' और 'गांधी-भारती' के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद।

आपकी साहित्य-साधना गतिमती है, यह बड़े हर्ष की बात है। मैं तो आपके कवित्व का प्रशंसक हूँ, उसे आप जानते ही हैं।

आज आठ-दस दिन के लिए काशी जा रहा हूँ। आप प्रसन्न होंगे।

भवदीय-मैथिलीशरण

(ख)

श्री राम

चिरगाँव (झाँसी)

17-4-48

प्रिय, गुलाब जी,

'वलि निर्वास' के लिए वहुत-बहुत धन्यवाद। राय साहब की कापी बनारस भेज रहा हूँ। मैं तो आपका हृदय से प्रशंसक हूँ और मुझे आपसे बहुत आशा है। प्रभु आपको प्रसन्न रखें।

'बलि निर्वास' का पहिला ही गीत आपकी कवित्व-शक्ति का परिचय देता है और 'पद विन्यास मात्रेण' वाली उक्ति का स्मरण दिलाता है।

आशा है आप स्वस्थ सानन्द होंगे।

शुभेच्छु
मैथिलीशरण

श्री गुलाब जी
कला-कुंज
94 इडन रोड
गया

---

(2) आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र का पत्र

विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
आचार्य
हिन्दी-विभाग,
काशी विश्वविद्यालय

होलकर भवन,
काशी विश्वविद्यालय, वाराणसी
18-4-80

प्रिय गुलाब जी,

आप अपनी रचनाएँ स्वयं दे गये थे, उन्हें पढ़कर समाप्त करते न करते आपकी दो अन्य रचनाएँ डाक से आ पहुँची -- 'बलि निर्वास' और 'पँखुरियाँ गुलाब की'। आपकी प्रतिभा ने अनेक रूपात्मक विकास कर लिया है। आप हिन्दी के परम समर्थ कवि हो गये हैं, इसमें किसीको किसी प्रकार का संदेह नहीं है। ग़ज़लें भी आपने बहुत मार्मिक लिखी हैं। उनमें नवीनता का न्यास भी किया है। मुझे इससे बड़ी प्रसन्नता होती है। मेरे स्वास्थ्य में सुधार हो रहा है और कुछ महीनों में पर्याप्त सुधार हो जायगा, ऐसी आशा है। आप सबकी मंगल कामनाएँ ही मेरे शरीर का पुनर्नवीकरण कर रही हैं। पुस्तकें भेजने के लिए धन्यवाद

आशा है, आप सानंद हैं।

आपका
विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

गुलाब खंडेलवाल
कमल प्रकाशन, चौक
प्रताप गढ़ (उ0 प्र0)

(3) कवि केदार नाथ मिश्र 'प्रभात' का पत्र

पटना 16
24-11-72

प्रिय भाई गुलाब जी

आपका पत्र मिला था। आपके बल विश्वास का मैं कायल हूँ और यह बहुत पहले कह चुका हूँ कि आप अपनी शैली के सम्राट् हैं। ईश्वर आपको विजयी बनाये, यही प्रार्थना है। मेरा कथा-काव्य गीतों से भिन्न रचना है। जब अवकाश मिले, पढ़ने की कृपा करेंगे।

आशा है, हिन्दी ग्रंथ अकादमी द्वारा आयोजन की भीड़ अब गया में नहीं है। या उसे आलोचना-ज्वर कहूँ ? जितने असफल लेखक-कवि हैं सब के सब आलोचक बन गये हैं। विश्वविद्यालय के अँधेरे कमरे में लेजाकर हिन्दी का कचूमर निकाल रहे हैं।

आशा है, प्रसन्न और सुखी होंगे।

कविवर गुलाब — स्नेहाधीन
चौक — प्रभात
गया।

(4) पं0 हजारी द्विवेदी का पत्र

उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी

डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी — दूरभाष : 67014
अध्यक्ष, शासी मंडल — शिविर कार्यालय
पत्रांक..... — ए33 रवीनंद्रपुरी, वराणसी
दिनांक 5-3-73

प्रिय भाई गुलाब जी,

आपका 12-2-73 का कृपा पत्र मिला। दोनों पुस्तकें भी मिल गयीं,बहुत अनुग्रहीत हूँ। 'रूप की धूप' मुझे बहुत पसन्द आई। इसमें उर्दू के समान, प्रायः उसीके छन्दों में, सहज ही प्रभाव डालनेवाली बेधक उक्तियाँ हैं जो बहुत ही आकर्षक और प्रभावशाली रूप में अभिव्यक्त हैं। मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार करें। अभी 'उषा' नहीं देख पाया हूँ, उसे भी धीरे-धीरे देख लूँगा। आशा करता हूँ स्वस्थ और सानन्द होंगे।

श्री गुलाब खंडेलवाल
चौक, गया
गया।

आपका
हजारी प्रसाद द्विवेदी

(5) नन्ददुलारे वाजपेयी का पत्र

नन्द दुलारे वाजपेयी
उपकुलपति

दूरभाषः निवास- 140
कार्यालय- 63
विक्रम विश्वविद्यालय
उज्जैन 14 फरवरी 1966

प्रिय गुलाब,

आपका पत्र मिला। आपका 'उषा' काव्य मुझे मिला और उसे पढ़ भी गया हूँ। मुझे पुस्तक बहुत अच्छी लगी। इसके संबंध में विस्तृत विचार कुछ समय पश्चात् ही लिख सकूँगा।

आशा है आप स्वस्थ एवम् सानंद हैं

श्री गुलाब खंडेलवाल
चौक, गया
गया,

आपका,
नन्द दुलारे वाजपेयी

(6) कवि हरिवंश राय बच्चन का पत्र

बम्बई
16-1-76

सम्मान्य बंधु

पत्र एवं भावना के लिए आभारी हूँ। आपकी कृति 'आलोक-वृत्त' समय से मिल गयी थी, धन्यवाद।

मैं इसे पूरी पढ़ चुका हूँ। आपकी कृति से गांधी-साहित्य में अवश्य वृद्धि हुई है। मेरी कामना है कि आपकी कृति जन-रंजन एवं सज्जनप्रिय सिद्ध हो।

मेरा स्वास्थ्य संतोषजनक है। लिखना पढ़ना प्रायः पत्रों तक सीमित।

अपने मंगल कल्याण के लिए मेरी शुभकामनाएँ स्वीकार करें।

आपका
बच्चन।

(7) प्रो0 कुमार विमल का पत्र

दूरभाष कार्यालय 23525
आवास 52944

प्रो कुमार विमल, डी,लिट
अध्यक्ष बिहार लोकसेवा-आयोग, पटना

प्रिय महोदय,

दिनांक 19-9-82 को गया में आपके हाथों से आपकी दो काव्य कृतियाँ -- 'शब्दों से परे' और 'अहल्या' प्राप्त कर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हुई।

'अहल्या' के भाव-पक्ष में जो चारुत्व या औदात्य है, उसका क्या कहना। इसकी भाषा-शैली और छन्द-योजना में कवि की प्रौढ़ प्रतिभा का जो प्रभावघन चमत्कार है, वह आधुनिक हिन्दी-कविता की प्रभूत श्री-वृद्धि करता है।

'शब्दों से परे' में संकलित कविताएँ भी दिव्य हैं। इन कविताओं में गोचर से अगोचर की ओर एक प्रच्छन्न प्रस्थान है। कहीं-कहीं कवि का अन्तर्मन महाशून्य के द्वारा पर दस्तकें देता हुआ दीख पड़ता है।

समय मिलने पर फिर कभी विस्तार से लिखूँगा
शुभकामनाओं सहित,

भवदीय,
कुमार विमल
5-10-82

सेवा में --
श्री गुलाब खण्डेलवाल
द्वारा- कमल प्रकाशन, चौक
प्रतापगढ़ (अवध), उत्तर प्रदेश।

परिशिष्ट - 3

कविवर गुलाब के विभिन्न काव्यों की मूर्धन्य साहित्यकारों द्वारा प्रशस्तियाँ

कविता

(1) 'भाव और भाषा का इतना सुंदर सामंजस्य कदाचित ही हिन्दी के किसी कवि ने इस अवस्था में ऐसा किया हो।' [1]

--- बेढब बनारसी

(2) मैंने 'कविता' को उन संग्रहों में रख दिया है, जिन्हें मैं फिर-फिर देखना चाहता हूँ। रचनायें पढ़ने पर ऐसा लगता है जैसे मेरे ही हृदय का एक टुकड़ा विधाता ने तुम्हारे अंदर रख दिया है।[2]

-- बच्चन

चाँदनी

कवि के हाथों में शब्द नाचते हुए आते हैं।" [3]

--बेढब बनारसी

बलि-निर्वास :

'आपका 'बलि-निर्वास' खूब है। मैंने और पंत जी ने उसे अत्यन्त चाव से पढ़ा है। हम दोनों ही आपके परम प्रशंसक हैं।" [4] -- बच्चन

1- 'संक्षिप्त परिचय', पृ0 5 कमल प्रकाशन, चौक प्रतापगढ़ (उत्तर-प्रदेश)
2- वही, पृ0 5 3- वही, पृ0 7
4- वही, पृ0 8

कच-देवयानी :

(1) आप खरे धनी हैं। तभी तो 'आपने वाणी को इतने अलंकार दिये हैं कि वे उसे राजरानी बना देते हैं।' [1] ---- मैथिलीशरण गुप्त

(2) 'किसी भी भारतीय भाषा के आधुनिक साहित्य में कच-देवयानी जैसा सुंदर और समृद्ध दूसरा खण्ड-काव्य मिलना कठिन है।' [2]

--शेषेंद्र शर्मा
--राजकुमारी इंदिरा धनराजगिरि
(तेलुगू के महान साहित्यकार-दंपति)

उषा :

'नयी कविता के कोलाहल पूर्ण वातावरण में महाकाव्य की परंपरा के प्रति आस्थावान कवि को हम बधाई देते हैं। कवित्व का परिपाक बड़ा ही रमणीय और मनोहारी है। इस महाकाव्य से परंपरा-प्रेमियों को भी आंनद प्राप्त होगा और नवीनता के आग्रहियों को भी।' [3]

--प्रो0 देवेन्द्र नाथ शर्मा

रूप की धूप

'मैं गुलाब जी को अपनी पीढ़ी का सर्वश्रेष्ठ कवि मानता हूँ।'[4]

--डॉ0 राम कुमार वर्मा

सौ गुलाब खिले

(1) 'आपकी गुलाब बाड़ी की खूब सैर करता हूँ। ..... आपने

1- 'सक्षिप्त परिचय', पृ0 10, कमल प्रकाशन, चौक, प्रतापगढ़ (उत्तर प्रदेश)।
2- वही, पृ0 10 3- वही, पृ0 17
4- वही, पृ0 19

हिन्दी ग़ज़लों का बहुत ही सफल प्रयोग किया है और वह भी उर्दू से अलग हटकर।' [1] --- राय कृष्ण दास।

(2) 'गुलाब की बहुमुखी प्रतिभा का नवरूप, नव विकास। जन-रंजन भी और सज्जनप्रिय भी।' [2] --- बच्चन

आलोक-वृत्त :

'यह काव्य-रचना गांधी-साहित्य की एक स्मरणीय कृति मानी जायेगी।'[3]

-- डॉ0 रामकुमार वर्मा

सीपी-रचित रेत :

'अन्य विधाओं की तरह गुलाब जी सॉनेट के भी हमारे अन्यतम कवि है।' [4]

-- भवानी प्रसाद मिश्र

1- 'संक्षिप्त परिचय' पृ0 19
2- वही, पृ0 19
3- वही, पृ0 23
4- वही, पृ0 24

परिशिष्ट- 4

आधार एवं सहायक ग्रंथों की सूची

(क) आधार ग्रंथ --

कवि गुलाब के काव्य-संग्रह

क्रम सं0	काव्य-संग्रह	प्रयुक्त संस्करण
1	अहल्या [1]	
2	आलोक-वृत्त	प्रथम संस्करण 1975
3	आधुनिक कवि	हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग -1983 प्रथम संस्करण 1983
4	आयु बनी प्रस्तावना	प्रथम संस्करण, 1981
5	उषा	प्रथम संस्करण, 1965
6	कच-देवयानी	तृतीय संस्करण [2]
7	कविता	द्वितीय संस्करण 1976
8	कुछ और गुलाब	प्रथम संस्करण 1979
9	गांधी-भारती	प्रथम संस्करण 1948
10	चाँदनी	प्रथम संस्करण 1945
11	नूपुरबँधे चरण	प्रथम संस्करण 1978
12	पँखुरियाँ गुलाब की	प्रथम संस्करण [1]
13	बलि-निर्वास	द्वितीय संस्करण 1978
14	बूँदें : जो मोती बन गईं	प्रथम संस्करण 1983
15	भूल	1980 [3]

1- इनमें संस्करण और तिथि का उल्लेख नहीं है।

16	मेरे भारत, मेरे स्वदेश	, प्रथम संस्करण 1963
17	राजराजेश्वर अशोक	प्रथम संस्करण 1978
18	रूप की धूप	प्रथम संस्करण 1971
19	व्यक्ति बनके आ	प्रथम संस्करण 1983
20	शब्दों से परे	प्रथम संस्करण 1981
21	सीपी-रचित रेत	प्रथम संस्करण 1980
22	सौ गुलाब खिले	प्रथम संस्करण 1973

(ख) सहायक ग्रंथों की सूची

शोध-प्रबंध

रचनाकार --	पुस्तक का नाम	प्रयुक्त संस्करण
डॉ0 उमाकान्त -- आख्याता' —	मैथिली शरण गुप्त, कवि और भारतीय संस्कृति के	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, दि0 सं0 1964 ई0।
डॉ0 कमलकांत त्रिपाठी --	'मैथिली शरण गुप्त व्यक्ति और काव्य' --	रणजित प्रिंटर्स ऐण्ड पब्लिशर्स, चाँदनी चौक, दिल्ली 6, 1960 ई0।
डॉ0 कुमार विमल ---	'सौदर्य शास्त्र के तत्त्व' (प्रथम खण्ड),	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली-6, 1967 ई0
डॉ0 दीनानाथ सिंह --	'छायावादोत्तर प्रबंध-काव्यों का विश्लेषणात्मक-अध्ययन' (अप्रकाशित)	पटना विश्विद्यालय 1972
डॉ0 प्रतिमा कृष्णबल --	'छायावाद का काव्य-शिल्प' --	राधाकृष्ण प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली- 6, 1971 ई0
डॉ0 श्यामनन्दन किशोर --	'आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों का शिल्प-विधान' --	सरस्वती पुस्तक आगरा, 1963 ई0।
डॉ0 शम्भू नाथ सिंह --	'हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप-विकास' --	हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी- 1, द्वितीय संस्करण 1962 ई0।
डॉ0 शकुंतला दूबे --	'काव्यरूपों का मूल स्रोत एवं उनका विकास' --	हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी- 1, प्र0 सं0 1958 ई0।

1- इसमें तिथि उल्लेख नहीं हैं। 2- वही।

3- संस्करण का उल्लेख नहीं है।

डॉ0 सिया राम तिवारी --- ''हिन्दी के मध्यकालीन खण्डकाव्य' -- हिन्दी सहित्य संसार, दिल्ली पटना-4, प्र0 सं0 1964 ई0।

लघु-प्रबंध

डॉ0 नर्बदेश्वर -- 'हिन्दी शोक-गीत : परम्परा और प्रतिफलन' --- अभिनव भारती-42, सम्मेलन मार्ग, इलाहाबाद, प्र0 सं0 1977

प्रो0 मुकुल खंडेलवाल --- 'गुलाब खंडेलवाल: व्यक्तित्व और कृतित्व' -- (अप्रकाशित) (मगध विश्वविद्यालय 1980)

(ग) आलोचनात्मक सहायक ग्रंथ

अखोरी ब्रजनन्दन प्रसाद -- 'काव्यात्मक बिम्ब', ज्ञानलोक पटना-4, 1965 ई0।

कन्हैया लाल पोद्दार -- 'काव्य-कल्पद्रुम' (भाग-1), प्रकाशक, जगन्नाथ प्रसाद शर्मा, चूडीवाले का मकान, मथुरा, पंचम सं0 2004।

गुलाब राय (1) 'काव्य के रूप -- आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली-6, चतुर्थ सं0 1958 ई0

(2) 'सिद्धांत और अध्ययन' , वही, प्र0 सं0 1964 ई0।

आचार्य जगदीश पाण्डेय- (1) 'शील निरूपण : सिद्धांत और विनियोग' -- अर्चना प्रकाशन, द्वि0 सं0 1963 ई0।

(2)'उदात्तः सिद्धांत और शिल्पन' , -- वही, प्र0 सं0 1964 ई0।

डॉ0 जगदीश नारायण त्रिपाठी -- 'आधुनिक हिन्दी कविता में अलंकार-विधान' -- अनुसंधान-प्रकाशन, कानपुर, प्र0 सं0 1962 ई0

डॉ0 दशरथ ओझा -- 'समीक्षाशास्त्र : भारतीय तथा पाश्चात्य' -- राज्यपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली-6 द्विव0 सं0 1957 ई0।

देशराज भाटी-- 'दिनकर और उनकी उर्वशी' -- अशोक प्रकाशन, नई सड़क दिल्ली-6, प्र0 सं0 1963 ई0

डॉ0 देवराज उपाध्याय -- 'मनोवृत्तानुवर्ती आख्यान रचना' -- वसुदेव

प्रकाशन, आरा, प्र0 सं0 1977
आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी -- 'आधुनिक साहित्य' , -- भारती भंडार, लीडर प्रेस इलाहाबाद, प्र0 सं0 2007।
डॉ0 नगेन्द्र -- 'भातीय काव्य-शास्त्र की भूमिका' , -- ओरिएंटल बुक डिपो दिल्ली, द्वितीय भाग, 1955 ई0।
डॉ0 भगीरथ मिश्र -- 'काव्यशास्त्र' -- विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, पृ0 द्वि0 सं0 1966 ई0।
डॉ0 रमाशंकर शुक्ल 'रसाल' -- 'छंदशास्त्र'-- रामायण लाल, बेनीमाधव, प्रयाग, प्र0 सं0 .....।1
आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (1) 'रस-मीमांसा' -- नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, द्वि0 सं0 संवत् 2011
(2) 'जायसी-ग्रंथावली' -- वही, सं0 2028,14 वां संस्करण
(3) 'त्रिवेणी' -- सम्पादक-कृष्णानन्द
राम प्रसाद पाण्डेय --- 'सामान्य मनोविज्ञान' , संशोधित संस्करण, 1977, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
डॉ0 लक्ष्मी नारायण सुधांशु -- 'जीवन के तत्त्व ओर काव्य के सिद्धांत' -- जनवाणी प्रकाशन, कलकत्ता, दि0 सं0 1950 ई0।
विश्वम्भर मानव -- 'नयी कविता : नये कवि' -- लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद-1, तृ0 सं0, 1978
डॉ0 शिवनन्दन प्रसाद -- (1) छन्द शास्त्र --- श्री अजन्ता प्रेस, पटना-4, 1963 ई0
(2) 'साहित्य के रूप और तत्त्व' -- प्र0 सं0 1954 ई0, पुस्तक भंडार, पटना -4
डॉ0 शम्भुशरण -- 'उषा' : मूल्यांकन तथा विश्लेषण' -- नवभारत प्रकाशन, पटना- 4 , 1967 ई0

संस्कृत के सहायक ग्रंथ

आचार्य विश्वनाथ -- 'साहित्य-दर्पण' -- वाराणसी, चौखम्भा, विद्याभवन, सन् 1957 ई0

शब्द-कोश और विश्वकोश

हिन्दी- 'सक्षिप्त हिन्दी-शब्दसागर' - सं0 रामचन्द्र वर्मा, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

हिन्दी ---- 'हिन्दी साहित्य-कोश' ---- सं0 डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा संस्कृत-संस्कृत-हिन्दी कोश- सं0 वामन शिवराम आप्टे, प्रकाशक-मोतीलाल बनारसीदास

अंग्रेजी --- 'इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका', वौल्यूम 12, पब्लिशर-इ0 बी0 लि0, लंदन 1768

उर्दू--- 'उर्दू-हिन्दी शब्दकोश' -- सं0 मुहम्मद मुस्तफा खाँ 'मदाह', उत्तर प्रदेश (हिन्दी-समिति, प्रयाग) राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन हिन्दी भवन, महल्ला, गांधी मार्ग लखनऊ सस्करण।

अंग्रेजी के सहायक ग्रंथ संस्करण।

C.D. Lewis-- The poetic Images--6th Edition, 1951, Jonathencape, London.

Morton prince-- The Unconscious (2nd) Ed.)
Macmillan, New York (1924)

पत्र-पत्रिका

-- 'नवकल्प' लोक साहित्य सगंम, गया, 21 अक्टूबर, 1976

-- 'सारिका' (दोस्तव्यसकी विशेषांक) अंक 299, 16 दिसम्बर (1981)

-- 'राष्ट्रभाषा-सन्देश' -- हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, अंक-5-6, 15-30 सितम्बर 1978